मूल्य : छः रुपये
+
पहला संस्करण 1971;
भारती प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली, में मुद्रित
BHARATPUTRA NAURANGILAL (Satire)
Amritlal Nagar Rs. 6-00

नये वर्ष के पहले दिन बीते बरसो मे लिखी गई अपनी इन विनोदी रचनाओं को पढते हुए मेरे मन मे हास्य के अनेक रंग झलके। मन की मौजें मुस्कुराहटो से खिलखिलाहटों तक उतार-चढ़ाव लेती रही और लगा कि 'हमी मनबसी' मे अपना-परायापन तनिक भी नहीं होता। इन कहानियों का आनन्द मेरे और आपके लिए एक-सा है। जिस 'हसी मे खसी' होती है उसका इन रचनाओ से तनिक भी सबंध नही है। मेरे मन का उल्लास जब किसी बात या घटना से लहरा उठता है तब ऐसी रचनाएं आप से आप उमड पडती हैं।

यह सच है कि इस संग्रह की अधिकाश रचनाएं फरमाइशी उत्पादन हैं, मगर यह भी सच है कि जब तक किसी देखी, सुनी या भोगी हुई घटना, बात या किसी चरित्र के इर्द-गिर्द मेरा उल्लास सहज भाव से नही मडराने लगता तब तक फरमाइशों का सम्मान और लालच भी धरा ही रह जाता है।

यो देखा जाए तो एक मित्र की जोरदार फरमाइश के कारण ही मैं अपने भीतरवाले विनोदी लेखक की खोज कर पाया था। यह बात शायद सन् '३७ के अतिम काल की है। काशी मे प्रसादजी और कलकत्ते मे शरद बाबू के बहुत बीमार होने का समाचार पाकर मैं इन महापुरुषो के दर्शनार्थ दोनों नगरों की यात्रा पर गया था। स्व० पण्डित विनोद शकर व्यास के साथ बाबू साहब (प्रसादजी) को देखने के लिए गया। उसी समय यह लगा कि इस कंकाल मात्र रह जानेवाले महापुरुष के धरती पर अब कुछ ही

लौटते समय मुगलसराय स्टेशन पर 'आज' समाचारपत्र मे
महाप्रयाण की सूचना पढी। काशी मे उतर पडा। तब व्यासज
काशी में मेरा स्थायी डेरा होता था। वे मुझे अनुजवत् स्नेह दे
के कारण प्रसादजी के निकट पहुचा था। हम लोग उस
प्रसादजी की स्मृतियो से ही अभिभूत थे। मेरे एक बनारसी
भैया (व्यासजी) के विशिष्ट गण स्व॰ पुरुषोत्तम देव 'ऋषि
हास्यरस का पाक्षिक पत्र 'खुदा की राह पर' निकाल रहे थे। उ
पहले वेढबजी, रुद्रजी, अशोकजी आदि धुरधरों ने बड़ी स
निकाला था, किन्तु उन दिनों ऋषिजी उसका पूरा दफ्तर
रखकर विज्ञापन बटोरने, गाहक फसाने, कागज, छपाई, वि
प्रबन्ध करते हुए सवेरे से शाम तक काशी की गलियों मे डांय
करते थे। काशी पहुंचने के दूसरे ही दिन उन्होने मुझे घेरा।
स्वर्गवासी हो जाने के कारण वे दो दिन तक कोई काम नहीं
और अब 'विज्ञापन बटोरें कि बैठ के लिखें' वाली स्थिति मे
आपको गम्भीर समझनेवाले मुझ उदीयमान लेखक के लिए
लेखक बनना एक विचित्र मानसिक रस्साकशी की बात थी।
पड़े की हरगंगा के तौर पर अपनी पहली हास्य कहानी लिखने
व्यासजी के घर पर ही बिताई एक रोचक शाम की पुरानी
सहारा लिया। पूज्य प्रसादजी उस दिन रात के भोजन के
त्रित थे। उनके मनोरंजनार्थ भैया ने एक मुशीजी को भी बु
मुशीजी चूकि बाबू साहब को पहचानते थे इसलिए उन्हें करवट
लेटना पडा, वरना मुशीजी अपनी लन्तरानियां हरगिज न सुना
घिर्राऊलाल' इस प्रकार मुझे 'तस्लीम लखनवी' बनाने के य
उक्त रचना मे कहानी-लेखक के रूप मे जिन्हे बाबू गोविन्द वि
कहा गया है, वे असल में विनोदशकरजी व्यास थे। 'भोग

प्रसादजी के नाम का रूपान्तरण है; ऋषिजी उस रेखाचित्र मे मुनिजी बने और 'सागर' जी नाम से खुद यह नागर ही उसमे नुमाया हुआ है। यह पहली 'तस्लीम' छाप रचना रचने से कुछ महीनों पहले 'शकीला की मा' लिखकर मैंने यथार्थ के जिस चक्रव्यूहों-भरे दुर्गम पथ मे प्रवेश किया था, उसपर बेझिझक आगे बढने के लिए हास्यरस ने मुझे दम दिया। जीवन की सजीव शाब्दिक फ़ोटोग्राफ़ी से आरम्भ करके ही मैं यथार्थ को उसकी विभिन्न सतहों पर विविध रूपों मे पहचानने का रास्ता पा सका हू। इस बात को मेरे परम मित्र विद्वद्वर डॉक्टर रामविलासजी शर्मा चूकि अपने एक लेख मे इल्मी ढग से बखान चुके है। इसलिए यहा केवल किस्सा-दर-किस्सा ही सुनाकर चुप हुआ जाता हू। दो बाको के इलाके आपस मे बटे रहने मे ही खैरियत है।

बहरहाल, यह रचनाए आपका उम्दा मनोरजन करेंगी। इस विशाल

अनुक्रम

के समान मोमफलियों का बलात् भोग कर रहे थे और ऊपर से सिद्धान्त-वाद की जै-जैकारें भी बोल रहे थे। जे भला कौन-सा सिद्धान्त है ? वकील साव, मैं एक ऐसे कट्टर सिद्धान्तवादी की कथा सुनाता हूं कि जिसने सिद्धान्त के डंके की चोट पर, अभी पिछली मई में पंडित मोतीलाल नेहरू और टैगोर की जन्म-शताब्दियों के साथ-साथ अपने ससुर की जन्म-शताब्दी भी एक जिले की जनता से मनवा ली थी।"

चौबेजी का ये कहना था कि हम सबके सब आश्चर्य और हंसी के समानावेश में सहसा बंध गए। हम सब हंसने की मुद्रा में मुंह बाये रहे और अचम्भे की चकाचौंध से हमारी आखें चुंधिया गईं। जनम के वत-रसिया चौबेजी ने सब ओर से दृष्टि खींचकर दोनों हाथ और आखें अंगीठी के कोयलों पर साध लीं, और कहना आरम्भ किया, "बाबूगंज, जहां के प्रतापसिंह इण्टर कालिज में मैं प्रिंसिपल हूं, जिले का सर्वश्रेष्ठ कस्बा है। लगभग-सदैं-बीस तो बड़े-बड़े लखपती ब्योपारी आढ़तिये हैं वहां, और फिर छोटे-मोटे धनी लोग भी हैं। तहसील का दफ्तर भी वहीं है जहां कालेज है; मतलब ये कि खासा महत्त्वपूर्ण स्थान है। बड़े चौराहे के पास ही बस स्टेशन है। बड़ी चहल-पहल रहती है वहां। उसी चौराहे पर जयपुर-शैली की एक पत्थर की छतरी बनी है। उसके चारों ओर संगमर्मर की पटियों पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा है—मन्द्र श्री भारतमाता। अंदर, बीचोबीच में पत्थर के एक ऊंचे चौकोर चबूतरे पर संगमर्मर की बनी मझोले साइज़ की भारतमाता, बायें हाथ में तिरंगा ध्वज लिए दाहिने हाथ से आशीर्वाद दे रही हैं और उसी हाथ के नीचे माता के चरणों के पास घुटने मोड़कर हाथ जोड़े बैठे गांधी टोपीधारी एक गोल-मटोल क्लीनशेव्ड सेठनुमा व्यक्ति की मूर्ति भी आपको दिखलाई देगी। नीचे लिखा है—भारतमाता और भारतपुत्र। उसके नीचे एक लम्बी इबारत लिखी है जो मुझे ठीक-ठीक याद न होने पर भी कुछ इस प्रकार है कि 'यह मन्द्र बाबूगंज की जनता की इच्छा से बाबूगंज निवासी सुर्गवासी लाला फेंकूलालजी, सुपुत्र लाला मैकूलालजी के दमाद तथा गजपुरा निवासी लाला छेनामल

जी, सुपुत्र लाला गेनामलजी के आत्मज, भारतपुत्र सेठ नौरंगीलालजी, मालिक फर्म छेनामल फेंकूलाल ने गदर शताब्दी के उपलछ मे निर्माण कराया तथा इसका ऊतघाटन मान्नीय मुख मन्त्री जी के कर्कमलो के द्वारा मिती ३१ मई सन १९५७ ई० को समपन्न भया।' "

"क्यों चौबेजी, ये भारतपुत्र क्या बला है?"

"कहीं ये भारतपुत्र टाइटिल भारत-रत्न वज़न पर तो नहीं आया, चौबेजी?"

शर्मा, खरे दोनो ही उत्सुकतावश ताबड़तोड़ प्रश्न कर बैठे। चौबेजी ने मिठास-भरे स्वर मे कहा, "आप सत्य के निकट पहुँच गए शर्माजी। पर अभी किस्से के क्रम से चलिए, तभी आप ये पहचान और मान सकेंगे कि हमारे मित्र भारतपुत्र नौरंगीलालजी एकदम बेजोड़ सिद्धान्तवादी हैं। ऐसा नमूना न आपको किसी ज़ू मे मिलेगा और न म्यूज़ियम में। बीसवी सदी के साथ ही साथ आपका भी अवतार हुआ था। इस समय साठ-इकसठ के हैं। पक्का सँवरिया रंग है, सिर धड़ पे यों रक्खा है जैसे बड़े पहाड़ी आलू पे छोटा गोलमटोल मटरिया आलू रखा हो। कान बड़े है, नाक पसरी हुई और उसकी फुनगी पे एक काला मोटा मस्सा है। टाँगें उनके भारी-भरकम, गोलमटोल शरीर को देखते हुए अपेक्षाकृत पतली और छोटी हैं; दाढ़ी-मूँछें और खोपड़ी सदा घुटी रहती हैं। आवाज़ पतली जनानी है पर उसमे ज़ोर मर्दाना भरते है। दूर से उनकी चीख-भरी पतली आवाज़ ऐसे सुनाई पड़ती है जैसे कोई हलाल किया जाता सूअर चीख रहा हो। पक्के, बिना सूड के गणेशजी लगते हैं। दूसरी लड़ाई के दिनों मे बड़े चौराहे के पास ही पक्की संगीन हवेली बनवाई और अंग्रेज़ों की नाक पे दीया बाल के राष्ट्रीय झंडे के रंगों से उसे आयल पेंट कराया। नौरंगीलाल की तिरंगी कोठी दूर-दूर तक मशहूर है। चालीस-पचास लाख की हैसियत है। जानकार लोग देख-देखकर कहते हैं कि तक्दीर हो तो ऐसी हो। मगर स्वयम भारतपुत्र अपनी सफलता का सारा श्रेय तक्दीर को न देकर अपने ससुर नम्बर एक श्री फेंकूलाल द्वारा दी गई

सिद्धान्त-नीता को देते हैं।"

"तो क्या आपकी राय का यह मतलब निकाला जाए कि मौरं भाग्यपुरजी के एक से अधिक ससुर हैं?" मैंने पूछा।

"जी हां, भाग्यपुरजी दो घोड़ों की सवारी का सिद्धान्त मानते हैं यही उनके ससुर साहब एक का दिया हुआ मूलमन्त्र है। कहते हैं कि बचपन में ही मौरंगीलाल अनाथ हो गए थे। मामाओं ने उनका स्नेह रखने के लिए उन्हें मास्टीटर घर से निकाल दिया। बड़े-बड़े कष्ट भोगे। फिर सन् इकतीस में आन्दोलन में बाबूगंज आकर कन्ट्रेक्टर बन गए। बड़ा नाम कमाया, जेल गए। बाबूगंज के प्रसिद्ध गुनाहगामुन-विक्रेता फेकू हलवाई इनके बड़े प्रशंसक थे। जब जेल से मौटे तो उन्होंने ही शरण दी और कहा, "मौरंगीलाल, तुम बनिये के बेटे हो। सदा दो घोड़ों की सवारी रखा करो। अगर एक न चला तो दूसरा चल ही निकलेगा। देश का काम करो और हमारे बही-खाते सभालो। अगर चमक गए तो नेता बनोगे, नहीं, हमारे दमाद तो बन ही जाओगे। मैं सरकारी अफसरों से तुम्हारी पटरी बैठा दूंगा और तुम अपने वल्न्टियरों से कह दो कि ताड़ीखाने पे धरना न देवें और जो देवें तो अगवाड़े के फाटक पे। पिछवाड़े से गाहकों को भीतर जाने दिया करें क्योंकि राधे कलार से मेरा साझा है।' मौरंगीलाल मान गए और तब से दो घोड़ों की सवारी वाला सिद्धान्त ही साथ रहे हैं। अंग्रेजी राज में वे अफसरों के मित्र भी रहे और देशभक्तों के भी। फेकू हलवाई की लड़की से भी ब्याह किया और भग्गू पंसारी की बिटिया से भी। कहा कि अगर इससे लड़का न हुआ तो उससे होगा। उन्होंने घी का व्यापार किया और वनास्पती का भी। अगर एक शक्कर मिल से सौदा तैयार किया तो दूसरा देसी खांड बनानेवालों से भी करार कर आए। कांग्रेसी सरकार का साथ भी देते हैं और जनता की मदद भी करते हैं। सदाबर्त बांटते हैं। जिले-भर में जहां-जहां उनका तगादा फैला है, उन्होंने कुएं बनवाए हैं; हमारे कालेज का साइंस-कक्ष बनवाया, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के स्कूल की नई बिल्डिंग बनवाई।

मैं तो सिद्धान्तवादी आदमी हूं। जब मैंने महापुर्ख बनने की ठान ली है तो अवस्स-अवस्स बनूंगा। सरकार यों पदवी न देगी तो जन्ता के जोर से लूंगा आपके हाथ से लूंगा,' ये कहके घर आए और अपने मुसाहबों को बुलाके पूछा कि अब क्या करना चाहिए। बसन्त और पुरुषार्थी जब कोई सुझाव न दे सके तो वे मेरे पास आए। सब हाल सुनाकर बोले, 'चौबेजी, अब तो इज्जत का सवाल है, मुझे महापुर्ख बनना ही पड़ेगा।' मैंने कहा, 'इसमें क्या कठिनाई है ? अगर उन्होंने भारतरत्न नहीं बनाया तो आप भारतपुत्र बन जाइए। रत्न तो खज़ाने में बंद पड़े रहते हैं और पुत्र सदा माता के पास रहता है।' सुनते ही नौरंगीलाल उछल पड़े, कहा कि 'चौबेजी आपसे कभी उरिन नहीं हो सकता।' बस फिर तो ज़ोर बांध दिए नौरंगीलालजी ने! कलकत्ते से डिज़ाइन बनवाया, इटली से संगमर्मर की मूर्ति बनवाई, जयपुर से कारीगर आए, चौराहे पर पत्थर की छतरी बनी। इतने में गदर-शताब्दी समारोह मनाने के दिन आए। आप फिर मुख्यमन्त्री के पास पहुंचे और बोले, 'गदर की याद में मैंने भारत-माता का मन्दिर बनवाया है; उसका उद्घाटन आपको करना ही होगा।' यह काम आसान था, इसलिए मुख्यमन्त्री राज़ी हो गए। लेकिन ज उत्सव के दिन आकर उन्होंने मूर्ति का पर्दा हटाया तो भारतमाता साथ-साथ भारतपुत्र भी दिखाई दिए। बोले, 'नौरंगीलाल, तुमने धोख दिया। अपने पैसे के ज़ोर पर पदवी धारण की और मुझसे उद्घाट कराया, ये ठीक बात नहीं।' नौरंगी बोले, 'महराजजी, मुझे तो महापु बनना था। जब आपने मुझे न बनाया और ये सिच्छा दी कि पैसा जन्त का है तो मैं जन्ता के ज़ोर पर भारतपुत्र बन गया। इसमें धोखे की बात हं कहां उठती है ? ये तो सिद्धान्त की बात है।'"

हंसते-हंसते हमारा हाल बेहाल हो गया। चौबेजी बोले, "यही नहं वकील साहब, पिछले वर्ष सात मई को इसी दो घोड़े के सिद्धान्त प उन्होंने अपने सिद्धान्त-गुरु यानी ससुर नम्बर एक श्री फेंकूलालजी क जन्म-शताब्दी भी धूमधाम से मनवा डाली। हुआ ये कि एक दिन पुराने

कागज़-पत्रों मे अचानक आठ मई, सन् १८६१ ई० का लिखा तत्कालीन अंग्रेज़ कलक्टर फाक्स साहब का एक सार्टिफिकेट उनके हाथ लग गया जो कि फेंकूलाल के पिता मँकूलाल को उनके गुलाबजामुनों की प्रशंसा मे दिया था। फेंकूलाल जी जब जीवित थे तो कहा करते थे कि जिस दिन बप्पा को साहब का सार्टीफिकट मिला था उसी दिन हमारा जनम भया था। तब तक भारतपुत्र के कानों में यह समाचार पड़ चुका था कि आठ मई को मोतीलाल नेहरू और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की जन्म-शताब्दी मनाई जाएगी। भारतपुत्र के मन मे समाई कि यदि और कहीं नही तो कम से कम बाबूगंज में फेंकूलाल-जन्म-शताब्दी अवश्य मनाई जानी चाहिए। कुछ भी हो, आखिर वे भारतपुत्र के ससुर थे; उनके मरने के बाद उन्हीं-का मकान चार हज़ार मे बेचकर ये हैसियत पाई। यह सब सोचकर भारतपुत्र ने अपने दोनों बौद्धिकपरामर्श दाताओं को बुलवाया। 'कोलाहल' के सम्पादक श्री मांगीलाल 'पुरुषार्थी' और अध्यापक तोताराम 'बसन्त' ने भारतपुत्र का प्रस्ताव सुनकर मूड़ी हिलाई, कहा, "असम्भव है।" जब दोनों ही घोड़े अड़ गए तो भारतपुत्र भरमाए। कहा, "अरे, कुछ सिद्धान्त का विचार करो पुरुषार्थीजी ! अगर आठ मई को पैदा होनेवाले दो आदमियों को महापुरुस माना जाता है तो तीसरे को क्यों नहीं माना जाएगा ?"

"बसन्तजी बोले, 'हम तो आपकी खातिर मान लेंगे भारतपुत्रजी, पर जनता को प्रमाण चाहिए। पंडित मोतीलालजी इत्ते बड़े कानूनदां, बड़े-बड़े अंग्रेज उन्हें मानते थे। पेरिस से कपड़े धुलवाते थे। बत्तीस घोड़ो की बग्घी पै सवारी निकली थी उनकी। जवाहरलाल नेहरू ऐसा महापुरुष लड़का भया—'

"'अच्छा जो यही सब बातें मैं अपने कक्का मे साबित कर दिखाऊं, तब तो उन्हें महापुरस मानोगे?' भारतपुत्र बोले।

"'हां, मान लेंगे।' बसन्तजी ने ज़ोरदार सिर हिलाया।

"'तो सुनो। हमारे कक्का और राधे कलार मे साझेदारी को लैके मुकदमेबाजी भई। हाईकोरट तक मामलागया। बनाफरराय ऐडूकेट

और हाकिमअली वकील कहें कि 'फेंकूलाल, तुम्हारा केस कमजोर है, लड़ने के लिए गोइंदा नहीं मिलता।' कक्का बोले, 'किसे गोइंदा चाहिएगा सरकार, मुझे गांधी बाबा हाज़िर नाज़िर हैं।' इसके बाद कक्का हमारे कानून बनाएँ और वकील गये। हाई कोरट में जाके डिग्री कराय ली। बनारसीदास बोले कि 'फेंकूलाल, मान गए तुम्हें। जो पढ़े-लिखे होते तो बड़े भारी ऐडवोकेट बनते।" इस तरह एक तर्क गठीक बैठाकर भारतपुत्र ने विजेता की भाँति अपना मोर्चा साधा, बोले, 'अब रही अंग्रेजी के मानने की बात। सो उन्होंने मोतीलाल जी की वकालत का लोहा माना और फेंकूलालजी की गुलाबजामुनों का भी। उनके बाप अगर यहाँ नहीं पुजे तो इनके बाप कहीं नहीं पुजे। उनके बेटे भारतरतन भए तो इनके दामाद भारतपुत्र भए। अब बोलो, दोनों में बराबर की छूटी कि नहीं। तोताराम, मैं कच्ची गोटी नहीं खेलता। कक्का जरूर महापुरुष थे। पुरुषार्थी-जी, अब आओ और अपने रवीनाथ टागोर से भी हमारे कक्का का मुकाबला कर लेओ।'

"पुरुषार्थीजी व्यावहारिक पुरुष थे। अपने पत्र के संरक्षक से भिड़ने को तैयार न हुए। कहा, 'खैर, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ और फेंकूलालजी में तो स्पष्ट समानता दृष्टिगोचर होती है। दोनों ही रस के व्यापारी। एक की कविता में रस, दूसरे की गुलाबजामुनों में। एक सारी दुनिया के गुरु, दूसरे आपके—'

" 'बस, यही तो गड़बड़ है। एक तरफ पूरी दुनिया, दूसरी तरफ अकेले भारतपुत्र। गुरुदेव का पलड़ा भारी बैठता है।' तोता बसन्त बोले। भारतपुत्र तप गए, बोले, 'पूरे पोंगाबसन्त हो तोताराम! अगर पलड़ा भारी है तो डंडी क्यों नहीं मारते? कम तोलो उन्हें! बहरहाल ये बात अब हर तरह से तै समझो पुरुषार्थीजी कि जैसे गदर-सताब्दी में तुम सबने मुझे महापुरुष बनाया था, वैसे ही जनम-सताब्दी में हमारे पुज्ज कक्का को भी महापुर्स बनाना होयगा। जैसा उन दोनों का कारक्रम बने वैसा कक्का का भी बनाओ। जो खर्च लगेगा हम देंगे।'

"तोताराम बोले, 'सरकार ने आदेश दिया है कि दो महापुरुषों की जन्म-तिथि एक दिन मनाने से धपला होगा, इसलिए एक की छ को और दूसरे की आठ मई को मनाई जाय। दोनों दिन एक-एक कवि-सम्मेलन और मुशायरा हो तथा बच्चों को मिठाई बाटी जाय।'

"भारतपुत्र बोले, 'ठीक है, हमारे सिद्धान्त से ये आदेस मेल खाता है। बरब्बर दो घोड़ों की सवारी है—छै को इनकी, आठ को उनकी, और बीच में सात खाली है सो हमारे कक्का की। उनका मुसहरा, इनका क्वीसमेलन और हमारे कक्का के दिन नौटकी होएगी। उस दिन हजारों की भीड़ आवेगी। तुम्हारे मुसहरे कवी समेलन की नाक कट जायगी। बच्चों को गुलावजामुन खिलाऊंगा और नौटकी देखनेवालों को सरबत और बीड़िया खिलाऊंगा। फिर तो पबलिक हमारे कक्का की ही जैजैकार बोलेगी।' और जनाब, भारतपुत्र ने यही कर भी दिखाया। जिले में फेंकूलाल जन्म-शताब्दी समारोह की सबसे अधिक धूम रही। अब बोलिए शर्माजी, भारतपुत्र का सिद्धान्तवाद सच्चा कि आप लोगों का ? "

लंगूर का बच्चा

घी-तेल में मिलावट की जांच करनेवाले इन्स्पेक्टर मिस्टर सतगुर-सरन कहीं से एक पर्शियन बिल्ली पालने के वास्ते ले आए। हमारी गली में घण्टे-भर बाद ही घर-घर में धूम मच गई। बच्चे मिस्टर सरन के घर गोल बांधकर पहुंचने लगे, *औरतें भी अपनी उत्सुकता दबाने में बच्चों* से पीछे न रहीं। बिल्लियां तो खैर सभीने देखी थीं, मगर ये फारस की बिल्ली थी। कैसी है, कितनी बड़ी है, क्या खाती है, क्या विशेषता है आदि बहुत-से सवाल लोग-लुगाइयों को उकसा रहे थे। मिसेज सरन के मिजाज रॉकेट पर उड़ रहे थे, उनके बच्चे *गली-भर के बच्चों की भीड़ को पुलिस-*मैनों की तरह कण्ट्रोल कर रहे थे और स्वयं मिस्टर सरन बैठक आरामकुर्सी पर लेटकर सिगार दबाए हुए पड़ोसी वकील साहब के नौकर नुमा साले को बतला रहे थे, "बड़ी मुश्किल से हाथ लगी है गौरो बाबू आप ये समझिए कि इसकी मां शाहे ईरान के प्राइवेट सेक्रेटरी के यहां है एक अंग्रेज सौदागर की मेम ने इसको मुझे प्रेजेण्ट किया है।"

गौरो बाबू पर बातों का रौब पड़ा, वे बोले, "तब तो ये कहिए कि राजघराने की बिल्ली है। अच्छा, इन्स्पेक्टर साहब, ये देसी चूहे खानी या विलायती?"

इन्स्पेक्टर सरन ने यह सवाल सुना तो अपनी टांगें आरामकुर्सी पर

चलती बिरियां चिता दिया था कि दिन में चार बार कंघी करना और यूरीकलोम सेट को पानी में घोल के इसे नहलाना, काटन की तौलिया से देही पोंछना; रेशम की तौलिया दी है, कहा है, बड़ा खयाल रखना, डेढ़ हजार का माल पिरजेंट कर रही हूं आपकी ईमानदारी पर।"

इसके बाद औरतों और बच्चों में वकील साहब के अल्सेशियनों और इन्स्पेक्टर साहब की पर्शियन बिल्ली के गुण, सुन्दरता, उपयोगिता आदि नित नई उपजनेवाली बातों को लेकर एक बतंगड़ ही बनता चला। अल्सेशियन तो खैर अल्सेशियन ही थे मगर इन्स्पेक्टर साहब की बिल्ली भी कुछ कम सुन्दरी न थी। कुत्ते-बिल्ली की चर्चा से ऊबकर एक दिन छापेखाने के मालिक कैलासो बाबू एक हिरन का बच्चा खरीद लाए, कुछ दिनों उसकी बातें गर्माती रहीं। बड़ी हवेलीवाली सेठानी ने जानवर पालने के शौक को धार्मिक और उपयोगितावादी बनाकर एक गाय होने पर भी बीस सेर दूध देनेवाली एक अमरीकन गाय मिलिट्री डेरीवालों से और खरीदी; दूध दुहने और क्रीम निकालने की मशीनें भी आईं। गौ माता के आगे कुत्ते, बिल्ली, हिरन, सब हिरन हो गए। छोटी हवेली की सेठानी जरा रंगीन तबीयत की हैं। वकील साहब से भी उनका बहुत कुछ रिश्ता सुना जाता है, उन्होंने लगभग बीस-पच्चीस तरह की रंगारंग सुन्दर और सुरीली चिड़ियों के पिंजरे मंगवाए और वकील साहब के अल्सेशियन जोड़ी की लाग-डाट में सफेद मोरों का जोड़ा भी मंगवाया और इन सबकी देखभाल के लिए एक नौकरानी रखी। इसके बाद तो महलवाली गली में कोई घर ऐसा न बचा जहां औरतों, बच्चों या मर्द ने एकाध जानवर खरीद या पकड़कर न पाला हो। बचे एक प्रोफेसर श्यामकिशोर और दूसरा मैं। हमारी गली में कुल जमा नौ-दस घर हैं, एक इन्स्पेक्टर साहब को छोड़कर बाकी सब अपने छोटे-बड़े पुश्तैनी घरों के मालिक हैं। इन सुखी-सम्पन्न पड़ोसियों के बीच में मेरी ही मासिक आय सबसे कम है। एक स्थानीय दैनिक अखबार का लोकल रिपोर्टर हूं, तीन

सौ रुपये पाता हूं। मुहल्ले मे होनेवाली हैसियत का रस म मरा घरवाला धार,
और बच्चे ही सबसे फिसड्डी साबित होते है। कालीन, रेडियोग्राम,
मोटर जैसी कीमती वस्तुएं खरीदने मे तो हम लोग खैर किसीसे होड ले
ही नहीं सकते थे, मगर जब से जानवरों की पलाई शुरू हुई और प्रोफेसर
साहब तक ने एक भैंस खरीद ली तो मेरी घरवाली ने उठते-बैठते मुझे
ताने देने शुरू किए कि तुम छोटा-सा जानवर तक नहीं ला सकते, फिर
आखिर किस मर्ज की दवा हो।

एक दिन दफ्तर से लौटते हुए रास्ते मे मुझे एक बहेलिया मिल गया।
मैंने उससे सस्ते दामों मे एक तोता पिंजरे सहित ले लिया। घरवाले उसे
देखकर प्रसन्न न हुए क्योंकि तोते तो घर-घर थे। फिर नहले पर दहले-सा
यह ऐब निकल आया कि हमारा तोता कुछ पढ न सका, खाली टें-टें ही
करता रहा। बडबोली इन्स्पेक्टराइन ने सब जगह उसका मजाक उडाया,
कहा कि 'रिपोर्टर साहब जनम-करम मे एक तोता लाए और वो भी सिर्फ
टें-टें बोलनेवाला ही। मेरी बिल्ली तो ऐसे तोते का कभी नाश्ता करना
भी पसन्द न करेगी।' यह बात मेरी पत्नी को ऐसी चुभी कि घर आकर
तोते को पिंजरे से उडा दिया। बच्चो के मुख भी फूल गए। अन्त मे हम
भी ऊब गए और एक दिन चिडिया-बाजार जाकर एक सिरे से दूसरे सिरे
तक चरिन्दों-परिन्दों पर नजर डालकर हमने एक लंगूर का बच्चा खरीद
लिया।

साइकिल की बास्केट मे लंगूर-बच्चे को बिठलाकर जब मैं घर आ
रहा था उस समय इन्स्पेक्टर-इन्स्पेक्टराइन अपने तीनों बच्चों को साथ
लेकर सजे-धजे कहीं जा रहे थे। आठ-दस बरस पहले जब ये यहा रहने के
लिए आए थे तब पति-पत्नी मरी हुतिया-से लगते थे, अकाल के कौवो जैसे,
और अब रिश्वत भगवान की महिमा से साढे तीन-तीन मने कोलतार के
जैसे फूल गए हैं, जब अपने मुने-अधमने और दस सेरे बच्चों के साथ
ठुमुक लुढ़कनिया चाल से चलते है-तो राह चलते रसियों को उन्हें
र मजा आ जाता है। उन्हें देखकर मैंने कहा, "देखिए, इन्स्पेक्टर

साहब, कैसा प्यारा बच्चा है. हर हाइनेस भावनगर ने अपने प्राइवेट जंगल से इसे पकड़वाया है। जब बड़ा होगा तो पूरे पांच फुट साढ़े सात इंच का कद होगा इसका।"

"पांच फुट साढ़े सात इंच ? आप मजाक कर रहे हैं रिपोर्टर साहेब !" इन्स्पेक्टरसाहब ने अविश्वास करते हुए कहा। मैं बोला, "मि० मदन से पूछ लीजिए। पढ़े-लिखे आदमी हैं, जानते ही होंगे कि भावनगर के लंगूर सारी दुनिया में प्रसिद्ध हैं। अमरीकावालों ने रॉकेट में उड़ाने के लिए इसके बाप को दस हजार रुपयों में खरीदा है। आपने तो उसकी फोटो भी अखबारों में छपी देखी होगी इन्स्पेक्टर साहब ?"

"जी हां ! जी हां !" बेचारे इन्स्पेक्टर और कह ही क्या सकते थे।

घर आकर बच्चों के सामने मैंने अपने लंगूर की खो-खो तारीफें कीं कि स्कॉटलैण्ड के अल्सेशियन, फारस की बिल्ली और अमरीकी गाय से लेकर देसी भैंस और हिरन तक, सबके भाव बिगड़ गए। बच्चे बड़े खुश थे और लंगूर का बच्चा भी उन्हें पाकर बड़ा खुश था। धीरे-धीरे लंगूर का बच्चा सचमुच ही मुहल्ले-भर के बच्चों का सबसे बड़ा आकर्षण-केन्द्र बन गया। मैं बड़ा प्रसन्न हुआ, जब कभी फुरसत मिलती, उस लंगूर के बच्चे को सरकस के खेल सिखलाता था। बच्चों को इससे और भी उम्दा शगल मिल गया था, दिन-भर उसके साथ नये-नये स्टण्ट खेला करते थे। लंगूर का बच्चा सबका लाड़ला और बड़ा घण्ट हो गया। कुछ लड़कों ने छत्ते के बाहवाली दो दीवालों की सकरी जगह पर मेरे लंगूर को एक अनोखा सरकस करना सिखा दिया। लड़कों में से कोई राहगीर बनकर दोनों दीवारों के बीच की राह पार करता और दूसरे लड़के के संकेत पर लंगूर एक दीवाल से उछलकर टप्प से लड़के की खोपड़ी पर कूदता और वहां से छलांग मारकर दूसरी दीवाल पर। धीरे-धीरे वह लंगूर बच्चा इस करतब में ऐसा माहिर हो गया कि राह चलतों की खोपड़ी पर बिजली-सा कूदता और बिजली-सा ही दूसरी दीवाल पर छलांग मार जाता था। लड़कों को बड़ा अच्छा खेल मिल गया। गाय, बैल, गधों पर लंगूरे को कुदाकर उनकी

घबराहट के तमाशे खूब देखे जाते। एक दिन एक फकीर बडी भभूत-बभूत रमा के आया और लड़कों के छेड़ने पर उन्हें भस्म करने की धमकियां देने लगा। लड़कों ने लगूरे को उसपर हुश्काकर छोड़ दिया। उस दिन गली में दोनों नाके घेर-घेरकर लंगूर बच्चे ने बाबा को ऐसा नाच नचाया कि केवल बच्चों ही को नहीं, राह चलते बड़े-बूढ़ों को भी मजा आ गया। हमारा लगूरा उसी दिन से मुहल्लारत्न मान लिया गया; उसके आगे बाकी सारे जानवर मुहल्लाभूषण और मुहल्लाश्री मात्र ही रह गए। लोगों को अब यह विश्वास होने लगा कि बालिग होने पर हमारा लगूरा अवश्य पाच फुट माड़े सात इंच का कद पाएगा और यह बात भी जम गई कि जिसका बेटा इतना करतबी है वह लगूर पिता अवश्य ही अमरीकी रॉकेट पर बैठा सूर्य-लोक से रेडियो सिगनल भेजता होगा।

एक दिन लड़कों ने लगूर बच्चे से एक नया खिलवाड़ शुरू कराया। लंगूरा टप से तरकारीवाले के झौवे में कूद पड़ता और कद्दू, लौकी बगल में दबाकर भाग जाता। इसके बाद तो उसका हियाव ही खुल गया। एक दिन एक बिसाती की दो गुड़ियों पर आशिक हो गया और उन्हें ले भागा। इस तरह होते-करते वो ऐसा जाबिर साबित हुआ कि डर के मारे खोंचे, तरकारीवालों ने उस गली में आना ही छोड़ दिया। मुहल्लेवालों के लिए यह नई परेशानी शुरू हुई। शिकायतें चली। एक दिन छोटी सेठानी की हवेली में हरि-सकीर्तन करते-करते इन्स्पेक्टराइन ने जो मेरी पत्नी को आते देखा तो राम-नाम छोड़कर लंगूर-चर्चा आरम्भ कर दी, बोलीं, "रिपोर्टर साहब को और कोई जानवर नहीं मिला था तो गधा ही पाल लेते। ये लंगूर क्यों पाला, जो निगोड़ा सबकी जान की सांसत बन गया है।"

गधा पालने की बात पर औरतें हस पड़ीं। मेरी घरवाली को बुरा लग गया। फिर भी वो गर्माई नहीं, ठण्डे-ठण्डे हंसकर उन्होंने बस इतना ही कह दिया, "अरे बहनजी, मुहल्ले में एक ही गधा काफी है, आपने पाल तो रखा है।"

इसपर ऐसी हंसी हुई कि इन्स्पेक्टराइन ताव खाकर वहां से चली

आई। मेरी श्रीमतीजी की यह बात घर-घर में फैल गई। लोग-बाग उ
दिन से इन्स्पेक्टर साहब को अपनी बातों के सिलसिले में 'जोरू का गध
कहने लगे। किसी लड़के को चुहल सूझी तो वह इन्स्पेक्टर साहब के साइन
बोर्ड पर खड़िया से यह लिख भी आया। इन्स्पेक्टर साहब ने पढ़ा तो ब
उछले-कूदे। इन्स्पेक्टराइन ने सुना तो हमारी घरवाली का नाम ले-लेक
हमें उनका गधा साबित करने लगीं। मगर बात कुछ बनी नहीं, उल
बिगड़ ही गई। उस दिन से हर शाम जब इन्स्पेक्टर साहब घर लौटक
आते तो अपने साइनबोर्ड पर इस उपाधि को लिखा हुआ पाते थे। आखिर
बेचारे कब तक ये संकट झेलते, ताव में आकर एक दिन उन्होंने अपना
साइनबोर्ड भी उतार डाला।

मुहल्ले में जब खासी चों-चों शुरू हुई तो मैंने अपनी पत्नी व बच्चों
को यह आदेश दिया कि लंगूरे को बांधकर रखा जाए और उसे घर से
ज़रा भी न निकलने दिया जाए। पन्द्रह-बीस रोज तक शान्ति रही।
लड़कों को बड़ी उलझन महसूस होती थी और लंगूर के बच्चे को भी।
संयोग की बात, एक दिन मेरी पत्नी किसी काम से बाजार गई थीं, वकील
साहब का लड़का मेरे यहां ही खेल रहा था, उसके आग्रह पर मेरे लड़के ने
लंगूरे का जंजीर-पट्टा खोल दिया। कई दिन के बाद उसे आज़ादी मिली।
वकील साहब के लड़के ने उसे मूंगफली दिखाई और फुसलाता हुआ घर के
बाहर ले गया। कई दिन के बाद गली के लड़कों को अपना साथी मिला
तो हुड़दंग मच गया। लंगूरे को भी मजा आ गया। शामत की मार कि
इन्स्पेक्टर साहब अपने दो चालानिए शिकार, यानी मिलावट का घी इस्ते-
माल करनेवाले हलवाइयों को रिश्वत की रकम पटाने के वास्ते साथ लिए
हुए घर आ रहे थे। इन्स्पेक्टर साहब ने नया सोला हैट खरीदा था। टोप
लगाए पतलून की जेब में शान से एक हाथ डाले हलवाइयों को डांटते हुए
अपनी ठुमुक-ठुमुक मुटकनिया चाल से वे जैसे ही छज्जे के पासवाली दीवार
से गुज़रे, वैसे ही मेरा लंगूरा टप से उनके टोप पर कूदा और फिर छलांग

मारकर दूसरी दीवार पर चढ़ गया। इन्स्पेक्टर साहब हड़बड़ा गए और उनका हैट नावदान में जा गिरा। लड़के हंस पड़े। दो-एक राह चलतों ने देखा तो उन्हें भी हंसी आ गई और हलवाई भी बेसाख्ता हंस पड़े। इन्स्पेक्टर साहब मारे गुस्से के लाल-पीले हो गए। गरज-गरजकर हिन्दी-अंग्रेज़ी की खिचड़ी में गालियां देने लगे। गली-भर में सबके घर जा-जाके उन्होंने मेरी और मेरे लंगूर की शिकायतें कीं। दूसरे दिन सवेरे इन्स्पेक्टर साहब मेरे यहां भी आ धमके और त्यौरियां चढ़ाकर कहा, "क्यों साहब, आप शरीफ हैं?"

मैंने कहा, "आपके साथ रहता हूं, चाहे जो समझ लीजिए।"

इन्स्पेक्टर बोले, "ये क्या हिमाकत है आपकी कि लंगूर पाला है जनाब ने?"

मैंने कहा, "आपकी पर्शियन बिल्ली से अधिक सुन्दर है।"

वे बोले, "उसकी सुन्दरता को आप ही सराहिए। बहरहाल मैं आपको ये वार्निंग दे रहा हूं कि 'विदिन ट्वण्टी फोर आवर्स' आप अपने इस लंगूर को यहां से हटा दीजिए, वरना···" क्रोध के मारे इन्स्पेक्टर साहब को 'वरना' के आगे यह न सूझ पड़ा कि वे क्या करेंगे इसलिए मैंने ही ठण्डे-ठण्डे पूछा, "वरना आप क्या करेंगे इन्स्पेक्टर साहब?"

"आप मुझे चुनौती देते हैं? आप समझते हैं कि आप अखबार के रिपोर्टर हैं, मिनिस्टर और अफसर आपके जान-पहचानवाले हैं। मगर मैं भी आपको वार्निंग देता हूं, मैं दिखा दूंगा कि मैं क्या कर सकता हूं।"

मुझे उनकी चटक में मज़ा आ रहा था। इसलिए इत्मीनान से सिगरेट फूंकते हुए मैंने कहा, 'इन्स्पेक्टर साहब, मैंने माना कि इस गली में औरों के अलावा आप ही सबसे कम पढ़े हैं, फिर भी इतना तो समझते ही होंगे कि मेरा लंगूर मिलाइट का घी नहीं, जो आप उसका चालान कर सकें।"

"मैं-मैं-मैं उस साले को शूट कर दूंगा।"

"यह नई बात मालूम हुई कि वो आपका साला भी है। खैर, शूट कर दीजिएगा। हमारे धरम में बन्दर हनुमानजी का अवतार होता है, ज़रा

इसका ध्यान रखिएगा। और इन्स्पेक्टर साहब, सुना है, हर मगल को उनके दर्शन करने जाती है।" मेरा उत्तर सुनकर इन्स्पेक्टर साहब भुनभुनाते हुए चले गए। मैंने भी परवानों को यह चेतावनी फिर नये सिरे से दे दी कि लगूरे को बांधकर रखा जाए। मेरी पत्नी बहुत ध्यान रखती, फिर भी लड़के किसी न किसी समय उसे खोलकर ले ही जाते थे। वह लड़कों की टोली में ऐसे रहता था मानो उन्हीं में से एक हो। अक्सर जंजीर पट्टे के भय से वह रात को भी गायब रहने लगा। मैंने आवारा मानकर उसकी चिन्ता ही मन से उतार दी।

एक दिन चांदनी रात में उसने गजब कर दिया। वकील साहब रात के दस-ग्यारह बजे सन्नाटे में अपनी प्रेयसी, छोटी सेठानी के यहां जा रहे थे। उनके हाथ में चमेली के फूलों का हार था जिसे झुलाते हुए वे खण्डहर दो-दिवरिया के गलियारे से गुजर रहे थे। शायद सफेद फूलों की चमक ने ही दीवार पर बैठे हुए मेरे लंगूर को आकर्षित किया होगा, वह टप से वकील साहब के कंधे पर टपका और उनके हाथ से माला तोड़कर ले भागा। उस दिन से उसकी यह नई लीला शुरू हुई। वकील साहब बिगड़े, अपने नौकरनुमा साले से उन्होंने मेरे पास धमकी-भरा सन्देसा भिजवाया। गौरी बाबू बोले, "रिपोर्टर साहब, इसे बोरे में बन्द करके नदी के पार छोड़ आइए। आप तो जानते ही हैं, बड़े-बड़े शातिर चोर-डाकू भी जीजाजी के मुवक्किल है, किसी दिन अगर आपका घर लुटवा दिया तो मुर्गी के लिए तकुवे का घाव ही बहुत हो जायगा।"

मेरी पत्नी ने सुना तो घबराई, बोली, "चोरों के वकील से रार मत मोल लो।" मैं राज़ी हो गया और कर भी क्या सकता था, हालांकि लगूरा मुझे अब बच्चों के समान ही प्यारा लगता था। खैर, एक दिन मैंने लगूर को गहरी भंग पिलाकर नदी की बेहोशी में उसे बोरे में बन्द किया और साइकिल पर लादकर नदी के पार पेड़ के नीचे सुलाकर लौट पड़ा। मुश्किल से पचास कदम ही आगे बढ़ा था कि सड़क के किनारे-किनारे लगूर राम दौड़ते नजर आए। मैं उसे मारने की धमकियां देकर भगाता

और वह घर लौट-लौटकर आता। अन्त मे मैं हार गया और मेरे पीछे-पीछे ही गली मे लौट आया। मैंने घोषित कर दिया कि लगूरा बिना बालिग हुए ही आवारा हो गया है, अब इससे मेरा कोई सम्बन्ध नही रहा।

लगूर का बच्चा अब भी गली में ही रहता है। हर घर के बच्चे को उसके साथ न खेलने, न बोलने के आदेश हैं। अब और किसीको तो नही छेड़ता मगर इन्स्पेक्टर साहब जब हैट पहनकर चलते हैं तब उनके सिर पर अवश्य कूदता है। इसी तरह वकील साहब जब सीधी गली आते-जाते है तब कुछ नहीं बोलता लेकिन रात के सन्नाटे मे वे जब अपने प्रेम-पथ की ओर बढ़ते हैं तब उनका रास्ता अवश्य रोकता है। एक दिन गौरी बाबू मेरे पास आए और कहने लगे, "रिपोर्टर साहब, जानवर आपने ही सबसे उम्दा पाला है। बड़ा न्यायकारी है, मेरी जीजी को इसीकी बदौलत फिर से जीजाजी मिले हैं। मेरी राय मे जब ये बालिग हो जाय तो आप इसे पुलिसमैन या सी-इन्स्पेक्टर जरूर बनवा दीजिएगा, कम से कम झूठे चालान तो नही करेगा।"

भला, बतलाइए, मैं बात का क्या उत्तर दे सकता हू।

कयामत का दिन

ऐन आधी रात के वक्त कादिर मिया को मालूम हुआ कि खुदावन्द करीम ख्वाब में कह रहे हैं—'अमा कादिर, तुम दुनिया के भोले-भाले बाशिन्दों को मेरा यह इलहाम सुना दो कि कल जुमेरात के दिन शाम की नमाज़ के बाद मैं आऊंगा, और उसी वक्त तमाम लोगों से मिलकर कयामत का दिन मुकर्रर करूंगा।' देखते ही देखते मालूम हुआ कि अल्लाह मिया की बड़ी लम्बी सफेद दाढ़ी ख्वाब को बटोरकर ले गई। मिया कादिर की आंख जो पट से खुली तो देखते क्या हैं कि आसमान से एक बड़ा चमकदार तारा टूट रहा था। मिया कादिर ने चारपाई पर लेटे-लेटे ही कलमा पढ़ा।

पिछली शाम घर में दुपट्टा रंगने के लिए पीला रंग मंगाया गया था। ख्याल आते ही मिया कादिर ने झट से उठकर उसे घोला और अपना कुर्ता और लुंगी रंग डाली। बाकी रात खुदा की इबादत में बिताई, और सबेरे तड़के ही मिया कादिर पीला कुर्ता और लुंगी पहनकर घर से निकल पड़े।

फाटक नाके के मोड़ पर मिया हादी एक हाथ में चिलम लिए बड़बड़ाते हुए आते दिखाई पड़े। वह नानबाई को बात-बात पे 'कमीना-साला' कहते हुए चले आ रहे थे। वजह सिर्फ इतनी ही थी कि मिया

नानवाई की दुकान पर जब आप तशरीफ ले गए तो उस वक्त वह भट्टी मे दियासलाई दिखा रहा था। उन्होंने चिलम बढ़ाकर आग मांगी। उसने उनकी 'लिविंडेशन' में आई हुई आंख की शान मे चन्द चुने हुए अल्फाज़ कह दिए। इस वक्त जो मियां नानवाई के लिए अपने प्रेम की उमड़ती हुई दरिया मे नालायक, कमीना, उल्लू का पट्ठा वगैरा नामों के बड़े-बड़े जहाज़ तैरा रहे थे, यह सब मियां नानवाई की ही बातो के तुफैल से था। मगर जो सामने से मियां कादिर को इस भेस मे आते हुए देखा तो बस एकदम बुत बने खड़े रह गए।

'अमा कादिर? अमा है! अमा किधर चले?" हादी मियां कादिर को सिर से पैर तक तीन बार देख गए।

"लाहौलविलाकूवत!" मियां कादिर ने निहायत नफरत के साथ ज़मीन पर थूककर कहा, "अबे तुझे इसी वक्त टोकना था कम्बख्त?"

"वल्ला, ये मज़ा देखिए। अमा तुम तो बिना बात के बिगड़े जाते हो। भई बात क्या है? अमा इस नाराज़ी······"

कहां तो मियां कादिर अल्लामियां का फरमान सुनाने जा रहे थे, और कहां कम्बख्त काना मिल गया और वह भी अलस्सुबह, घर से निकलते ही। झुंझलाकर कहा, "ले बस, अब रास्ता छोड़, मनहूस कहीं का। सुबू ही सुबू टोक दिया लेके।"

बस, अब हद हो चुकी थी। मियां हादी की शान में ऐसे-ऐसे बेहूदा अल्फाज़ कह दिए जाएं और मियां हादी ज़हर के कड़वे घूंट की तरह उसे चुपचाप पी जाए, यह ज़रा नामुमकिन-सी बात है। मगर उस वक्त यह 'नामुमकिन' भी मियां कादिर के फकीराना भेस को देखकर अगर 'मुमकिन' हो गया तो कोई ताज्जुब की बात न थी। आप बराबर यह जानने के लिए इसरार करते ही रहे कि आखिर मियां घर-बार छोड़कर इस तरह जा कहां रहे हैं।

इधर मियां कादिर का यह हाल था कि वह उन्हें एक चांटा रसीद करने जा ही रहे थे कि भाई बकरीदी आते हुए दिखाई पड़े। उन्होंने

मियां कादिर को जो इस भेस में देखा तो बस देखते ही रह गए, और इसके बाद मियां हादी को इस तरह रास्ता रोककर खड़े देखा तो मामला कुछ-कुछ समझ में आया। चट से कह उठे, "'अमां होगा भी। अब ये तो हुआ ही करता है। भई, जिस घर मे दो बर्तन होते हैं, बजते ही हैं। मगर इसमें इतना नाराज़ होने की क्या बात है? अमां, ये तो घर-घर मे लगा ही रहता है। खैर, होगा भी। चलो, हम चलके समझाए देते हैं। आइन्दा भौजी तुम्हे इस तरह···"

वकरीदी मियां कादिर को घर की तरफ ढकेलने लगे। मियां कादिर को और भी ताव आ गया। बोले, "कह दिया कि रस्ता छोड़ दो। मगर तुम लोग मानते ही नहीं। खामखा की ताव दिलाए चले जा रहे हो। बेफजूल की बकवास लगा रक्खी है। यहा हमें पारवाले साईंजी के तकिये तक जाना है।"

"न भाईजान! अमां हटाओ इस झगड़े को। घर-घर में यही होता है। अब कल ही था, मुझसे और तुम्हारी भौजी···"

"देखा, फिर वही? अमां वह बात नहीं, हज़ार बार कह दिया, लाख बार समझा दिया कि अल्लाह-ताला···"

बुन, अच्छन, जुम्मन—इतनी देर मे सभी जमा हो गए। अब भाई वकरीदी समझा रहे थे, "अमा, तो अल्लाह की इबादत करने से तुम्हें कौन रोकता है, भाईजान? घर पर बैठकर क्या ये सब नहीं कर सकते? अब आप ही इन्हें समझाइए, मियां अच्छन साहब। देखिए, भला कोई बात भी तो हो। घर मे कोई बात हो गई होगी।"

'देखिए-देखिए ज़री सभलकर ज़ुबान से बात निकालिएगा, मियां वकरीदी। कह दिया कि कुछ भी···"

"तो आखिर बात क्या है। अब ये जो तुम घर-बार छोड़कर फकीरी ले रहे हो, इसका कोई सबब भी तो होना चाहिए, भाई मेरे।" मियां अच्छन साहब ने कादिर की पीठ पर बड़ी गर्मजोशी के साथ हाथ फेरते हुए कहा।

मिया कादिर सचमुच निहायत परेशान हो चुके थे। अच्छन साहब से बड़ी नम्रता के साथ कहा, "वही तो मैं भी अरज करने जा रहा हूं, बड़े मियां। मैंने कहा कि···"

मिया कादिर की बात शुरू भी न होने पाई थी, कि मिया बुद्धन बोल उठे, "अब तुम बताओगे क्या? वह तो सुनी-सुनाई बात है। आखिर इतने आदमी यहां खड़े हैं, कसम खा के भला कोई यह तो कह दे कि हमारे घर में आज तक कभी भी लड़ाई नहीं हुई। अरे भाई, यह तो हुआ ही करता है। अब आप समझिए कि···"

आखों में आसू छलछला आए। मारे ताव के चेहरा सुर्ख हो गया। एक बार पूरे जोश के साथ अपने को छुड़ाकर मिया कादिर ने बुद्धन की ओर बढ़ते हुए कहा, "अपनी औकात समझ के मुंह से बात निकालनी चाहिए, समझे बुद्धन? मारे जूतों के खोपड़ी गंजी कर दी होगी। बेईमान कहीं का, बड़ा मुकरात की दुम बना है। चला वहां से बतानेवाला।"

मिया बुद्धन को भी ताव आ गया। मारे तैश के आगे बढ़कर बोले, "ऐसी मुरव्वत की ऐसी-तैसी। अमां तुम्हीं देख लो भाई बकरीदी, एक तो मैं समझा रहा हूं और यह हैं कि ···। इस हेकड़ी में न रहिएगा मिया, समझे? वाह, अच्छा-खासा स्वांग बना रखा है! जरा-सा घर में झगड़ा क्या हो गया कि चले साहब फकीराना भेस धरकर तमाशा दिखाने। अमां ऐसी-ऐसी सल्तनतिया···।"

ताव में आकर मियां कादिर ने लपककर बुद्धन की गर्दन में हाथ डाला और खोपड़ी पर एक कड़ाकेदार चपत मार उसे ढकेलते हुए कहा, "बड़ा आया है यहां से जज साहब का बच्चा बनकर, मियां-बीवी का फैसला चुकाने। बस दिया फेंकजूल की बातें मत करो। मगर नहीं, खामख्वां अपनी हेकड़ी दिखाते जाएंगे। बेईमान कहीं का।"

जब तक लोग आगे बढ़कर इन दोनों का बीच-बचाव करें तब तक मियां बुद्धन के दो-तीन हाथ करारे-करारे पड़ ही गए। वल्लाह, उस वक्त मियां बुद्धन के वह जोश, वह धमकें और वह तेहबाजी देखने ही

बनती थी। जी मे तो बहुत आया कि मचककर मियां कादिर से बदला लें, कई बार गालियां देते हुए तेजी में आ, लाल-पीली आंखों के साथ आगे बढ़े भी, मगर मियां कादिर के कंडे को देखकर जरा सहम जाते थे। दूसरे बीच-बचाव करनेवाले भी बहुत-से थे। अब लोगों में चेमेगोइयां यह होने लगी कि इस वक्त कादिर मियां जोश में हैं, अगर फकीर होकर चल दिए तो बाद बाहरवाले आकर यही थूकेंगे कि मुहल्लेवालों ने रोका तक नहीं।

भाई बकरीदी ने मियां अच्छन साहब से कहा, "देखिए बड़े मियां, बड़ा गजब हो जाएगा जो कादिर चल दिया। कसम खुदा की, वल्ला मैं सच कहता हूं बड़े मियां, कि पूरे मुहल्ले-भर के मुह पर अपने हिसाब जैसे कालिख पुत जायगी। और फिर भाई, सच तो यह है कि आज इसके ऊपर, तो कल खुदा न करे हमारे ही ऊपर बीते। और यह तो सबके घर मे लगा ही रहता है। मर्द आदमी, किसी बात पर ताव आ गया, घर छोड़-कर चले जा रहे हैं साहब।"

बहरहाल बड़े मियां, जुम्मन और बकरीदी ने मिलकर यह तय किया कि कादिर को, चाहे कुछ भी हो, घर लौटाकर ले जाया जाएगा। बस फिर क्या था, एक हाथ जुम्मन ने पकडा, एक हाथ बकरीदी ने, कोई पीछे घेर रहा है, कोई बगल से रोक-थाम कर रहा है, और कादिर मियां हैं कि तमाम उछल-कूद मचा रहे हैं; इस ले-दे के बीच मे इनकी सुनता ही कौन है। किसी तरह उन्हें लोग घर की तरफ ले ही चले।

इधर यह हाल कि पास-पडोस की तो क्या कहिए, आस-पास के तीन-चार मुहल्लों तक की औरतें मियां कादिर के घर पर जमा हो गई थीं।

सबसे पहले फातिमा को ही इस बात की खबर मिली थी, जब कि मियां कादिर हादी से उलझ रहे थे। बीबी फातिमा ने झप-से अपना दुपट्टा संभालते हुए ऊपर छत से अपनी पड़ोसिन खैरातिन को पुकारकर कहा, "ऐ बहन, तुम्हें एक बात बताएं।"

खैरातिन ने रकाबी धोते हुए तुनककर जवाब दिया, "ऐ "चलो हटो, तुम्हें न तो कुछ काम न धन्धा। बस ले के सुबू-सुबू बातें बनाने बैठ गईं। उह, ऐसा भी क्या मुआ निठल्लापना!"

"ऐ नौज बीबी, तुम तो हवा से लड़ती हो मुझे क्या गरज पड़ी थी जो तुम्हें कोई बात सुनाने आती? वाह रे दिमाग! जमीन पर पैर ही नहीं पड़ते बीबी के। मर्दुआ जरी लाट साहब की अर्दली में क्या हो गया कि अपने को लाट साहब की बच्ची समझने लगीं।"

"देख, खबरदार, जो अबकी मरद-पीर तक पहुंची तो तेरा मुंह ही झुलस दूंगी, हां। चुड़ैल की नानी कहीं की।"

वाकया है कि अगर अख्तरी उस वक्त वहां न पहुंच जाती तो मुहल्ले में एक अच्छा-खासा हंगामा मच जाता। एक तरफ तो लोग मियां कादिर को मनाने जाते और दूसरी तरफ औरतें आपस में तू-तू, मैं-मैं कर आसमान सर पर उठा लेतीं। मगर खैर, मौके पर अख्तरी के पहुंच जाने की वजह से तमाशे की सूरत कुछ और हो गई। किस्सा यों हुआ कि अख्तरी जब खैरातिन के यहां आग लेने आई तो उसने हांफते हुए, उसे मियां कादिर के फकीर हो जाने का हाल बतलाया। खैरातिन फातिमा से लड़ना बन्द कर, एकाएक अख्तरी से मियां कादिर की बाबत बातें करने लगी।

बीबी फातिमा ने समझकर कहा, "ऐ बहन, यही तो मैं भी इन्हें सुनाने आई थी। लेकिन यह हैं कि सुबू-सुबू कोसा-काटी करने लगीं। ऐ, हां, जरी इनके मिज़ाज तो देखो! ओरफोह, हवा से लड़ाई लड़ती हैं ये तो।"

खैरातिन ने लपाके के साथ दुपट्टा सिर से उतारते हुए, जोश में आ फातिमा की तरफ हाथ बढ़ा-बढ़ाकर कहना शुरू किया, "ऐ, तुम तो बड़ी नन्ही-वाली! जरी ईमान से बताओ तो कि मैं किस दिन किसके साथ लड़ी? मैं तुम्हें बताए देती हूं बहन, बिसीरत झूठी तोहमत लगाना अच्छा नहीं होता।"

अख्तरी ने बात बदलते हुए कहा, "ये क्या तुम लोग सुबू-सुबू कसीदा काढ़ने बैठ गईं? फातिमा बहन, अब तुम कोई नन्ही-सी नहीं रहीं जो

ये सब अच्छा लगे। इस बुढ़ापे में तो जरी अपनी लल्लो को काबू में रक्खो।"

बीवी फातिमा रो-रोकर कुछ कहने ही जा रही थीं कि बाहर के हंगामे ने तीनों का ध्यान अपनी तरफ खींच लिया। मियां कादिर उस वक्त मियां बुद्धन को सबक दे रहे थे। किस्सा-कोतः यह कि इसी तरह धीरे-धीरे चन्द ही मिनट में मुहल्ले की तमाम औरतें इकट्ठी होकर मियां कादिर के मकान पर मिसकोट करने पहुंच गई थीं। कादिर की बीवी उस वक्त इत्मीनान से चारपाई पर बैठी हुई जमुहाइयां और अंगड़ाइयां ले रही थी। एकदम से जो मुहल्ले की तमाम औरतों ने मिलकर धावा बोला तो ये घबरा उठीं। उधर औरतों ने जो ये देखा कि बीवी न रोती हैं, न बेहोश हुईं और मजे से चारपाई पर पड़ी हुई अंगड़ाइयां ले रही हैं, तो आपस में फुस-फुस करने लगीं।

एक ने कहा, "ऐ बहन देखा? जो ये ऐसी न होती तो मर्दुआ घर-बार छोड़कर ही क्यों जाता?"

दूसरी ने मुंह बिचकाकर उत्तर दिया, "उंह, ऐसी मुई औरत भी किस काम की जो अपने मरद को यों तकलीफ दे। मुंह नोच ले ऐसी मुई का तो।"

बूढ़ी खुरशीद ने आगे बढ़कर कांपती हुई आवाज के साथ कादिर की बीवी से कहा, "ऐ बेटा, तुम्हें अपनी जुबान जरी काबू में रखनी चाहिए। ऐसी भी क्या मुई लल्लो कि जो जी में आया निकाल दिया! और हम तो कहते हैं कि भाई, बड़ा गमखोर है हमारा कादिर। जो और कोई होता तो जुबान खींचकर रख लेता। ऐ, अब तुम भी बच्ची नहीं हो। अल्ला के फज़ल से बाल-बच्चेवाली हो, समझदार हो, और कादिर भी हमारा कोई निठल्ला नहीं है। तुमको······"

खुरशीद की बात काट, नाक पर उंगली रखते हुए महबूबी बोल उठी, "ऐ नौज बीबी, एँ वो निठल्ला क्यों? सैकड़ों-लाखों से अच्छा कमाता है। और यह भी नहीं कि उसे कोई बुरी लत हो। मैं तुमसे सच

कहती हूं बहन, ऐसा समझदार लड़का हमारे महल्ले-भर में क्या-शहर भर में कोई नहीं।"

फातिमा ने आगे बढ़कर हाथ नचाते हुए कहा, "ऐ है, कोई लाख समझदार क्यों न हो मगर रोज़-रोज़ की किचकिच हाय-हाय कोई कब तक सहे ? मरद आदमी, ताव में आकर फकीरी ले ली ?

कादिर की बीवी इन तमाम बातों को सुनकर एकदम हक्का-बक्का-सी हो गई। उसे खाक भी समझ में न आया कि माजरा क्या है। वह बेचारी खड़ी-खड़ी इन औरतों के मुंह की तरफ देख रही थी, और वे थी कि सवाल पर सवाल कर इसके छक्के छुड़ा रही थीं। इस लानत-मलामत से घबराकर आखिरकार कादिर की बीवी सर पर हाथ रख रोने बैठ गई।

फातिमा ने आगे बढ़कर हाथ हिलाते हुए कहा, "और जो पहले ही से इतनी समझ आ जाती तो काहे को ये सब भुगतना पड़ता ? मगर नहीं, उस वक्त तो जोम सवार था। उंह, आग लग जाए मुए ऐसे ज़ोम में। ऐसा भी क्या मुआ झगड़ा जो आदमी को फकीर बना के ही छोड़ा।"

कादिर की बीवी यह सब सुनते-सुनते तंग आ चुकी थी। रोकर बोली, "ऐ बहन, ज़रा मेरी भी तो सुन लो। मैं कहती हूं, मैं अपने इतने बड़े लड़के की कसम खाती हूं···"

खुरशीद ने आगे बढ़कर कांपती हुई पर तेज़ आवाज़ में कहा, "ऐ है, ज़री देखो तो, मालिक को उधर साईं बना के भेजा, अब लड़के को खाए जाती है। वाह री औरत ! इतनी उमिर तो मेरी भी होने को आई, कोई सत्तर और छः बरस तो मुझे भी ज़माना देखते हो गए। मगर वाह, तुझे क्या कहूं ? अहा-हा बलिहारी है तेरी !"

फातिमा ने शहज़ादी को टहोका मारते हुए कहा, "ऐ बहन तुम मेरी क्या उमर समझती हो ? कोई साठ और पांच बरस की उमर होगी मेरी भी; मगर नहीं, ऐसी मुई बदज़ात औरत मैंने भी अपनी उमर-भर में नहीं देखी। हम तो कहेंगे कि भई हमें कोई सूली पर चढ़ा दे, मगर अपने कलेजे

के टुकड़े की कसम भई, हमसे तो कभी भी न खाई जाय।"

शहज़ादी भी कुछ कहने ही वाली थी कि कादिर की बीवी एकाएक तड़पकर बोल उठी, "ऐ, तुम लोग अपनी ही कहे जाओगी कि किसीकी सुनोगी भी ? मैं कहती हूं कि चाहे मुझसे जो कसम ले लो जो मैंने किसी-से कुछ भी कहा हो और जो मुझे कुछ भी मालूम हो, तो मेरे तन-तन में कीड़े पड़ें।"

अख्तरी ने बड़े लहजे के साथ कहा, "ओह री मेरी बन्नो! ऐसी बड़ी भोली तो हो ही।"

अख्तरी और भी अभी न जाने क्या-क्या कहती मगर उस वक्त तक लोग मियां कादिर को पकड़े हुए घर ले आए। शहज़ादी ने जीभ को दांतों के नीचे दबाते हुए दयनीय मुद्रा बनाकर कहा, "ऐ है, ज़री हमारे कादिर की तरफ देखो तो। बिचारे का मुंह कैसा उतर गया!"

खुरशीद बोली, "ऐ है मैं कुरबान जाऊं। इस मरी-पीटी चुड़ैल ने अल्ला जाने कैसा क्या कर दिया कि बेचारा एक रात में ही आधा रह गया।"

बहरहाल, यही हंगामा मचता रहा। इत्तफाक से मियां शुबराती को एक काम से चौक की तरफ जाते वक्त अकबरी दरवाज़े के पास पीरू पहलवान दिखाई पड़े। शुबराती ने लपककर पहलवान के कन्धे पर हाथ रक्खा और बोले, "ये लीजिए, तुम तो मज़ा कर रहे हो और वहां तुम्हारे दोस्त कादिर पर कैसी बीत रही है कि बस अल्ला ही जानता है।"

पहलवान ने घबराकर पूछा, "क्यों-क्यों, खैरियत तो है न ?'

"सब खैरियत ही है! वह बेचारा तो घरबार छोड़ फकीरी लेके चला जा रहा है और आप खैरियत की दुम पकड़कर चले हैं।'

"अमा है ? अमा तुम ये क्या कह रहे हो शुबराती मियां ? आखिर यह बात क्या हुई ?"

मियां शुबराती ने एक बार चारों तरफ सतर्कता के साथ देखा और फिर पीरू के नज़दीक आते हुए बोले, "हुआ क्या ? अमा भाई, गप-गूड

की तो अल्ला ही जाने, मगर हमने सुना है कि उसकी जोरू के साथ लड्डन की निगाहें कुछ खराब-सी थी। कादिर ने यह सब देख लिया, बस इसीसे उसने फकीरी ले ली। और इतना तो भाई हम भी कहेंगे पहलवान, कि हजारों बार खुद हमने अपनी आंखों से देखा कि कादिर की बीवी और लड्डन हंस-हंस के बातें कर रहे हैं। मगर हमको क्या ? हमने सोचा कि किसीके मामले में हम टांग क्यों अड़ाएं ! अरे हां भई, जो जैसा करेगा वैसा ही पाएगा।"

पहलवान ने पूरी बात भी न सुनी और लपककर कादिर के घर की तरफ चले। जाकर देखा तो चारों तरफ बड़ी भीड़ जमा है, और चबूतरे पर पीला कुर्ता और पीली लुंगी पहने मियां कादिर घुटनों में मुंह छिपाए बैठे हैं। घर के अन्दर अलग हंगामा मचा हुआ है। भीड़ चीरते-चीरते पहलवान कादिर के पास तक आए और उसकी पीठ पर हाथ फेरकर बोले, "अमां कादिर !"

कादिर मियां उछल पड़े और पहलवान को गले से लगाते हुए रोकर बोले, "सवेरे से हमें सबने तंग कर रक्खा है। इनके हाथों से हमें नजात दिलाओ, भाईजान।"

पीरू पहलवान ने कादिर को सीने से लगाकर भर्राए हुए गले के साथ पूछा, "आखिर तुम्हें ये फकीरी लेने की क्या सूझी थी ?"

कादिर ने रोकर कहा, "अमां वही तो बताते हैं भाईजान। बात यों हुई···"

बीच ही में टोककर मियां बकरीदी ने आगे बढ़ते हुए कहा, "ये क्या बताएंगे, मैं तुम्हें सब बताए देता हूं।"

कादिर मियां फिर चीखकर बोले, "बस सवेरे से इसी तरह नाकों चने चबवा रहे हैं। पूरी बात सुनते नहीं और बीच में टांग अड़ा देते हैं।"

पहलवान ने तेवर बदलते हुए कड़ककर कहा, "अबकी जो बोला उसकी जुबान पकड़कर खींच लूंगा। हमें कोई कादिर न समझ ले कि रो देंगे; मारे चांटों के मुंह रायता कर दिया जायगा। हां जी कादिर,

तुम कहो।"

कादिर ने अपने आंसू पोंछ मुसुकते हुए कहना शुरू किया, "अमां कल रात को हमने एक ख्वाब देखा कि जैसे बड़ा चांदना-सा फैल गया है और सामने खुदावन्द करीम खड़े हुए हमसे कह रहे हैं कि तुम लोगों को यह बतलाओ कि हम कल दुनिया के हाल-चाल देखने आएंगे और सबका फैसला करेंगे। सो भाई, वही सब कहने मैं आज सुबू पारवाले साहजी के तकिये पर जा रहा था कि इन लोगों ने मुझे रोक लिया। सुबू पांच बजे से अब ये बारह-एक बजे का टेम हो गया, और अब तक इसी तरह रोक रक्खा है। अब शाम की निमाज के बाद अल्लाहताला तसरीफ लाया चहें और यहां ये हाल है कि दुनिया-भर में किसीको खबर ही नहीं। मगर हम क्या करें। वह रहमानेरहीम सबके दिल का हाल जानता है। अगर इन लोगों ने रोक न रक्खा होता, तो क्या मैं अब तक ये खबर न सुना देता!"

यह हाल अब जो कोई सुनता है, उसीके छक्के-बक्के छूट रहे हैं। आनन-फानन में यह खबर पाटेनाले के कोने-कोने में पहुंच गई और सब लोग मियां कादिर की जियारत के लिए आने लगे।

खुदा की मरजी, एक घंटे के बाद एकाएक आसमान पर बादल घिर आए, बिजली चमकने लगी, घनघोर काली घटाओं से मूसलाधार बारिश शुरू हो गई। तब तक मियां कादिर के इलहाम की चर्चा तू-मैं की जबान पर होती-होती सारे शहर में फैल गई थी। और उस वक्त भाई बकरीदी के बतला देने की वजह से पूरा पाटानाला कम्बख्त हादी काने को कोसता हुआ, तस्बीह के दानों को दना-दन फेरता, हाथ और आखें आसमान की ओर उठाकर रोते हुए कलमा पढ़ रहा था।

गोबरू और गुबरैले

बड़े बाबू हमारे महल्ले के रत्न है। बैंक से रिटायर होने के बाद उन्होंने अपने घर के बैठके में स्टेशनरी की एक छोटी-सी दुकान खोल ली है। वहीं बैठे-बैठे मानव-चरित्र का अध्ययन करते हुए वह दिन-भर अपनी समझ के जाल में फिलासफी की मछलियां फसाया करते हैं। छठे-छमास जब कोई बड़ी समस्या आन पडती है, तब शाम को वह मेरे पास आकर उसका समाधान खोजते हैं। एक दिन आए, बोले, "पंडज्जी, एक बडी भारी धारमिक समिस्या कई दिनों से मुझे हैरान कर रही है, जरा उसका फैसला चाहता हूं आपसे।"

बड़े बाबू का दर्शन औरों के दर्शन से जुदा है, इसलिए उनका समाधान करने में मुझे बड़ा सुख मिलता है। कहने लगे, "पंडज्जी, हमारी इंडिया के सुतंत्र होने के जमाने से घर-घर सातों जात मे, नगर-देहातों मे, सब जगह ब्याह-कारज मे बारह घंटों तक फिल्मी गानों का लौड-इस्पीकर अवश्श बजता हैगा, ये तो आपने भी मार्क किया होगा।"

"जी हां बड़े बाबू, बात तो ठीक है आपकी।"

"तब तो ये भारती ससकिरती की बात हो गई है, न पंडज्जी। घर मे गनेशजी और घरके द्वारे पे लौड-इस्पीकर—मानै हुंड्रेड परसेंट इंडियन कल्चर।"

"ठीक है बड़े बाबू।"

"और ब्याह-कारज के बाद घर में हिजड़े नचाना भी भारती संस-किरती है। इसके माने ये भए कि दायें लौड-इस्पीकर, बायें हिजड़े—और बीच में मिरी गणेशा नमोनमः। दैट इज अवर इंडियन कल्चर।"

मुझे बड़े बाबू की इस इंडियन कल्चर को भी स्वीकार करना ही पड़ा। बड़े बाबू मेरे समर्थन से संतुष्ट हुए, बोले, "मुझे इस बात का पक्का भरोसा था कि भारती संसकिरती की इस बारीकी को और कोई समझे या न समझे, आप अवश्श समझ जाएंगे। लेकिन जो समिस्या है पंडज्जी, वह तो अब आती है—यानी कि गनेशजी ने रिद्धी-सिद्धी को तलाक दे दिया है।"

"यह आपने कैसे सोचा बड़े बाबू?"

"सीधी बात है, गनेशजी के दायें-बायें पहले ऋद्धी-सिद्धी विराजती थीं और अब लौड-इस्पीकर और हिजड़े विराजते हैं। इसके माने यही भए कि इन दोनों के लिए गनेशजी ने उन दोनों को तलाक दिया होगा।"

ऋद्धि-सिद्धि को तलाक देने का प्रमाण भी उन्होंने वर्तमान भारत की दरिद्रता और बढ़ती बेकारी से दे दिया। यही नहीं, बड़े बाबू ने यहां तक सिद्ध किया कि गणेशजी अब बेसुरेपन और नपुंसकता ही को आधुनिक भारतीय संस्कृति के रूप मे प्रतिष्ठित कर रहे हैं, इसलिए हमें इन्हीं दो आदर्शों पर चलना चाहिए। यही गणेशजी की इच्छा है।

बड़े बाबू की इस बात के उत्तर मे मैं न हां कह सका और न ना ही। मेरे पसोपेश को देखकर बड़े बाबू ने कहा, "जरा गहरा विचार करना पड़ेगा आपको। मुझे भी गनेशजी की यह इच्छा समझने में सात-आठ रोज लग गए थे।" इसके बाद उन्होंने हिसाब समझाया। जनवरी की १७ तारीख से लेकर ३१ तारीख के अन्दर हमारे महल्ले में दस लड़के ब्याहने के लिए आए, तीन बहुएं ब्याह करके आईं, चार बटुकों का जनेऊ और एक का मुण्डन हुआ। इस प्रकार चौदह दिनों के भीतर अट्ठाईस बार लाउडस्पीकर बजा। दस घरों मे बारह घण्टे प्रतिदिन के हिसाब से दो-दो

फेल किए डालता हूं। अब किसी और तरीके से भारती संस्कृति की उन्नति करूंगा।" कहकर वह गम्भीर विचारमग्न मुद्रा में चले गए। खैर!

फरवरी के महीने में हमारे महल्ले में केवल एक ही मांगलिक कार्य हुआ, इसलिए फिल्मी लाउड-स्पीकर भी एक ही बार बजा, परन्तु गोवरू साहु की श्री रघुनाथ हवेली में इस बार एक ही पखवारे में चार अखण्ड रामायणें हुईं। लाला गोबरू को अखण्ड रामायणों का इश्क है। हर पखवारे की नवमी को तो गोवरू साहु चौबीस घण्टे की अखण्ड रामायण कराते ही हैं, इसके अलावा वह जितनी मनौतियां मानते हैं उतनी 'अखण्ड' और कराते हैं। उनकी हवेली में चार दिशाओं में लाउडस्पीकर स्थायी रूप से लगे हुए हैं। लाला गोवरू के लाउड-स्पीकरों से महल्ले में बहुतों को शिकायत है। दस-पांच बार हुज्जतें भी हो चुकी हैं, मगर राम-नाम का झण्डा उठाकर गोवरू साहु सबको डपट लेते हैं। इस बार कुछ लड़कों ने आपत्ति की। यह उनकी पढ़ाई के दिन थे। मार्च-अप्रैल में परीक्षाएं होंगी। हाईस्कूली छात्रों ने कहा कि जनवरी के पन्द्रह दिन शादियों के शोर में डूबे, अब रामायण उनकी लुटिया बोर रही है। लाला गोवरू से कहा गया कि आप अखण्ड रामायण चाहे जितनी करें, बस लाउडस्पीकर का प्रयोग न करें। गोवरू बोले, "ये कैसे हो सकता है? धरम का मामला है। रामजी का जस फैलता है।"

उनसे कहा गया कि रामजी का जस ऐसे ही फैला हुआ है, उन्हें लाउडस्पीकरों के सहारे की आवश्यकता नहीं है। लाला बोले, "लाउड-स्पीकर हमारे धरम का अंग है।"

"मगर पहले तो लाउड-स्पीकर नहीं था फिर वह धरम का अंग कैसे बना? इसके अलावा वो विलायती वस्तु है। राम-नाम का प्रचार उसके द्वारा नहीं होना चाहिए।"

लाला ने जवाब दिया कि छापाखाना भी विलायत से आया, जब उसमें रामायण छप सकती है तब लाउड-स्पीकर पर प्रसारित भी हो सकती

है। 'धारयति धर्मं' शास्त्र का वचन है। पब्लिक ने लाउड स्पीकर को धारण कर लिया है, इसलिए अब वह धर्म का अंग है।"

गोबरू साहू के इस तर्क की बड़ी चर्चा फैली। इसके साथ ही यह भी सुनाई दिया कि लड़के लाला के लाउडस्पीकर तोड़ेंगे। यह सुनकर मैंने सोचा कि अब महल्ले में उत्पात होकर ही रहेगा। इस चिन्ता ने मुझे दुखी भी किया। गोबरू की हठधर्मी से सभी नाराज़ थे। लड़कों में सभी को सहानुभूति थी। जब पखवारे की चौथी अखण्ड रामायण शुरू हुई, तब लड़कों ने गोबरू की हवेली में घुसकर माइक्रोफोन तोड़ डाला। उनके आक्रमण से रामायण-पाठ भी खण्डित हुआ। लाला धर्मान्ध हो गए। पुलिस कचहरी में रिपोर्टें हुईं, अखबारों में लड़कों और 'समाज के चन्द स्वार्थियों' की नास्तिकता पर सम्पादक के नाम पत्र छपे। लाला ने पर्चे छपाकर बटवाए, लिखा कि अभी इन लड़कों ने अंग्रेज़ी के साइनबोर्ड तोड़कर सरस्वतीजी का अपमान किया और अब रामजी का लाउड स्पीकर तोड़ते हैं। इस अधर्म को रोकना चाहिए।

"हां-हां, बड़े बाबू, बड़े शौक से आइडिया सुनाइए, मुहर लग जाएगी।"

बड़े बाबू बोले, "गोबरू साह का मंझला लड़का गुबरैला है, आपको मालूम है न ?"

"गुबरैला क्या बड़े बाबू ?"

"अरे वही लड़के जो आखें ढकनेवाले फैशन के बाल रखते हैं, अंगरेजी गाने गाते हैं। वही टिंगो, डिंगो, जिंगो के पुजारी।"

"हां-हां, बीटिलवादी। क्या अपने गोबरू का लड़का बीटिल···"

"एक वही नहीं, अपने महल्ले में अब दस-बारा लड़के हैं। अपने-आप को गुबरैला गायक कहते हैं। सो हमने गोबरू के लड़के रामनिवास से कहा कि बेटा बाप को गालियां देने से कोई लाभ नहीं। वो अखंड रामायन-पाठ में भारती संसकिरती का परचार कर रहे हैं तो तुम लोग अखंड गुबरैला-पाठ करो। वह भी तो अब भारती संसकिरती ही है।"

"बीटिल-संगीत भारतीय संस्कृति कैसे हो गया बड़े बाबू ?"

"सीधी बात है पंडज्जी, अगर गुबरू का लौड-इसपीकर हमारे धरम और भारती संसकिरती का अंग है तो गुबरैला संगीत क्यों नहीं। रेल-मोटर-रेडियो, लौड-इस्पीकर, कोट-पतलून, जब ये सभी विलायती संसकिरती हमारी भारती संसकिरती में घुल-मिल गईं, तब गुबरैलों ने ही क्या पाप किया है। अरे, जो धारो सो धरम, उस दिन गुबरू साह ने यह शास्तर का प्रमान दिया तो था।"

बड़े बाबू का यह तर्क अकाट्य था। उनके तर्क के प्रकाश में मैं भारतीय संस्कृति के विकास की सम्भावनाओं पर विचार करने लगा। बड़े बाबू बोले, "यूनिटी इन डाइवरसिटी—एकता में अनेकता। जरा गौर से देखिए पंडज्जी, हमारी भारती संसकिरती के माने क्या अखंड पाठ—बस ! वह अखंड-पाठ कभी रमायन का होगा और कभी बीटिलों का। एकता में अनेकता आ गई—कि कुछ गलत कहता हूं पंडज्जी ?"

"नहीं साहब, बात आपकी सही पक्की है बड़े बाबू। बस आपत्ति

यही है कि तुलसीदास की रामायण से आप गुबरैले गीतों की टक्कर कराएंगे।"

बड़े बाबू गम्भीर होकर बोले, "पडज्जी, आप ये न भूलिए कि बात धरम की है। गुबरू साह ने बताया था कि धारे सो धरम। हम रमायन को धारते हैं और नये लोग गुबरैले गीतों को। और धरम ही असली भारती संसकिरती है, चाहे वो कोई-सा भी हो।" इस प्रकार धार्मिक मोर्चे पर हमें लाजवाब करके सतोष से हुक्का गुड़गुड़ाकर बड़े बाबू मतलब की बात पर आए, बोले, "उस बार तो हमारी गप्प्टी औरगजेब पुरसकार की इस्तीम आपने नाकाम कर दी थी सो हम चुप बैठ गए मगर इस बार हमारी इस्तीम बड़ी सालिड है पडज्जी! कोई पोलिटीसियन इस में बाजी मार ही न सकेगा। बस, आप हिन्दी में एक अच्छा-सा मजमून हमें लिख दीजिए कि भारती ससकिरती की उन्नति करने के लिए परसों से हमारे घर में अखण्ड चौटिल-पाठ बैठेगा। ये लड़के उसे छपवा के सारे शहर में बांट आएंगे।"

हम भी बड़े बाबू की भारतीय संस्कृति की मौज में आ गए। हमारा समाज जब एक लय, एक सुर में नहीं बंधना चाहता और भारतीय संस्कृति के नाम पर सभी बेसुरे होकर अपने-आपको समाज पर आरोपित करने में बढ़-चढ़कर होड़ ले रहे हैं, तो बड़े बाबू की दर्शनधारा में बहना ही एकमात्र उचित कार्य है। संस्कृत के दो-चार श्लोकों के टुकड़े चिपकाकर हमने अखण्ड चौटिल-पाठ का घोषणापत्र लिख दिया।

तीसरे दिन भारतीय संस्कृति का लाउडस्पीकरी गह-[illegible] पूरे महल्ले में आरम्भ हो गया। लाला गोवरू साह की 'थी'
आस-पास गुबरैले गोवरू नन्दन ने कई घरों में
दिए। सारे तार बड़े बाबू के बैठके से जुड़े थे।
गोवरू-हवेली में रामायण-पाठ
क्वाय' कोरस [illegible]
मगल

दैट व्वाय टुक माई लव अवे···
भए प्रकट कृपाला दीन दयाला···
इफ यू सो लाइक दैन होल्ड मी टाइट
लेट मी गो आन लविंग यू टु नाइट···

गानों के साथ बीच-बीच में गुबरैले गायकों की 'ऍंऽऽ ऍंऽऽ होऽऽ हो—हा-हा' की बे-लगाम चीख-पुकार भी होती थी। अखण्ड रामायणियों का रंग उखड़ने लगा। लाला गोवरू नौ-नौ हाथ उछलने लगे। इस बार अपने रामायण-पाठ की सुरक्षा के लिए उन्होंने पुलिस तक बुला रखी थी, पर वह भी काम न आ सकी। गोवरू साहु बड़े बाबू के दरवाज़े पर आकर गरजने लगे, "साले धरम के काम मे विघन डालते हैं, हमारे लड़कों को भड़काते हैं।" लड़कों ने उनपर अपनी पढ़ाई मे विघ्न डालने का आरोप लगाया। लाला ने कहा कि धरम पढाई-लिखाई से बड़ा है। बड़े बाबू भीतर से ही माइक्रोफोन पर बोले कि तभी तो अपने मां-बापों की गाढ़ी कमाई और इम्तहानों की चिन्ता छोड़कर ये लडके भी अपना धरम निभ रहे हैं। बड़े बाबू ने मेरे लिखे घोषणापत्र से पढ़कर सुनाया, "भाइयो! बीटिल और हिप्पी सब बड़े धार्मिक होते हैं। योग और भोग की दो अलग-अलग दुनियाओं के बीच चरस के लच्छों के राकेट उडाकर ये महान समन्वयधर्मी लोग भारतीय संस्कृति को इण्टरनेशनल संस्कृति बना रहे हैं।"

बीस-पचीस कदम की दूरी पर स्थित दो धर्मों की लाउडस्पीकरी सेनाओं का घमासान युद्ध हो रहा था। डिमाक्रेसी में यह युद्ध जायज़ माना जाता है। चुनाव के दिनो मे जमकर होता है। मेरे घर के नीचे, बड़े बाबू के घर के सामने लाला गोवरू साहु, उनके समर्थक और बड़े बाबू तथा उनके हुस्काए हुए लड़के आस्तिकता और सामाजिकता के मसलों पर शास्त्रार्थ कर रहे थे। ऐसे शोर में काम-काज भला हो ही कैसे सकता था? लाउडस्पीकर लेकर कोई भी व्यक्ति आज सामाजिक स्वतन्त्रता का

हनन कर सकता है और उसपर तुर्रा यह कि धर्म और मानवीय भावनाओं की आड़ लेकर कर सकता है। व्यक्ति की स्वतन्त्रता के ऐसे हामियों के लिए मैं समझता हूं कि बड़े बाबू का दर्शन ही आता है। बेसुरेपन को बेसुरापन ही काट सकता है। विष ही विष की ओषधि है।

राम हिष्ट्री का रण=राष्ट्रीकरण

सात-आठ बरस पहले बैंक से रिटायर होने के बाद हमारे मान्य पड़ोसी बड़े बाबू आम पेंशनयाफ्ता बाबुओं के चलन पर कचकर कीर्तनिये साधुबाज या फजियेखोर बुड्‌ढ़ न बने, वे 'प्रैक्टिकल' फिलासफर यानी व्यावहारिक दार्शनिक बन गए हैं। उनके दार्शनिक चमत्कार हमारे महल्ले या आस-पास के क्षेत्र में अक्सर दिखलाई पड़ते रहते हैं। प्रैक्टिकल फिलासफर के स्वयंसिद्ध पद का महान दायित्व-भार संभालने के लिए नियति ने उन्हें खासी सुविधाएं दे रखी हैं। दो लड़के हैं, दोनों ही अब पल-पुस, पढ़-लिखकर घर-बारवाले, नौकर-पेशा हो चुके हैं। एक कलकत्ते में रहता है, दूसरा दिल्ली में। सस्ती के समय में महानगर में एक मकान बनवा लिया था, उसका अब पौने तीन सौ रुपये महीना किराया आता है। अपने पुश्तैनी घर के ऊपरवाले भाग को भी पचास रुपये मासिक पर उठा रखा है। उनके और उनकी सौभाग्यवती बुढ़िया के लिए खाने-पहनने का प्रबन्ध चौकस है। अपने बैठके में उन्होंने स्कूली बच्चों के मतलब की किताबें, स्टेशनरी, लेमनचूस, गुब्बारे वगैरह भी रख लिए हैं। वैसे दुकानदारी उनका खास धंधा नहीं बल्कि चलती गली का मुजरा लेते रहने के लिए रामझरोखा-भर है, फिर भी कुछ न कुछ उससे भी कमा ही लेते हैं। हुक्का उनकी कमजोरी, अखबार शौक, ट्रांजिस्टर मन-बहलाव

और प्रैक्टिकल फिलासफी मिशन है। मेरे मकान के पास ही रहते हैं, और जब कभी उनकी सूझ के कांटे में कोई बडा विचार-मच्छ फंस जाता है तो अपने मीना-नक्काशी की छोटी फर्शीवाले हुक्के को हाथ में उठाए हुए हमारे यहां पधारते हैं। जन्माष्टमी के दिन सवेरे लगभग साढे नौ-दम बजे वे पधारे थे। मैंने कहा, "बडे बाबू, जन्माष्टमी के दिन सवेरे-सवेरे पधारे है आप, इसलिए निश्चय ही कोई ह्वेलनुमा महान आइडिया आपके शिकंजे में फंसा होगा।"

"हां पण्डिज्जी, बात तो ठीक ही है आपकी। और उसपर आपकी सम्मति की मोहरे इलाही भी लगेगी, वाकी इस सर्म आते-आते अनुशासन-हीनता की चिंता ने हमे एकाएक भीतर से बाहर तक सनसनाय डाला है साला!" गहरी चिंता में उन्हें हुक्के की तलब स्वाभाविक रूप से हुई।

"अरे ये तो एकदम नई और चौकानेवाली बात सुनाई बड़े बाबू। लड़के अब तक तो आपका इतना अदब···"

"लड़के बिचारे अब भी करते हैं। शिकायत हलवाइयों से है। साला खोया सस्ता हो गया, चीनी के दाम भी गिर गए, मगर मिठाइयां वही बावा मोल हैं। मामूली दुकानों पर भी ससुरी दस रुपये किलो। हद है! भला बतलाइए कि वरत के दिन कोई नाश्ता करना चाहे तो साला पांच-छै टुकड़े मिठाई क्या खाए, ढाई रुपिया खा जाय। सोच के ही खून सूख जाता है, आपसे सच्ची कहता हूं।"

मिठाई के नाम पर हमारी हमदर्दी भी जाग पड़ी, कहा, "यही रोना है बड़े बाबू, जरा मेरा कष्ट विचारिए कि शाम को भाग-ठंडाई के बाद मिठाई को अब सपने में देखना पड़ता है, और वहां भी कम्बख्त महंगाई का ध्यान पीछा नही छोड़ता।"

"घण्टे-भर पहले हम सुकरू के यहां गए, उससे कहा कि साला समाजवादी जमाना आ गया, हमारा बैंक नेशनलाइज हो गया और तुम अभी तक पूंजीवादी भाव चला रहे हो। तुम्हें शरम नही आती, बड़े भगत बनते हो, शिवाले में अपने नाम का पत्थर

फेरकर हमे जवाब देना है कि हमारा रेट भी समाजवादी है, हलव
समाज ने पास किया है। हमे सुनकर ताव आ गया, बिना मिठाई लिए
लौट आए।" सिद्धान्त की अकड़ मे बड़े बाबू को दर्शन-दूत हुक्का फि
याद आया।

बड़े बाबू को तनिक चहकाने की गरज से मैं बोला, "तब तो आ
हलवाइयो को अनुशासनहीन नहीं कह सकते। वो अपने समाज के अनु
शासन मे है।"

बड़े बाबू सचमुच तैश मे आ गए, दोनों हाथ बढ़ाकर झटकारते हु
बोले, "नहीं, सिंडीकेट कहिए सिंडीकेट। ये साले समझते है कि महल्ले के
मर्दों मे कोई इन्दिरा गाधी नहीं बन सकता। अजी बड़े बाबू बनके
दिखाएगे।"

मुझे हंसी आ गई, "वाह, क्या क्राति ला रहे हैं आप, यानी अब से
बहादुरी और हिम्मत के काम मर्दाने के बजाय जनाने कहे जाएगे।"

"मरद, ये हजारो पढ़े-लिखो से भरे हुए शहर, और मुट्ठी-भर लक्ष्मीजी
की सवारियां हमे काठ का उल्लू बना रही हैं। हम सगुर फड़फड़ा भी नहीं
सकते। तुम्हारी ऐसी-तैसी। हमने आज ही अपने हलके के चारों हलवाइयों
की दुकानों का राष्ट्रीकरण करने का फैसला कर लिया है। उसका इन्तिजाम
करके ही आ रहा हूं, सोचा कि आपके कानों मे भी डाल दूं।"

मैं उन्हें चौंककर देखने लगा, किन्तु उनकी बात ने गुदगुदाकर मेरे
मन को तरंगित भी कर दिया था। मैंने कहा, "ये आप आखिर कह क्या
रहे हैं बड़े बाबू। इंदिराजी तो प्राइममिनिस्टर होने के कारण यह कर सकीं
मगर आप···"

बेफिक्र हुक्का गुड़गुड़ाते हुए उन्होंने शान्त भाव से उत्तर दिया, "हां-हां,
प्राइममिनिस्टर तो खैर सर्वशक्तिमान होता ही है, पर प्रेसिडेण्ट
डिक्टेटरों की पावर भी बड़ी अजब होती है पण्डितजी। अच्छा, जरा
राष्ट्रीकरण को अर्थाकर बतलाइए, आप तो इतने बड़े विद्वान सर्नैह आदमी
हैंगे।"

"वड़े बाबू, विद्या के सहारे अधिक से अधिक चाद-सितारों तक पहुंचा जा सकता है, मगर प्रैक्टिकल फिलासफी असीम आकाश है। आपके गंभीर अर्थ को सुनना चाहता हूं।"

संतुष्ट हो पालथी मारकर बैठ गए, कहा, "हमारी ज्ञान-दृष्टि सुकरू की दुकान से लौटते समय एकाएक खुली। मन से पूछा, वड़े बाबू, आखिर व्हाट इज़ दिस राष्ट्रीकरण? फिर हमने यों अर्थाया कि—'रा' माने राम, 'ष्ट्री' माने हिष्ट्री, यानी राम की हिष्ट्री का रण इजीक्वल टु राष्ट्रीकरण। समझे आप?" अदाइलहामी हुई तो मुह-लगा 'नन्हा' हुक्का चट से उनकी गोद चढ़ आया।

जोर से हसने के लिए मेरा मन संकोचवश घुट-घुट गया। वड़े बाबू उस समय गम्भीर मुद्रा मे थे। मैंने भी बडी सजीदगी से पूछा, "'ये राम की हिस्ट्रीवाली बात जरा फिर से समझाइए वड़े बाबू। ऊंचा ख्याल है।"

"सीधा ख्याल है पंडिज्जी, राम की हिष्ट्री मे जिनके साथ जुद्ध का वड़नन आता है उसके साथ रण लड़ना ही राम की भक्ति है। मारो, इन रावणों, कसो को औनादों को।"

वड़े बाबू के इस तैश को अपनी प्रशसा का मुकुट पहनाकर मैंने घर मे चाय भेजने के लिए आवाज दी। चाय के नाम पर वड़े बाबू पूरे मूड में आ गए। बोले, "इस राष्ट्रीकरण के लिए तेरह रुपये अपनी गाठ से दे के आ रहा हूं।"

"किसे?"

"अपने किरायेदार के लड़के सुरेन को।"

"क्यो?"

"चौथी बेगम की पुजैया के लिए।" कहकर हसे, फिर कहा, "पुराने दिनो में रहीमन्नवाव लोग जो समझदार होते थे वे चार बेगमों से ब्याह करते थे। एक से मन मोहे, एक सेज पर सोवे, तीसरी छप्पन भोजन बनावे और चौथी बेगम को डंडे दे डंडे मार पड़े कि जिससे बाकी तीनों दबी रहे। सो सुरुरू हलवाई को समाज की चौथी बेगम बनाया जाय रहा होगा इस

दम। हाः-हाः-हा:।"

सक्षेप में, जब सुकरू भगत ने इनकी मिठाई तौलते समय इनसे मूछों पर ताव देकर कहा तो ये भी ताव खाकर लौट पड़े। मार्ग में राष्ट्रीकरण शब्द 'राम की हिस्ट्री का रण' बना। घर से तेरह रुपये लेकर ऊपर वाले किरायेदार के लड़के इण्टर के छात्र सुरेन्द्र के पास गए और कहा कि समाज की सेवा करो और दोस्तों के साथ मिठाई खाओ। बतलाया कि दो किलो खोये की मिठाई तुलवाना और डिब्बा हाथ में लेकर बारह रुपये टिकाना। जब सुकरू हुज्जत करे कि दस रुपये किलो है तब तुम कहना कि दस रुपयों में दो-पौने दो किलो माल बनता है। एक रुपया या अधिक से अधिक डेढ़ रुपया प्रति किलो मुनाफा ही समाज से लिया जाना चाहिए। बड़े बाबू ने यह आदेश भी दिए थे कि यदि हलवाई न माने तो धरना देना, मिठाई फिर बिकने न देना।

मुझे इस बात का विश्वास नहीं था कि बड़े बाबू की सेना इस काम में सफल हो सकेगी। मुनाफाखोर गुड़ से चिपके चीटे के समान होता है जो अपनी जान दे सकता है पर गुड़ से अलग नहीं किया जा सकता। मैं समझता था कि लड़के ताव खाकर अंत में कुछ उपद्रव करेंगे और पुलिस आकर मुनाफाखोरों की रक्षा कर लेगी, धरना टाय-टाय फिस्स हो जाएगा। लेकिन बड़े बाबू कच्ची गोटियां नहीं खेले थे। मेरी शंका का निवारण करते हुए बोले, "सुरेन को आप जानते हैं नहीं पंडिज्जी? भगवान उसकी लम्बी उमर दे। मुझसे बड़ा प्रैक्टिकल बनेगा। अभी से ही लीडरी में 'विन' घोड़ा है, कालिज की यूनियन का जनरल सिक्रेट्री। मैंने कसौटी पर कस के खरा सोना अपनाया है महाराजा, मैं तो अब सुकरू की दुकान के आस-पास किसी दुकान के चबूतरे पर आसन जमा के सुरेन की रण-नीति का संचालन देखूगा। हो सके तो आध-पौन घंटे में वहां से एक चक्कर आप भी उधर से गुजर जाइएगा। चलते-चलते अपने श्रीमुख से एक शब्द शाबास कहते हुए निकल जाइएगा। लड़कों का दम बढ़ जाएगा।"

मैंने हामी भर ली। बड़े बाबू जैसे जोशीले और झड़पदार, साफदिल

लोग गो नार्पद नहीं हुए फिर भी जमाने-हाल में मुझे कम मिले। महगाई पर टोकने से सुकरू ने मूछों पर ताव दिया। चोरी और सीना जोरी। बड़े बाबू ने इसे न कभी बर्दाश्त किया और न करेंगे। मैं यह सब सोच ही रहा था कि बड़े बाबू फिर आ गए, बोले, "छिमा कीजिएगा महराजा, आप हर तरह से हमारे पुज्ज हैं, पर गली में चक्कर लगा जाने की ड्यूटी के लिए मैंने आपका राष्ट्रीकरण कर लिया है, ऐसा न हो कहीं पढ़ने-लिखने की तरग में भूल जाय और कल कहे कि बड़े बाबू, आइ एम वेरी सारी। मैं लड़कों से जाके कहूगा कि आप उनके साथ हैं।"

"आपके राष्ट्रीकरण करने पर तो शायद मैं विद्रोह कर जाऊं बड़े बाबू, पर आपका सुझाव उत्तम है, इसके निमित्त मैं स्वयं अपना राष्ट्रीकरण कर लूगा।" और मैं पहुच भी गया।

गली मजमे से भरी थी। घटना-स्थल तक पहुचने से पहले ही बातें सुनने को मिलने लगी। कोई कह रहा था कि लड़के अच्छा काम कर रहे है। एक साहबनुमा लाला-नन्दन गरज-गरजकर कह रहे थे, "मुनाफा क्यो न कमाए। हमारे बाल-बच्चे कैसे पलेंगे। कल को बैपार में घाटा हो जाय तो कौन भरेगा। सरकार भरेगी ? हम हर चीज का राष्ट्रीकरण कर देंगे।

"माताओ और सज्जनो, आज जन्माष्टमी के पवित्र दिन हम आपके बच्चे न्याय के लिए धरना दे रहे हैं। हमारा साथ दीजिए। नहीं तो हमारी छातियो पर पैर रखकर अपने स्वाद-सुख को कलंकी बनाइए। माताओ और सज्जनो···"

दुक्काविहारी बड़े बाबू एक बूढ़े बाबू साहब को डाटकर समझा रहे थे, "कहां से गैरकानूनी बात है साहब ? ये लड़के मिठाई खरीदने को थोड़े ही मना कर रहे है। आपकी मर्जी खरीदने की हो तो अपने-हमारे बच्चों की छाती पर पैर रखिए और खरीदिए।"

मुझे देखकर लहक पड़े, हाथ बढ़ाकर बोले, "देख लीजिए महराजा, अपने देस के नौनिहालो को। यही ग्वाल-बाल मंडली है हमारे मोस्ट ऐंशेंट और कल्चर्ड भारतवर्ष की—द फ़ेमस बानर्स आफ़ लार्ड श्रीराम—इनकी

ब्लैक की लंका को यही लोग फूकेंगे।"

मैंने कहा, "अजी फूकने-तापने की बात ही कहां उठती है। यह नौजवान तो सौ फीसदी गांधीवादी पिकेटिंग कर रहे हैं। सुनीति के लिए लड़ रहे हैं।'

"आपके चरन छूने में यहां हुक्का रखने की पचायत है, पंडितजी, वार्ना मुए समान ही मानिएगा। चित्त गद्गद हो गया, ऐसा हौसला दिया है आपने।"

खैर, मैं चला आया। धरना चलता रहा। पुलिस बुलाई गई, पर वह क्या करती। खड़ी रही। समा ऐसा बंध चुका था कि कोई इन हलवाइयों की दुकानों की ओर झांकता तक नहीं। कड़ी गर्मी का दिन, खोये का मामला। तब खोये के ज्यादा कम पर गम खाने की नीति अपनाकर एक हलवाई ने गली में कनस्तर पिटवा दिया कि वह खोये का लड्डू, पेड़ा, बर्फी आदि ७ रु० किलो के सनातनवादी रेट पर बेचेगा। कुछ लड़ाके बड़े बाबू के साढ़े छः वाले भाव को ही मान देना चाहते थे पर बड़े बाबू ने कहा, कि फिलहाल अठन्नी के लिए इनसे रार न बढ़ाओ बल्कि बाजार के दूसरे दुकानदारों का राष्ट्रीकरण कर डालो।

दूसरे दिन बड़े बाबू के राष्ट्रीकरण की चर्चा घट-घट-व्यापी राम के समान ही घर-घर में व्याप्त थी। हर दुकानदार पेशा आदमी इस घबराहट में था कि देखो, सुनो, चाहे अपने युनिवर्सिटी कालेज से रार मोल ले, चाहे सरकार से; महीने पन्द्रह दिनों तक के लिए कम से कम और अधिक चाहे जितना समय लग जाए, यह साले चने चबवा देते हैं। बेचारों के लिए तो एक-एक मिनट कीमती है वह इतना समय कैसे नष्ट होने दें। फिर लूट-पाट भी सम्भव है, मोहल्लों में दुकानें होने के कारण आग भी न लगाएं। बेचारों की दिन का चैन और रातों की नींद हराम हो गई। रोज का कुआ खोद-कर पानी पीनेवाला, बड़े रोजगारों के घने जंगल के बड़े-बड़े वनस्पि-तियों के बीच में अपना घूर की हैसियत रखनेवाला छोटा दुकानदार डर के मारे पेट के लिए [illegible] का सवाल सामने उठाने की

वानों मे विद्रोही और भीतर भयत्रस्त था। बड़ी तोंदोंवाले चिनिन तो अवश्य थे पर उनके पास अपना घमड घिसने लायक काफी पैसा था। विद्यार्थियों मे बाबू-नंदनो और व्यापारी-नदनो के दो बडे साफ वन गए।

अफवाहो का बाजार गर्म था। दिन-भर न जाने कितनी बाते मुझे घर बैठे सुनाई पड रही थी, लठैन आ रहे है किसीके दस, किसीके बीस, कोई पचास भरती करनेवाला है—टहरी, मालिन, नाई, धोबी जो भी घर मे घुसता है वही एक खबर लाता है। यह भी सुना कि शहर के सारे कालिजो की एन० सी० सी० बटालियने यहा दुकान-दुकान पर धरना देने बुलाई गई है—लाठी का जवाब लाठी से, गोली का गोली से और समझदारी का जवाब समझदारी से दिया जाएगा। फिर हल्ला उड़ा कि लडके जासूसी कर रहे हैं जो अपना माल हटाकर जहा ले जाएगा वहा तक वह पीछा करेंगे और फिर 'गुरिल्ला फाइट' देंगे। कम्यूनिज्म आ रहा है, नक्सलि-वादियों भी घुसपैठ करनेवाले है। सुना, पुलिस चेन गई है, पकड़ा-धकडी होनेवाली है। जाने क्या-क्या तमाशा हो गया। लेकिन चौथे या पाचवें दिन अचानक एक यथार्थ सत्य यह प्रकटा कि एक सिरे से हर चीज के भाव मे पैसे-पैसे, दो-दो पैसे की बढ़ोतरी हो गई। दर्जी, नाई, धोबी, सब्जी पान-वाले तक सबके भाव चढ गए थे। इनमे से जिससे पूछो कि इतना जबर्दस्त एकाएक ही दिन मे कैसे हो गया तो जवाब मिलता कि आर्डर आया था। किसका आर्डर था? यह तो मालूम नही साहब, हमसे इसने कहा, उसने, कहा, किसीने कहा।—बहरहाल जब हर जेब पर असर पडा तो खौलना सामाजिक स्तर पर बढ़ी।

उस दिन शाम के समय मेरे बैठकघर मे हुक्के की महक समाई। बड़े बाबू की उभरी गालो की हड्डियों के नीचे की पिचकी गड्ढ़ैया इस समय बड़ी पानीदार लग रही थीं। उनके क्लीनशेव्ड लबीतरे चेहरे पर खुशियां नाच रही थीं। हुक्का फर्श पर रखकर अधगोरले मुह से हसी बिखेरते हुए, बैठने से पहले बड़े बाबू ने आखो मे पड्यत्रकारी खुशी की चमक के साथ मुझसे निहायत गर्मजोशी से हाथ मिलाया और बोले, "हि.-

हिः-हिः! पडिज्जी, तमाशे में मजा आ रहा है कि नहीं?"

"मजा तो आ रहा है बड़े बाबू, पर ये दाम बढ़ने खुल गए। बहुत बड़ी चुनौती दी है सालों ने।"

"उन्होंने क्या दी है पडिज्जी, आपके चरणों के प्रताप से मेरी प्रैक्टिकल फिलासफी ने दिखाई है।"

"आपने बड़े बाबू?"

"बिलकुल। शतरंज का सिद्धान्त है कि अपनी चाल चलने से पहले दुश्मन की चार चाल पर गौर कर ले। सो हमने सुरेन से कहा कि बेटा, हम दुश्मन पार्टी की चाल चलेंगे, तुम जनता पार्टी की चलो। रात के नौ बजे से ढाई बजे तक हम दोनों ताऊ-भतीजे ने दिमाग-फुड़ौवल की। और दोनों पुच्छों की अफवाहें हमारी ही मशीनरी से चालू हुईं। इनमें भरम भी फैला और जोम भी चढ़ा और जब तक इनका आपसी भरम खुले खुले, तब तक हम इनको छोड़कर अपनी अफवाहें भी चालू करने लगे। नतीजा यह हुआ कि इन्होंने भी सभलकर अपनी बुद्धि का चमत्कार अडर निकालकर दिखाया। वे लोग बड़ी से बड़ी धमकी यही तो दे सकते थे। सो हम अपनी चाल ही इस तरह से चले कि वे यह चाल चलने पर मजबूर हों। आज हर पब्लिक की निगाह में ये नये सिरे से क्रिमिनल साबित हो गए। अब हम इन्हें जब डण्डैंगे तो पब्लिक हमारा साथ देगी।"

"वाह, बड़े बाबू! आप तो गहरे पोलिटीशियन बन गए हैं, देखता हूं।"

"आप गलत देखते हैं। प्रैक्टिकल फिलासफी जिन तीरों को चलाती है वे पोलिटिकल भी हो सकते हैं यह माना, पर यह तो राम की हिस्ट्री की रणनीति है। मेरी अफवाहों के धनुष पर कृष्ण भगवान की पैक्टिकल फिलासफी का तीर चढ़ा हुआ था—राग से मोह और मोह, से बुद्धि भ्रम में फंसती है। सियावर रामचन्द्र की जैशरनम्। समझे आप?" इसके बाद वे इतमीनान से अपनी हुक्का-सेवा में लग गए। हुक्के में हील टकती हुई छोटी मोमजामे की थैली में कोयले और एक बार की तम्बाकू डिबिया में रखकर ही सदा घर से चलते हैं। सो चिमटी से दो कोयले उठाकर चिलम

मे डाले और फेंकने लगे।

इतने में चाय भी आ गई। मैंने पूछा, "अब आगे क्या होगा बड़े बाबू?"

"उसीके लिए आया हूं पडिज्जी। कल इतवार है। सवेरे नौ बजे हम आपके नाम से गाधी शताब्दी समारोह की तैयारी पर सोच-विचार करने के लिए एक सभा बुला रहे है। आस-पास चालीस-पचास सब प्रतिष्ठित-प्रतिष्ठित लोगों को अभी न्यौता भेजने का विचार है। आपकी क्या राय है?"

"आपके दिमाग को मान गया बड़े बाबू। पिकेटिंग का पुराना नैतिक जोश जगाना चाहते है।"

"पुराना नहीं पडिज्जी, वो अब भी एकदम नया है। इज्जत से जीने के लिए वही सत्याग्रह सच्चा सहारा बनेगा। इन्होंने हमारा जीना हराम कर रखा है। तो बस, यह तय रहा कि आपके नाम से नरैनू की बगिया मे मीटिंग होगी। आप ही अध्यक्षता भी करेंगे।"

"ये दोनो बातें एकसाथ नही हो सकतीं।"

"अच्छा तो फिर आपकी अध्यक्षता मे होगी। सभा का ऐलान डाक्टर गक्सेना के नाम से करवा देंगे। दो-चार लिक्चर-फिक्चर होंगे, फिर आप हमारे लड़को को खास तौर पर पिकेटिंग और सत्याग्रह की पुरानी हिष्ट्री सुनाइएगा। फिर प्रस्ताव पास होगा, सुयम सेवक भरती होएगे—घण्टे-भर मे सारे सिस्टम कम्प्लीट और भागडा चालू। बोल महात्मा गाधी की जै।"

दूसरे दिन सब कुछ योजनानुसार हुआ। सभा में तय किया कि पहला मोर्चा मुहल्ले के दोनो पसारियो से लिया जाएगा। लड़कों ने तुरन्त दोनों की दूकानें घेर ली। मैकू और मोहन की दूकानों पर टंगी कट्रोल भावो की सूची पढ़कर सुनाई और कहा कि इसी रेट पर बेचना होगा। दोनों दूकानों पर झड़पा-झड़पी हुई। लड़के बहुत शात और शिष्ट रहे। गाहकों में से बहुतो ने मुह मोड़ लिया। तैश मे आकर मैकू ने अपनी दूकान बढ़ा दी। मोहन ने भी यही किया। लड़के तब भी दूकानों से न हटे। अब यही

रोज़मर्राह

शाम के ६ बजे डाक्टर जम्फ़र किसी दफ्तर के बड़े बाबू की तरह छड़ी हिलाते हुए घर तशरीफ़ लाए। घरवाली ने तुरंत उनकी आवभगत की। चारपाई पर बैठने के पांच मिनट बाद ही एलमुनियम के गिलास में चाय आ गई, सुबह की बासी रोटी का आधा हिस्सा भी नाश्ते के लिए मिला। बच्चे उनके अदब में खामोश। आज अरसे बाद अपने घर में मिस्टर गिरधरगोपाल बनकर प्रतिष्ठा से बैठे थे। आज बरसों की बेकारी के बाद नौकरी का पहला दिन दफ्तर में बिताकर वे घर लौटे थे। उनकी पत्नी-बच्चे सब उन्हें आदर की दृष्टि से देख रहे थे।

मिस्टर गिरधरगोपाल उर्फ डाक्टर जम्फर अपने सौभाग्य को सराहते हुए मन ही मन यह सोच रहे थे कि अगर किसी दिन नौकरी के इस स्वांग का भण्डाफोड़ हो गया तो उनकी घरवाली उन्हें कच्चा ही चबा जाएगी। डा० जम्फर ने अपने दोस्त डा० मक्खनलाल एच० एम० बी०, एच० एम० डी०, बी० एम० डी (कैलिफोर्निया, कलकत्ता, कोयम्बतूर) के साथ-साथ लाटरी का टिकट खरीदने का निश्चय किया था। उसीके लिए घर में झूठ बोले, कहा, "अगर पांच रुपये सरकारी फार्म भरने के लिए होते तो सवा सौ रुपये की नौकरी कल ही मिल जाती।" पत्नी ने इनकी बातों का विश्वास आखिरी ज़ेवर बेचकर रुपये दे दिए। उसी बहाने से यह नौकरी का

बहाना भी पैदा हुआ। रोज घर में शान से सुनाते कि छोटे साहब इतने दिनों में ही उनसे बेहद प्रसन्न हो गए है, कहते हैं, 'बाबू गिरधरगोपाल, आपके जैसी ड्राफ्टिंग तो बड़े-बड़े एम० ए० और बी० ए० भी नहीं कर पाते।' इस प्रकार की बातो से वे घरवाली का हौसला बढ़ाते रहे।

मगर होनव्यता होकर ही रही, बकरा कै दिन अपनी जान की खैर मनाता। सवा महीने के लिए उनकी जन्मकुण्डली मे कोई शुभ ग्रह उदय हो गया था, जिसकी बदौलत उन्हें वह सम्मान मिल गया जो घर-घर में कमाऊ मर्दो को सदा प्राप्त होता है। मगर एक महीना बीत जाने पर जब तनख्वाह का दिन आया तो गिरधर बाबू ने बहाना बताया कि बड़े साहब दौरे पर गए हैं, तीन-चार दिन मे आ जाएंगे। तब पे शीट तैयार होगी। तीन-चार दिन बाद फिर घर मे तनख्वाह का तक़ाज़ा हुआ, तब डा० जम्फर ने बतलाया कि बडे साहब दिल्ली के दौरे मे गए थे, वहा से उन्हें कालेपानी की नई बस्ती का दौरा करने के लिए भेज दिया गया है।

"अरे कालेपानी जाएं, चाहे फासी चढ़ें, मगर बाबू लोगो की तनखाह तो दे जाते।" गिरधर की घरवाली गरजी। बेचारी ने तनख्वाह आने की आशा मे अपने बचे-खुचे कान के बुन्दे और सोने की चूड़ी खुशी-खुशी बेच-कर महीने-भर सबका राशन चलाया था, मगर अब तो तली भड़ गई थी। कल कैसे बीतेगा, यह भी समझ मे नहीं आता था। तनख्वाह का तकाज़ा तीव्र होने लगा। डा० जम्फर रोज नया-नया लतीफा सुना देते और हस्बमामूल साढ़े नौ बजे दफ्तर के बाबुओं की तरह तैयार होकर घर से चलकर डा० मक्खनलाल के मतब मे जाकर बैठ जाते।

डा० जम्फर भी पैदाइशी बेकार है। दो बार नौकरिया पाई भी, मगर अपने अकड़फूं मिज़ाज की वजह से महीने-दो महीने से अधिक वे चला न पाए। उनका नाम वैसे तो बाबू गिरधरगोपाल है, मगर स्कूली ज़माने से ही वे न जाने किस तरह डा० जम्फर के नाम से प्रसिद्ध हो गए हैं। डा० जम्फर स्कूल मे कई पीढ़ियों के क्लास-फैलो रह चुके है। हर दर्जे मे दो-तीन सालो तक रुक-रुककर पढाई पूरी करने का मानो उनका अटल

दाग रहा। पढ़ने में कमजोर थे, इसीलिए रावर्ट क्लैक और मेकमटन क की किताबें पढ़ने का शौक तेज हो गया था। इसके कद के, लंबी याहकाम के सगे भाई डा० जम्फर की कसरती नहीं थे, मगर चाल और डा पहलवानी ही था। उनका यह ख्याल था कि वे स्कूल के नामी मर-नाओं में से एक थे। उनका यह भी ख्याल था कि रावर्ट क्लैक की जासूसी कनाओं की मदद से उनकी अंग्रेजी खालिस अंग्रेजों जैसी हो गई थी। स्कूल के मास्टर क्या हैड मास्टर तक उनके मुकाबले में अंग्रेजी नहीं बोल सकते थे। बहरहाल स्कूल में उनकी उपस्थिति में दर्जा तीन से लेकर दर्जा दस तक के लड़कों, मास्टरों, चपरासियों तक के लिए दिन-भर वेरायटी प्रोग्राम चला करता था। किसी घंटे में ये मुर्गा बने क्लास रूम के दरवाजे के पास कोने में बैठे नजर आते; किसीमें नीचेवाली बेंच पर झण्डा ऐसे खड़े हुए। इनको सारा जमाना डा० जम्फर के नाम से चिढ़ाता था और ये अंग्रेजी में नौ-नौ बांस उछला करते थे।

डा० जम्फर के पिता पर लड़की की शादी का कर्ज था, सो ये तीन हजार में एक बेटी के बाप के हाथ बेच दिए गए।

डा० जम्फर का ख्याल है कि उनकी घरवाली अभागी है और उनके प्रति उनकी घरवाली के जो खयालात हैं वह आए दिन पास-पड़ोसवालों पर प्रकट होते ही रहते हैं। डाक्टर अगर अकड़ में बीस चढ़ते हैं, तो डाक्टरानी छब्बीस होकर बरसती हैं।

एक डाक्टर मक्खनलाल का सहारा है। वो भी उनके जैसे ही नसी के मारे हैं। रोज-रोज फर्लीवर पलटते रहने की आदत से राह चल मुहल्लेवालों ने उनका भी नया नामकरण हो गया है। डा० जम्फर दोस्त डाक्टर फर्लीवरपलट के नाम से मशहूर हो गए हैं। दोनों ही जम

... । है मगर जीने को मजबूर है।

... ने करीब छह महीने पहले डाक्टर मक्खनलाल का कम्पाउण्डर, ... महीनों से वेतन नहीं मिला था, उनका स्टेथेस्कोप और बहुत-सी

दवाएं चुराकर चला गया था। पुराने साइनबोर्ड से उनकी डिगरियां घिस गई थीं। डाक्टर मक्खनलाल बगैर हथियार के सिपाही बने दिन-रात रोया करते थे, "क्या करें जनाब, किस्मत का खेल है। बतलाइए, स्टेथेस्कोप के बिना और दवाओं के बिना कोई डाक्टर कैसे प्रैक्टिस कर सकता है। अब साइनबोर्ड पर डिगरियां भी नहीं रहीं, फिर पब्लिक कैसे मेरी योग्यता समझ पाएगी? कागज में लिखकर चिपकाता हूं तो मुहल्लेवाले लड़के ऐसे शैतान हैं कि रोज फाड़ डालते हैं। अनाप-शनाप-लिखकर मेरी प्रैस्टिज बिगाड़ते हैं।"

एक दिन जब घर से तनख्वाह न पानेवाले बाबू की तरह शान कायम रखने की कोशिश के बावजूद मुंह लटकाए डाक्टर जम्फर गली-दूकानवालों की फब्तियां सुनते, अंग्रेज़ी में कभी-कभी बमकते हुए, डाक्टर फर्नीचरपलट के मतब पहुंचे तो दोनों मित्रों में दुख-सुख होने लगा।

डाक्टर फर्नीचरपलट ने जब अपनी आम शिकायतों का शतचण्डी पाठ दुहरा लिया तो डाक्टर जम्फर भी गहरी ठण्डी सांस निकालकर बोले, "हां यार, कभी-कभी तो बकौल कसे—'जी में आता है लगा दूं आग कोहेनूर में, फिर खयाल आता है भूसा बेवतन हो जाएगा।'"

दोनों डाक्टरों ने साथ-साथ यह शेर पढ़ा, गोया रोजमर्राह का एक और कार्यक्रम पूरा हुआ।

डाक्टर जम्फर माथे पर बल डालकर बोले, "कुछ नहीं, दिस वर्ल्ड [illegible] आल माया एण्ड मिथ्या, फाल्स, बोगस। सो बैटर लीव दि वर्ल्ड, [illegible]टर। आओ, हम-तुम बैराग ले लें। अब पैंतालीस-छियालीस की उमर [illegible]ई। बी कैन विकम सेन्ट।"

डाक्टर फर्नीचरपलट ने रोज की तरह इस प्रश्न का जवाब दिया, [illegible]ा, दोस्त, अब तो मेरे दिल में यही लगन है। बस, मैंने तो अपनी तकदीर [illegible] अब सिरिफ छै महीने की मोहलत और दी है कि चेत, वरना मक्खन-[illegible] बैराग लेता है।'

फिर शादी की चर्चा चली, सपने बंधे, "अरे कभी हमारी बेरी में भी

लगेंगे।" इस कहावत के साथ एक दैनिक नियम और गया।

इस तरह बातों में हमेशा की तरह दिन बीता, रात आई। दोनों डाक्टर साथ-साथ चले—डाक्टर फर्नीचरपलट पतलून में हाथ डालकर और डाक्टर जम्फर छड़ी हिलाते हुए।

घर के दरवाज़े पर पहुंचते ही डाक्टर जम्फर अपनी तमाम अक्ल टटोरने लगे। अकड़कर आवाज़ दी, "कुण्डी खोलो।"

दरवाज़ा खुलते ही घरवाली बरस पड़ी, "क्यों जी, तुम झूठ बोलते हो। तुमने पांच रुपये ठगने के लिए इतना बड़ा जाल रचा? मुझे सब मालूम हो गया है, तुम डाक्टर फर्नीचरपलट के यहां दिन-भर बैठे रहते हो···।"

"यू आर रिमार्केटिंग मी, सन्नो की अम्मा। यू काल माई फ्रैण्ड बोगस नेम्स। मैं आज ही बैराग ले लूगा।"

खूब गर्मागर्मी हुई। मुहल्ले-भर ने जाना। लड़ाई यहां तक हुई डाक्टर जम्फर घर से निकल आए। घरवाली ने तेहे में फटाफट दरवाज़ा बन्द कर लिए।

कहीं और जगह न पाकर डाक्टर जम्फर ने डाक्टर मक्खनलाल के मतब के चबूतरे पर एक रात का कड़कड़ाता हुआ सन्यास लिया, फिर सवेरे बेशर्म बनकर घर पहुंच गए। और अब तो यह बेशर्मी भी रोज़मर्रा बन चुकी है।

माया मोह

समाज, सभा, संघ, समिति, मण्डल आदि शब्द यों तो सैकडो सदियों से हमारी भाषा मे चले आ रहे है, पर जैसे आज के जमाने मे चले वैसे तो अच्छी से अच्छी फर्म के जूते भी कभी नहीं चले। जहा पोलिटिकल या कल्चरल रंग के चार यार जुटे नही कि यूनियन, संघ, मण्डल या समाज बनते देर नही लगती। शास्त्रों की बात सच साबित हुई, कलियुग मे सघ ही शक्ति है। यह सिद्धान्त कवि और रवि के द्वारा कभी न रौंदी जाने-वाली गलियों मे भी अब अपना जलवा दिखलाने लगा है। पन्नो की अम्मा के घर चार बडी बूढियें बैठकर जब रम-बतियाव से लेकर भजन-कीर्तन तक करने लगीं तो बाबू मिट्ठनलाल ठेकेदार की धर्मपत्नी श्रीमती श्यामकली देवी ने उसका नाम 'भक्तिन समाज' रख दिया।

इस भक्तिन-समाज में हर औरत वाकई उम्र मे बूढी ही हो, सो बात नहीं। खुद श्रीमती श्यामकली देवी ने अभी अधिक से अधिक अडतीस-उन्तालीस की ढैया छुई होगी। कित्तो की विधवा बुआ तो अभी पूरे तीस की भी नही हुई। उम्र की कोई कैद नही, केवल सबका यही मान लेना ही जरूरी है कि मायामोह जंजाल है और मुक्ति भगवान के चरणो मे मिलती है।

जाड़ो मे इस भक्तिन-समाज के अधिवेशन पन्नो की अम्मा के घर की

ते हैं। ऐसे ही एक दिन की बात है, एक-डेढ़ बजे-न
ाज जुड़ गया। पिछले दिन श्रीमती श्यामकली देवी के
ड़ा था। उसीके चर्चे होने लगे—बड़ा सामान आया है
या, हीरे की अंगूठी, सोने के बटन, सोने की घड़ी, रेडियो
इतर-फुलेल, न जाने कितना कुछ आया है। लड़की
इकलौती है, मगर कानी है। रुपये के लोभ-मोह में
े लड़के के गले में ढोल मढ़ दिया है।
ी की बारीकियों पर पहुंचने ही लगी थी कि श्यामकली
। उन्हें देखकर शम्मो की महतारी बोली, "अरे रानी!
न तो तुमरे हियां बड़ा भारी टीका आया है, बड़ी धूम है

ारकर चटाई पर बैठते हुए श्यामकली देवी नाक पर
ी, "उह।, हमें तो सच्ची मानना शम्मो की महतारी,
से इत्ता-सा भी माया-मोह नाहीं रह गया है। मैं तो बहू
ी उसने सब कुछ दिया।"
है, पर बुरा न मानना स्यामो, मैंने सुना है कि लड़की
की अम्मा ने देर से दबा-ढका एटम बम आखिर फोड़
न-समाज की सदस्याएं सुनकर श्यामकली देवी की नजरें
नैन-चमकौवल करने लगीं।
कली के दमकदार चेहरे की जोत एक बार भकभकाई,
ी मापकर टड़े-मीठे स्वर में समझाकर बोली, "कानी
पना में एक आंख चली गई थी उसकी, तो उसके बाप
ी करके बिजली की आंख लगवा दी है। कहे है, कमरा
है मेरी बहू की। असली आंखों में ज्यादा रोशनी होवे

न हुई मैम-बिजली का ढहा हो गई निगोड़ी। काहे मेरा
ाब्न के दिन।" शम्मो की महतारी बोली नहीं, बल्कि

कहा, "मेरा मम्मो कल बनाय रहा था पन्नो की अम्मां, पत्थर की आंख होती है। सोई इसकी बहू को भी लगी है। पर उससे क्या, कानी तो कानी ही कहलाएगी।"

"अरे उसकी एक आंख में भगवान की दी हुई रोशनी है और दूसरी में बाप के लाखों की माया चमकती है। भाभी उसी माया मे तो लुभाई हैं।" क्त्तिो की बुआ ने कहा।

"मैं काहे रीझूगी किसीके लाख-किरोड पे। मेरा तो चित्त ही हट गया है मायामोह से। अरे आज रामदेई महराजिन नहीं आई।" श्याम-कली देवी ने यह कह चट से बात का रुख मोड़ा।

"उसकी सास बेचारी बौहत बिमार है आजकल। अब-तब ही लगी है उसकी। महराजिन बिचारी बडी रोवे है।"

पन्नो की अम्मा से महाराजिन की सास के मरणशय्या पर होने का समाचार सुनकर श्यामकली को महराजिन के भाग्य पर ईर्ष्या हुई। एक उनकी सास हैं कि मरती ही नहीं हैं। महराजिन के बौडमपन का मज़ाक उड़ाते हुए कहा, "अरे सास के मरने का क्या मोह ? राम, राम। इत्ती-इत्ती कथा—भागवत सुनके भी महराजिन को ज्ञान नहीं उपजा मरा। सच्ची पूछो तो उनकी सास बिचारी बड़ी पुन्यातमा है कि इत्ती जल्दी से मुकुत हुई जाती है। और एक हमारी सास है निगोडी, कौए के पर खाके आई है, न मरे न मज़ा छोड़े, उह !"

अपनी सास से श्यामकली देवी खार खाती हैं। पति अपनी मा को बहुत मानते है। इसलिए बहू को उनसे दबना पड़ता है। सास के रहते उनका मान-सम्मान उसी तरह घट जाता है, जैसे मन्त्री के आगे डिप्टी मन्त्री का। इसीसे उन्हें जलन है।"

"पन्नो की अम्मा बोली, "अरे क्यों कोसती हो अपनी सास को, सीधी गय है बेचारी।"

"गाय नहीं वो है—हां-नहीं-तो। अरे मुख में राम बगल में छुरी निगोडी ! भला बताओ, घर में इत्ता धन आया, किरोड़पती की इकलौती

बिटिया है, सो कहती है कि कानी है, कानी है। अरे हम पूछत हैं कि रूप का क्या देखना, रूप तो मायामोह है।"

"और धन भी तो मायामोह है।" झम्मो की महतारी ने माथा मटकाते हुए कहा।

अपने जले पर नमक पड़ने ही श्रीमती श्यामकली देवी तिलमिला उठीं, गरजकर कहा, "झम्मो की महतारी, अपना बदन देखके दूसरों को उघाड़ा कहियो, समझीं। सूप बोले तो बोले, चलनी क्या बोले जिनमें बहत्तर छेद! ऐ, मैं तो आप ही मायामोह से दूर हूं। हां, बाल-बच्चन का भला-बुरा देखना ही पड़ता है। उन्हें अभी थोड़े ज्ञान उपजा है जो मेरी जैसी अटल भक्ती पा सकें। और फिर गीताजी में लिखा भी है—"

"कौन-सी गीता में लिखा है री, जरा मुझे भी तो बतला।" झम्मो की महतारी भी तीखी पड़ी।

पन्नो की अम्मा ने मुस्कराकर कहा, "ठीक ही तो कहत हैं बिचारी। गीता में लिखा है कि करम करो, फल न देखो। सो इन्होंने फल में तो पराये घर की लच्छमी ताकी और करम की कानी अपने बेटे के सिर मढ़ दी।"

औरतें हंस पड़ीं, श्यामकली देवी का मुंह फूल गया। बोलीं, "लड़का मेरा है, मैं चाहे जो करूं।"

"अरे कौन किसका लड़का और कौन किसकी लड़की, सब मायामोह है बहना।" कित्तो की बुआ ने कहते हुए टांगें पसार दीं।

"हां-हां, तू रांड-बेवा! तू तो ऐसा कहेगी ही। अभी तेरे आगे बाल-बच्चे होते तो देखती मैं भी।"

सुनकर कित्तो की बुआ तेज पड़ी, कहा, "मैं तुम्हारी तरियो झूठा ज्ञान नहीं बघारती स्यामो भाभी। मेरी भगती भगवान के चरनों में एकदम अटल है।"

पन्नो की अम्मा ने देखा कि अब श्यामकली देवी का पटाखा जोर से फूटेगा तो पहले ही ठंडी-ठंडी बोल पड़ीं, "अरे काहे का झगड़ा और कैसी

बात। दिन मे दो घड़ी भजन-सत्सग होवे है उसमे भी लडाई-झगडा मरा—राम-राम।"

झम्मो की महतारी ने तुरत समर्थन किया, "ठीक कहती हो पन्नो की अम्मा। और देखो, ये लड़ाई की जड किस्तो की बुआ और सामकली ही हैगी। छोटी उमर की लडकियन-बहुअन का मायामोह कहीं छूट सकता है भला जो ज्ञान-चर्चा मे जी लगाए।"

श्रीमती श्यामकली देवी को छोटी उम्र की लडकी-बहू कहना उनके कलेजे मे मुक्का मारने के समान था। भावी सास बनकर वे पुरखिन मानी जाने के लिए अब मन ही मन तडप रही है। इसलिए झम्मो की महतारी के यह कहते ही सबको कोसती-काटती हुई वे भडककर उठने लगी। पन्नो की अम्मा ने उनका हाथ पकडकर बैठाया। कहा, "आपुस की बातो का बुरा न मानो श्यामो। देखो बहना, घट-घट मे वही रामरमैया रमता है।"

"हा बहू, मोह की दिरिस्टी हटा के उसे देख बेटा।" झम्मो की महतारी ने भगवान बुद्ध की तरह सुमिरनी वाला हाथ ऊंचा उठाकर कहा।

"अरे मैंने तो मोह का पर्दा आपी अपनी दिरिस्टी से उठा दिया हैगा।" श्यामकली बैठकर बोलीं।

किस्तो की बुआ ने मीठी मार मारी, बोली, "इसकी तो मै भी गवाही दूगी। भाभी बिचारी ने तो मोह का पर्दा हटाकर के घटघट-व्यापी राम को अपनी कानी बहू मे भी देख लिया है।"

किस्तो की बुआ के रिमार्क पर दोनो बुढ़िया हस पड़ीं। श्यामकली देवी ने भांप लिया कि इस समय वे पार नहीं पा सकेंगी। चट से भोली बनकर बोली, "तुम तो हंसी मे कहो हो, पर मैंने तो बहना, सच्ची मानना, राम ही देखे उसमे। पैसा नहीं देखा उसका। पैसे-टके का मोह तो मेरी सास को ही है। बुढ़ापे मे भी ज्ञान नहीं उपजा-भरा, उंह ! अच्छा, आओ चाची, थोड़ा कीर्तन कर लें, मन सुद्ध हो।"

मन शुद्ध करने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हुआ। एक घेरे में बैठकर आंखें मींचकर तालियां बजाते हुए चारों पुरखिनों ने कीर्तन शुरू किया। "सीताराम, राधेश्याम" करते तालियों और स्वरों होड़ लग गई। ऐसा लगा कि अपनी तालियों की आवाज के बासों पर तीलियां लगाकर ये भक्तिन-समाज सीधा वैकुण्ठ में ही जाएगा। परन्तु इसी बीच झम्मो की महतारी की आंखें खुल गईं। उन्होंने देखा कि छत के मुंडेरे पर एक चील अपनी चोंच में एक चमकता पत्थर दबाए बैठी है। फौरन उनका ध्यान गया कि हो-न-हो ये पारस पत्थर का टुकड़ा है। उन्होंने सदा से सुन रक्खा था कि चील अपने बच्चों की आंखें खोलने के लिए पारस पत्थर लाती है और फिर पहाड़ पर रख आती है। झम्मो की महतारी का कलेजा उछलने लगा कि जो ये पारस पत्थर मिल जाए तो सोने का ढेर लग जाए।

स्वर्ग-मोह में बंधी झम्मो की महतारी के सीताराम-राधेश्याम के बल-इमेरान में पन्नो की अम्मा ने जोड़ा, "जल्दी से पराठे का टुकड़ा लाओ। ये देखो, चील की चोंच में पारस पत्थर चमक रहा हैगा।"

पारस पत्थर का नाम सुनते ही सबके ध्यान से भगवान निकल गए और सोना चमक उठा। पन्नो की अम्मा पराठा लाने लपकीं, श्रीमती श्यामकली देवी के नेतृत्व में भक्तिन-समाज 'सीताराम-राधेश्याम' को भूल 'चील-चिल्होर अंडे-बच्चे वाली आओ, आओ।' की गुहार लगाने लगा। बड़े पराठे के टुकड़े उछाले, बड़ी-बड़ी प्रार्थनाएं कीं, आसमान पर बड़ी चीलें मंडराईं पर पारस पत्थर चील की चोंच से छत पर न टपकना था, सो न टपका।

निराश भक्तिन-समाज की अनिर्वाचित अध्यक्ष झम्मो की महतारी ने निःश्वास छोड़कर कहा, "राम के भजन में ये बच्चों का मायामोह पुन आता नासपीटा। राम-राम! पर पारस पत्थर हाथ आकर भी चला गया। हाय राम!"

यह सब मायामोह और वैराग्य भाव भक्तिन-समाज में रोज ही उतरा-तिरता रहता है।

पर निंदा

आज 'घूंघट चदरिया ब्रांड' औरतों की शीतला अष्टमी थी। सवेरे से झुंड की झुंड औरतें देवी पूजने के लिए जा रही थीं।

इन औरतों के चलने का भी एक अंदाज होता है, जिसे बयान कर सकना साधारण व्यक्तियों का काम नहीं, उसके लिए कोई महाकवि ही चाहिए। फिर भी अगर आपने टपकते डोल से गली-सड़कों पर बनती पानी की लकीर देखी होगी तो शायद अनुमान कर ले जाएगे—ये ठीक वैसे ही एक झोंक दायें और एक झोंक बायें लहराती हुई चलती हैं। इस चाल की अगर एक भी औरत गली में से गुजरती हो तो शरीफ आदमियों के पैर इस सोच में ही बंध जाते हैं कि घड़ी के पेंडुलमनुमा इस फेयर सेक्स के बायें से कतरा के निकलें या दायें से। इस प्रकार जब एक में यह हाल होता है तो जहां अनेक रूप-स्वरूप चदरिया ब्रांड भेड-झुंड गुजर रहा हो वहां का भला क्या कहना और पूछना ? कीचट मैली धोती और चद्दरें, अबरक-चमकती रंगीन धोतियां और सिल्कन चदरें, नई बहुओं की गोटे-पट्टेदार रंगीन चूनरें गली-सड़क को यहां से वहां तक छेककर अपनी छटा बिखेर रही थीं। बड़े-बड़े हीरोनुमा हेकड़बाज, जो गलियों में अपनी साइकिल सवारी के पैंतरे दिखलाए बिना दफ्तर-कालेज जाना शान के खिलाफ समझते हैं, औरतों की इस बाढ़ से घबराकर किनारे दब गए, मोटरों-

स्त्रियों की बातें धीमी हो गईं। वरना चूं-चूं, भां-भां-भरा मजमा था।

ठेकेदार साहब की धर्मपत्नी श्रीमती रामकली देवी अपनी सधवानि घराने की पत्थर-आग वाली नई बहू को साथ लेके देवी पुजाने गई थीं।

दोपहर को भक्तिन-समाज में सबसे पहले इन्हीं की चर्चा चली। झम्मो की महतारी के घर पर यह भक्तिन-समाज जुड़ता है। गर्मी के दिन हैं सो नीचे दालान में ही बैठक होने लगी है।

सबसे पहले लटकन की अम्मा आईं। इनका भारी शरीर दोनों होंठों के बीच ऊपर का एक बचा हुआ दांत, बड़ी-बड़ी आंखें और वजेजन के कारण चौड़ा कपाल देखनेवाले को पहली ही दृष्टि में आकर्षित करते हैं। बैठते ही हाथ में पंखा उठा, उसे एक बार यों ही सा डुलाकर झम्मो की महतारी से बोलीं, "आज तो तुमरी ठेकेदारिन अपनी कानी बहू को लैके सीतला पूजन गई रही।"

सेम के बिये छीलते हुए कर्मलीन मुद्रा में झम्मो की महतारी ने कहा, "हां, हां, भाई, पहली अष्टमी है, पुजावेंगी नहीं। अपनी सास को भी लै गई रही कि नहीं ?"

"अरे, सास को क्या ले जायगी निगोड़ी !" कह एक बार दरवाजे की ओर दृष्टि डाल, फिर झुककर झम्मो की महतारी से लटकन की अम्मा ने कहा, "एक नंबर की हर्राफा औरत हैगी ये तुम्हारी स्यामो। परसों इसकी सास कीर्तन में मेरे से ऐसी बातें कर गई कि सुनके कानों पे हाथ धर लिए मैंने तो। राम-राम ! औरत है कि डायन—और ऊपर से भक्तिन बनती है, छेः !" लटकन की अम्मा ने नाक चढ़ाकर मुंह फेर लिया।

झम्मो की महतारी का रस अब जागा। सिर उठाकर बोलीं, "अरे क्या-क्या बातें भईं, तनी हमें भी तो सुनाओ।"

"अरे बहना, क्या धरा हैगा परनिंदा करने में ? मैंने तो, सच्ची मानो, उस दिन जो यहां सबके साथ परतिज्ञा करी हैगी तो उसे आज तलक निभाया भी हैगा। तुम गवाह हो, झम्मो की महतारी, मैंने आज तलक

किसीकी परनिंदा नही करी।"

"अरे तो मैंने ही कब की किसीकी परनिंदा। पर यह तो आपुस की बात है, मैं किसीसे कहने थोड़े ही जाऊंगी।"

"अरे, मार के भौंक रही थी कि खाने के लिए तरसाती हैगी। अभी लड़के की समराल से इत्ती-इत्ती मिठाई-पकवान आई—कहत रही कि जो जरा-सी कनकी से भी झूठमूठ को होठ जुठारें होयं तो जो कहो सो कसम खाय जायं। ठेकेदार साहब पूछें कि अम्मा, पोते की ससराल की मिठाई खाई तो आप हंस के कहैं कि हां भैया, इत्ती खाई कि खट्टी डकारें आय रही —ऐसी लायक हैगी।"

"अरे कौन लायक हैगी चाची ?" श्रीमती श्यामकली देवी ने प्रवेश करते हुए पूछा। लटकन की अम्मां उन्हें देखकर एक बार तो झपकाई और फिर अपने को संभालकर बोली, "कोई नही बहुरिया, हमरे राजीउ के एक दोम की अम्मां की बात रही—बडी लायक हैंगी, बिचारी न कभी किसीकी परनिंदा करै, न सुनै।"

भम्मो की महतारी ने अपनी सहेली की बात बनाने की कला पर बारीक मुसकान मारी। श्यामकली देवी चदरिया उतार उसे तहाकर रखते हुए बोलीं, "अरे चाची, मुकुती तौ बस इसैं मैं है, न परनिंदा करै न सुनै। अब आजै देखौ, हम सीतला पूजन गए रहे, इत्ती-इत्ती वातैं किसोर बाबू की घरवाली करत रही कि हमरे तौ कान, सच्ची मानौ पक गए। हम कहैं कि हे राम ! आज जाने किसका मुह देख के उठे रहे कि परनिंदा सुनने को मिल रही हैगी। लाला रामसरूप के हिया की ऐसी-ऐसी बुराई कहिन हमरे सामने कि क्या बतावै।"

सेम के दिये उसी तन्मयता से छीलते हुए भम्मो की महतारी ने कहा, "हा रानी, क्या फंदा हैगा किसीकी परनिंदा करन मे—इसीसे तौ माया-मोह व्यापत हैगा।"

लटकन की अम्मां बोली, "हमने तो भैया जब से परतिज्ञा करी तब से नेम बनाय लिया कि कोई हमरे आगे परनिंदा करैगा तो हाथ जोड के

बोली, "चाहे कुछ कह लेव चाची, पर किसोर की घरवाली का चरित्तर सुद्ध हैगा।"

"होयगा रानी, हमैं क्या, वाकी इत्ता तो हम बी कहैंगे कि कित्तो के वाप के पीछे वहुत-वहुत पड़ी रही किसोर की घरवाली। हम अपनी आंखिन से देखा। ऊ तो कहो कित्तो का वाप विचारा वडा नेक और सरीफ हैगा।" झम्मो की महतारी ने कहा।

श्रीमती श्यामकली देवी यों मद-मद मुसकाईं मानो कोई ज्ञानी-महात्मा अज्ञानियों के अज्ञान पर हंस रहा हो; फौरन बोली, "यही तो बात हैगी झम्मो की महतारी, किसीकी परनिंदा करन से पहले ई समझ लेना चाहिए कि फलानी ने काहे ऐसा किया। अरे कित्तो के वाप बक के मनीजर हैगे और किसोर की घरवाली के यहा बक की कुड़की आवै का रही। फिर क्या करै विचारी। सास जो हैगी सो सारी जमा-पूंजी बटोर के अपने तले दावे बैठी हैगी और किसोर जो कुछ रहा सो मटियामेट करके मर गए। ई बिचारी औरत जात, अपने छोटे-छोटे बच्चन का कैसे पालै ? बक की कुर्की रुकावै खातिर खुसामद करै जात रही विचारी, सो कित्तो की बुआ ई तोहमत लगाय दिहिन। उन्हैं तो जनती ही होगी कि परनिंदा न करैं तो खाना न पचै।"

"हमने सब सुन लिया भाबी। हमरी परनिंदा करन के पहिले तुम अपनी गुइया की करतूतैं जान लेती तो इत्ती वेला यें पाप न करती।"

पाप शब्द से श्रीमती श्यामकली देवी भड़क उठीं, बोली, "कित्तो की बुआ, हमरे आगे कोई गगाजली उठाय के भला ई बताय तो दे कि हमने कब पाप किया, तो उनकी टागों के रस्ते में निकल जाय।"

"अरे हम अबी बताय रहे हैं, औ हमरा मन तो गगाजल हैगा, तुमने अभी-अभी हमरी परनिंदा करी। दहलीज में आउत-आउत जैसे ही किसोर की घरवाली का नाम सुना, अपना नाम सुना, तैसे ही हम वहीं ठिठक के खड़ी हुई गईं।"

"छिपके किसीकी बात सुनना घोर पाप हैगा।" श्यामकली देवी

कह देंगे कि भई पाप में न डालो हमें।"

थोड़ी सी श्यामकली देवी के पेट में किशोर की घरवाली द्वारा सुनाई गई रामशरन के घर की निंदा बेचारे अब-भी उफन रही थी, लेकिन पर-निंदा के गाजे बजाने हुए पाप के कारण उन्हें अपनी बात कहने के लिए चूंकि कोई ढंग नहीं सूझ रहा था, इसलिए बात पलटकर बोलीं, "आज तो चाची तुम भी गई रहीं अपने दोहते की बहू को लै के मीनता पुजाने।"

"सो तो रानी जाना ही पड़त हैगा। तुम आगे-आगे किशोर की घर-वाली के साथ जात रहीं। हमने देखा रहा। एक बार जिउ भया कि तुम्हें पुकारें, पर किशोर की बहुरिया में ये आदत बड़ी खराब हैगी कि सबकी परनिंदा करत है। अपना खोंट देखत नाहीं कि कैसी नखरी चालबाज हैगी। किसो की बुआ आवें तो उससे पूछना। उसके भाई को फंसाया रहा एक बार उसने। वो तो कहो कि फंसा नहीं बिचारा।"

श्यामकली देवी को किशोर की घरवाली की निंदा अच्छी न लगी क्योंकि उसके साथ आजकल इनकी बड़ी घनी-घना है। बोलीं, "भई हमें तो चाची, किसीकी परनिंदा करन आउत नहीं हैगी, औ सच्ची बात तो ये है कि उसकी सास उसको बदनाम करत फिरत है।"

लटकन की बुआ श्यामो की बात काटकर चिढ़कर टांग पसारते हुए बोलीं, "हा-हा रानी, दुइयै की तो सास खराब हैंगी निगोड़ी—एक तुमरी, एक उसकी।"

"हम तो अपनी सास की कभी बुराई नईं करत हैंगी। हमें तो भगवान की दया से तुमरी सब लोगन की किरपा से ऐसे धरम के सस्कार मिले कि न माया मोह ब्यापै न किसीकी परनिंदा करें, न किसी के लराई-झगरे मे परें। ई सब हमरी सास करत हैंगी। हे राम, ऐसी-ऐसी परनिंदा करत हैंगी सबकी कि क्या बतावें। किसोर की अम्मां का भी यही हाल हैगा।"

"हां भाई, ऊ अपनी पतोहू का रडीपना नाही देख सकत हैंगी तौ बुरी है।" लटकन की अम्मा ने कहा।

अपनी सहेली की यह निंदा श्रीमती श्यामकली देवी को अखर गई।

बोली, "चाहे कुछ वह लेव चाची, पर किसोर की घरवाली का चरित्तर सुद्द हैगा।"

"होयगा रानी, हमें क्या, वाकी इत्ता तो हम बी कहेंगे कि कित्तो के बाप के पीछे बहुत-बहुत पड़ी रही किसोर की घरवाली। हम अपनी आंखिन से देखा। ऊ तौ कहो कित्तो का बाप बिचारा बड़ा नेक और सरीफ हैगा।" झम्मो की महतारी ने कहा।

श्रीमती श्यामकली देवी यों मंद-मंद मुसकराई मानो कोई ज्ञानी-महात्मा अज्ञानियों के अज्ञान पर हंस रहा हो; फौरन बोली, "यही तौ बात हैगी झम्मो की महतारी, किसीकी परनिंदा करन से पहले ई समझ लेना चाहिए कि फलानी ने काहे ऐसा किया। अरे कित्तो के बाप बक के मनीजर हैंगे और किसोर की घरवाली के यहा बक की कुड़की आवै का रही। फिर क्या करें बिचारी। साम जो हैगी सो सारी जमा-पूंजी बटोर के अपने तले दाबे बैठी हैगी और किसोर जो कुछ रहा सो मटियामेट करके मर गए। ई बिचारी औरत जात, अपने छोटे-छोटे बच्चन का कैसे पालै? बक की कुर्की रुकावै खातिर खुसामद करै जात रही बिचारी, सो कित्तो की बुआ ई तोहमत लगाय दिहिन। उन्हे तो जनतौ ही होगो कि परनिंदा न करें तो खाना न पचै।"

"हमने सब सुन लिया भाबी। हमरी परनिंदा करन के पहिले तुम अपनी पुइया की करतूतै जान लेती तो इत्ती बेला ये पाप न करती।"

पाप शब्द से श्रीमती श्यामकली देवी भड़क उठीं, बोली, "कित्तो की बुआ, हमरे आगे कोई गंगाजली उठाय के भला ई बताय तो दे कि हमने कब पाप किया, तो उसकी टांगों के रस्ते मे निकल जाय।"

"अरे हम अबी बताय रहे हैं, औ हमरा मन तौ गंगाजल हैगा, तुमने अभी-अभी हमरी परनिंदा करी। दहलीज मे आउत-आउत जैसे ही किसोर की घरवाली का नाम सुना, अपना नाम सुना, तैसे ही हम वही ठिठक के खड़ी हुई गई।"

"छिपके किसीकी बात सुनना घोर पाप हैगा।" श्यामकली देवी

तमककर बोलीं।

"और पीठ पीछे किसीकी परनिंदा करना भी घोर पाप हैगा।" कित्तो की बुआ ने तड़पकर जवाब दिया, और फिर दोनों ओर से तड़पा-तड़पी चली।

"तौ हमने कब किसीकी निंदा की?"

"तो हमने ही कब किसीकी बात छिप के सुनी?"

"तुमने तो अच्छी सुनी, तुम तौ सरासर अपने मूंह से कह गई।"

"औ तुमने भी पीठ पीछे हमरी परनिंदा की, हमने सरासर अपने *कानों से सुनी औ यहां इतनी जनी गवाह हैं।"*

"ई परनिंदा थोड़े रही, हम तो सच्ची बात कहा। किसोर की घर-वाली बिचारी बुरे दिनन के फेर मे तुमरी खुमामद करन गई और तुमने *उसको झूठी तोहमत लगाय दिया।"*

"हमें झूठी तोहमत से क्या मतलब। अरे हम तो उसके हाथ की चिट्ठी दिखाय दें भैया के नाम। हमारी भाभी के पास धरी भई हैगी। और कहो *तो गजबी मालिन से भी पुछाय दें। हमरे भाभी-भैया के बीच मैं लड़ाई* कराउन खातिर ई हमरे घर की चौखट में सेही के कांटे गाड़न आई रही। ऊ तौ कहो गजबी ने देख लिया। डांटा तौ भागी। फिर गजबी ने टटोल के *कांटे निकाले औ घर में सायके हम लोगन को दिखाए।"*

कित्तो की बुआ के इस वक्तव्य से श्रीमती श्यामकली देवी कुछ दब-सी गई, इसलिए अपना पल्ला झाड़ती हुई बोलीं, "होयगा। चाची, *सच्ची मानना, हमरा तौ किसीकी परनिंदा मैं रमें नहीं है। किसोर की* घरवाली बिचारी बिपत की मारी रहीसो जो उसने कहा, हमने मान लिया। हमरा तो भैया, सच्चा-सीधा मन हैगा।"

कित्तो की बुआ ने ताना कसा, "हा-हा भाई, तुमरे मन की सिधाई तो ऐसी हैगी जैसे सीधी सड़क, कि उसपर से चोर भी जाओ और साह भी जाओ। उसी जबान से राम का नाम लें लो और उसीसे परनिंदा करो। *निगोड़ी मुस्की मिलै तौ कैसे मिलै?"*

"हमें नई जरूरत हैगी मुक्ती की। हमरा तौ मन यों ही भगवान मे लीन हैगा। उद्दिन चाची का राजीउ हमरे रमेस के पास आया औ कहा कि सनीमा चलौ। हम बोले कि बेटा सलीमा की आदत न डालौ रमेस को, यों ही तुमरी सोहबत में रह के सिगरट पियन लगा हैगा…"

"झूठ बात! हमरे राजीउ को तो कोई बुरी लत थी ही नही। बस खाली फैशन करत रहा, सो इनके रमेस का सग करके सिगरट वी पियन लगा है।"

अपने लड़के की बुराई सुनकर श्यामकली देवी भुनाईं, कहा, "झम्मो की महतारी, तुम तो बहुत पोथी-पुरान बाचत होगी, तनी चाची का बताय देव कि जिसके घर में ससकार सुद्ध होत हैंगे उनके लरकन-बिटियन की आदतें कहीं खराब हुइ सकत हैंगी भला? ई तौ बाहर की सोहबत मे बिगडती हैं।"

झम्मो की महतारी बोली, "अरे सिगरेट मे कुछ दोख नाही है। पहले पुराने लोग हुक्का पियत रहे कि नाही? औ अब भी पियत हैं। सिगरेट मे ई बात हैगी कि फैसन का हुक्का है—जब मन मे आया तब जेब से निकाली और पी ली।"

लटकन की अम्मा ने गुमान मे आखें झीनी करके हाथ बढ़ाकर कहा, "हम तौ भाई न अपने दोख छिपावें औ न परायें। हमरा राजीउ तो अपने कमरे मे बैठके अडा भी खात हैगा। हमसे बोला कि नानी, ई मे विटामिन हैंगे जिससे नई चाल की तागत आउत हैगी। आज के फैसन की बात है। अब हम क्या करें झम्मो की महतारी, अरे जब हमरे लरकन का परसद हैगा तौ हम काहे निन्द्रा करें? कोई पाप तो करत नाहीं हैंगे, खाली सौख करत हैंगे।"

"अब सौख की बात तौ ई हैगी चाची, कि हमरे भैया को रोज रात मे इत्ती-सी पियन का सौख हैगा। तौ एक दिन हम बोले कि भैया, बुरा न मानो तौ कहैं, पुरान मैं दारू पियन का दोख लिखा भया हैगा, जी चाहै तो भांग घोट लिया करौ। तौ हमरे भैया बोले कि दुर पगली, हम कोई नसे

की खातिर थोड़े पियत हैंगे, ई तो दवाई है। सखिया तनी-सा खाव तौ दवाई, और जादा खाव तौ जहर। ई बात हमरी समझ में आय गई चाची।

श्यामकली देवी ने त्यौरियां तानीं, बोलीं, "जो ऐसे सोचें तो दुनिया से धरम-भाव लोप हुइ जाय। अरे दारू तो दारू, चाहे थोड़ी पिए चाहे जादा पिए। इत्ते बड़े बक के मनेजर हुइके दारू पियत हैंगे और दोस लगाउत हैं हमरी बिचारी किसोर की घरवाली पर, ई भला सरीफ आदमी का काम हैगा?"

"बड़ी आई हमरे भैया की परनिंदा करन वाली! अरे मैं अब्बहीं चिट्ठी लायके दिखाय देऊंगी तौ सारी पोल खुल जायगी, तुमरी सहेली की बी और तुमरी बी।"

अपनी सहेली की पोल-पट्टी खुलने तक तो गनीमत थी लेकिन जब अपनी बात भी साथ ही साथ जुड़ी तो श्रीमती श्यामकली देवी के पित्ते भड़क उठे। गरजकर बोलीं, "हमरी पोल-पट्टी तू क्या खोलेगी निगोड़ी! मैं ही तेरी पोल-पट्टी खोल देऊंगी। जब से रामनरायन की जुरुआ मरी हैगी तब से उनके लरके-बच्चन पर हेत दिखावन के बहाने सबेरे-सझा जब देखौ तब अपनी छत से उनकी छत पर जाय टपकती हैं। अरे जो ऐसा मन काबू नईं रहत हैगा तो चोरी काहे करत हौ, खुल खेलौ ना, अब तो नया जमाना है। लरकन के बहाने लरकन के बाप के पास घुस-घुस के जाती हौ। ई पाप नहीं तो और क्या है?"

कित्तो की बुआ का तेज तप उठा, पंजों के बल आधी उठकर हाथ बढ़ाते हुए बोली, "ए रानी, हमरा मन बिगड़ैगा तौ डंके की चोट पर बिधवा-बिवाह करैंगे, औ तुम्हें अपने ब्याह मैं बुलावैंगे। बाकी चोरी करन की बात जो कही सो तो दुनिया जानत हैगी कि हमारा मन माखनचोर पैं रीझा हैगा।"

श्यामकली देवी ठट्ठा मारकर हंसी, बोली, "सच्ची कहा। अरे तुम साच्छात माखन-मिसरी और रामनरायन माखनचोर।"

"तौ तुमरे ठेकेदार कौन बड़े सुद्ध चलित्तर के हैंगे। जानैं कित्ती गिट्टी

कूटेवालियन का तुमरी सौत बनाइन हुइहैं।"

"अरे तो बनाया करें। हम तो सुद्ध है।"

"तो हम वी सुद्ध हैंगे, हमरी परनिंदा काहे करत होंगी। हमरे मन में रामनरायन के लिए जो खोट होता तो हमरे चेहरे पे लिख गया होता। भैया के बचपन के जिगरी दोस हैं, घर से घर मिला भया हैगा, हम मुसीबत में किसीके वच्चन की रच्छा करन जायँ औ तुम हमरी परनिंदा करो? वाह, अच्छी भगती सीखी है भाबी तुमने हम लोगन के साथ सत्सग करके।"

"हमैं किसीकी परनिंदा करन से क्या मतलब? तुमही किसोर की घरवाली की परनिंदा करत रही।"

"ऊमैं परनिंदा कहा है, ऊ तो हमरे पास सच्चा सावूत हैगा।"

"सच्चा तो हरी का नाम है रानी। ये किस्से-कजिए सब यहीं धरे रह जागेय, वही साथ जावैगा।" झम्मो की महतारी ने सेम की डलिया एक ओर सरकाते हुए कहा।

"हाँ, ये तो खैर सच्ची बात हैगी। आओ, अब परनिंदा छोडके कीर्तन कर लें, थोडी देर मन सुद्ध हुई जायगा।" श्रीमती श्यामकली देवी ने कहकर तुरंत ही सरगम के आठवें सुर में रेंकना और ताली पीटना आरंभ कर दिया, "दुखिया के प्रान पुकार रहे जगदीश हरेऽऽ जगदीश हरेऽऽऽ।"

थोड़ी देर तक 'जगदीश हरे' का कोरस चला, फिर परनिंदा का कोल्हू चल पड़ा और 'रसोवैसः' का तेल निकलने लगा। यही तो सुख है। यही इन मायामोह-मुक्त भक्तिनो का 'नित्तनेम' है।

धूर्तरत्न

कल मेरे एक मित्र के लड़के का ब्याह था। शोभा-यात्रा में मैं शामिल हुआ। वहीं एक पुराने साथी ने एक साहब की ओर उंगली उठाकर मुझसे कहा, "इन्हें जानते हो? ये मुंशी रौनकलाल हैं, हूबहू स्टोरी लिखने काबिल आदमी!"

मैंने दुबारा मुंशी रौनकलाल पर नजर डाली। दुबले-पतले, मझोले कद के आदमी। सफेद पतली मूछें, नीचे के दांत टूटे होने के कारण होंठ कुछ अन्दर झुके हुए, नाक लम्बी, खोपड़ी चौड़ी और आंखें छोटी-छोटी थीं। चेहरे और लिबास में तनिक भी रौनक नहीं थी; हां, आंखों की चमक बड़ी पैनी थी, ध्यान खींचनेवाली। मैंने सोचा, कहानी इनकी आंखों में है!

साथी बतलाने लगे, "सांप के काटे का मन्तर है मगर इनके काटे का नहीं। बड़े-बड़े शातिर भी मुंशी रौनकलाल से थर्राते हैं। राजनीति में होते तो दुनिया को अपनी अंगुलियों पर नचाकर दिखा देते। पुराने जमाने में होते तो हमारे ऋषि-मुनी नारदजी के साथ-साथ मुंशी को भी अमर बना जाते!"

मुंशीजी के चरित्र की पहेली नारदजी के नाम से कुछ सुलझती नजर आई, मैंने पूछा, "मुकदमे लड़वाते हैं?"

"हां, तुमने ठीक पहचाना," साथी बोले, "इनके समान मुकदमे बनाने

और लड़नेवाला आदमी नहीं। जहां सुई न समाए वहां मुंशीजी का फावड़ा आसानी से धंस जाता है। एक बार बाजार में दो मोटरों की हल्की-सी टक्कर हो गई। एक बड़ी मोटर थी, एक सेकेण्ड-हैण्ड छोटी। छोटी मोटर के सामनेवाला हिस्सा टक्कर से कुछ पिचक गया। बड़ी मोटरवाले सेठ ने उतरकर छोटी मोटरवाले वकील से क्षमा मांगी, वकील साहब भी शरीफ थे और ये समझते थे कि धक्का भीड़ के अचानक आ गुजरने-वाले रेले के कारण लगा था। दोनों कारें अपने को सहलाते-सहलाते ही टकराई थीं। साहब ने शिष्टाचार दिखलाया, "अरे वाह, आप कैसी बातें करते हैं!" सेठ बोले कि वकील साहब आप बड़े शरीफ हैं। मैं फिर आपसे माफी मांगता हूं। सेठजी कहकर चले गए। मुंशी रौनकलाल वहीं खड़े थे, वकील साहब को पहचानते भी थे, आगे बढ़े। 'जयरामजी' की, फिर कहने लगे, "माफ कीजिएगा वकील साहब, रुपया आपको शायद काटता है!"

"अजी नहीं, मुंशीजी।"

"अजी क्या मुंशीजी-मुंशीजी करते हैं, वकील साहब! ये अक्ल है तभी तो आज तक नई मोटर नसीब नहीं हुई आपको। मैं दस हजार हर-जाने के दिला दूंगा इसी सेठ से। दो हजार मुझे दे दीजिएगा!"

वकील साहब मुंशी रौनकलाल के जादू से परिचित थे। आठ हजार भी कम नहीं होते जो मुफ्त के मिलें। लालच लग गई। वकील साहब ने मुंशी रौनकलाल को अपने साथ कार में बिठला लिया। नगर के बाहर कानपुर मार्ग पर सूनी जगह में गाड़ी खड़ी की। मौका देखकर वकील साहब से कहा, "भगवान का नाम लेकर गाड़ी नीचेवाले पेड़ से टकरा दीजिए। उस सेठ की गाड़ी का नम्बर मैंने नोट कर लिया है। दावा दायर हो जाएगा।"

मौका-महल देखकर वकील साहब ने अपनी मोटर जो जरा करके पेड़ से टकरा दी। पहिये पिसटने के निशान वगैरा ऐसे बने कि जैसे सच-मुच ही एक्सीडेण्ट हुआ हो। फिर मुंशीजी पुलिस, फोटोग्राफर, गवाह

सब कुछ मैं आए। अखबारों में फोटो के साथ सनसनीखेज खबर छपी। सेठ के मोटर-नंबर को भेद-भरा दुश्मन बना दिया गया। मुंशीजी ने ऐसा बेचूक मुकदमा बनाया कि मानो सत्य हरिश्चन्द्र का बयान हो। सेठ मुंह ताकता रह गया, उसकी एक न चली और मुंशीजी ने वकील साहब को मुकदमा जिता दिया।

मुंशी रौनकलाल को मुकदमे बनाने में बड़ा मजा आता है। आमदनी से अधिक उन्हें मुकदमे लड़ाने की धुन उठती है। इसके अलावा शाम को बेनी कलार के यहां उन्हें चुक्कड़ पीने की लत भी है। एक बार मुंशीजी ने बेनी कलार को भी वह हाथ दिखाया कि तब से आज तक सदा हाथ बांधे ही इनके सामने खड़ा रहता है। इन्होंने बेनी और उसकी परम पति-व्रता स्त्री में मुकदमेबाजी करा दी। पति-पत्नी को खबर भी नहीं और कोर्ट में पत्नी की ओर से पति के खिलाफ दावा दायर हो गया।

सच कहूंगा, इस शातिर बदमाशी पर गुस्सा आने के बजाय मुझे एका-एक हंसी आ गई, पूछा, "क्या किया इन्होंने ?"

साथी कहने लगे, "एक बात पर बेनी ने इनसे घमण्ड-भरी ना कह दी थी। इन्होंने और उनके दो बड़े पुराने चुक्कड़ी साथियों ने अपने खर्चे से शराबखाने के हाते में धुर कोने के पास एक लकड़ी का मचाननुमा कमरा बनवाना चाहा। सोचा यह गया कि बरसात के दिनों में नीम तले के अड्डे से उठकर भागना न पड़ेगा। अहाते की चहारदीवारी के पीछे खेत हैं, मैदान है, रेल भी दौड़ती है। ऊंचे पर सीन-सीनरी उम्दा नजर आएगी, सन्नाटा भी रहेगा। फिर नशे में फलसफे, शायरी और घाघपने की बातें हुआ करेंगी। बेनी से कहा तो वह बोला कि बीस रुपया महीना किराया लूंगा। ये बोले कि किराये की बात गलत है। मगर बेनी कसा रहा। इन्होंने दूसरे ही दिन बेनी कलार की पत्नी की तरफ से उसका एक फर्जी भाई खड़ा करके यह अर्जी दिलवा दी कि बेनीराम बहुत पीने की वजह से और बुढ़ापे में मति भ्रष्ट हो जाने के कारण बदचलन औरतों का साथ करने लगा है और अपनी जायदाद लुटा रहा है। बेनीराम के एक ही औलाद है, वह भी

गुजारे की, उम्र पांच साल; मेरी बहन और भाजे के हक की हिफाज़त की जाय। अदालत से जांच का हुक्म हो गया। आपने एक चतुर अधेड़ पियक्कड़ नायिका को पटाया। जांच के दिन दोपहर ही मे वह उनके ठेके पर पहुंच गई। दिन का वक्त, अकेला समय, हमउम्र और मिठबोली ग्राहिका पहुंची तो बेनीराम मे भी सहज रसीलापन आ गया। 'शरीफ औरत' होने की वजह से बाहर पीने के बजाय वह आप ही आप उस काउण्टर के घेरे के अन्दर आकर बैठ गई जहां बेनी किसी गैर आदमी को घुसने भी नही देता, मगर इस सनियाव मे कुछ कह न सका। सन्नाटे का समय था।

अदालती जांच का फन्दा इसी समय लाला के गले मे पड़ा। उधर मुंशीजी बेनी के घर जाकर बेनी की पत्नी से परदे की आड़ लेकर सब कह-सुन आए। कहा कि बेनीराम ने अपनी कुल जायदाद वेश्या के नाम लिख दी है। मैं यह अर्जी तुम्हारी और तुम्हारे बच्चे की तरफ से लिखकर लाया हूं, इसपर अंगूठा लगा दो। गवाहियां पक्की कीं, बेनी की घरवाली को कुछ रोना और कुछ दिलासे मे छोड़ा और आप बेनी की धर्मपत्नी के मुख्तार हो गए। अदालत ने पत्नी की अर्जी के अनुसार उस समय तक मुंशी जी को जायदाद और काम-काज का मैनेजर बना दिया जब तक कि बेनीराम की नेकचलनी पर अदालत को विश्वास न हो जाए। बेनीराम फटी आंखों से ताकते रह गए, अपने ही घर मे कुत्ते हो गए। बड़ी मुश्किल मे मुंशीजी को मनाकर अब शान्ति से अपनी गद्दी पर बैठे हैं।

मैंने मन ही मन मुंशी दीनदयाल को प्रणाम किया। तुलसीदासजी ने रामायण मे ऐसे ही शठों की वन्दना की है और शठता के सबध मे क्या कहूं? आप मानें या न मानें, आजकल मुंशीजी भगवान रामचन्द्रजी की ओर से भगवती सीता महारानी के खिलाफ मुकदमा लड़ रहे हैं। एक बड़े साहूकार घराने की विधवा देवरानी जिठानियों ने पास-पास दो मन्दिर बनवाए हैं, एक रामजी का मन्दिर है, दूसरा सीताजी का। दोनों में आए दिन सिंगार-सजावट, भजन-कीर्तनों की होड़ होती थी, बड़ी धूम थी। मुंशीजी ने सुना तो उनके चलते दिमाग मे अर्जी की एक शानदार बिजली-

गी कोर्धी, "जगदम्मा शिरी सीता महारानी के चौकीदारों ने भगवान शिरी रामचन्दर के दरवानों की डण्डों से मरम्मत की व चुन्दी बनाई।" —इस सवाल पर आप ऐसे रीझे कि देवरानी जेठानी के मन्दिरों में मुकदमा चलवा दिया। आजकल उसे ही लड़ रहे हैं।

सिकन्दर का शीशमहल

शहर की नई बस्ती गौरीनगर में एक सुन्दर बुर्जीदार आलीशान कोठी दूर से ही देखनेवालों का ध्यान अपनी ओर खींच लेती है। उसे देखकर यह धोखा होता है कि किसी नवाब-बादशाह का महल होगा। पूछने पर आपको उस कोठी का नाम 'शीशमहल' बतलाया जाएगा, और अधिक खोद-विनोद करेंगे तो आपको यह भी बतला दिया जाएगा कि इस शीशमहल के मालिक शहर के नये करोड़पति सेठ सिकन्दरमल हैं।

घी, शक्कर और किरासिन के थोक बेपारी लाला सिकन्दरमल जैसे नाम के सिकन्दर हैं, वैसे ही तकदीर के भी। इनके बाप खैराती आज से पैंतीस-चालीस बरस पहले तक एक कन्धे पर बांस की सीढ़ी और दूसरे पर किरासिन की कनस्तरी और शाहन लटकाए गली-गली म्यूनिसिपैलिटी की लालटेनें जलाया करते थे। उनका इकलौता लाड़ला सिकन्दरवा ही अब किरानिया सेठ बनकर लाला सिकन्दरमलजी कहलाता है। पढ़ने-लिखने के नाम पर लाला पहले तो केवल अंगूठा-छाप ही थे, अब सुनहरी पार्कर कलम से देवनागरी में 'स क द र म ल' का किलबिलौआ हस्ताक्षर के तौर पर खींचने योग्य हो गए हैं। एक एम० ए० पास प्राइवेट सेक्रेटरी, बी० कॉम० पास मैनेजर, इण्टर पास दो क्लर्क और हाईस्कूल फेल दो चपरासियों के अलावा पिछले पन्द्रह बरसों में वे एक बी० ए०, बी० टी०

गी कौंधी, "जगदम्मा शिरी सीता महारानी के चौकीदारों ने भगवान शिरी रामचन्दर के दरवानों की डण्डों से मरम्मत की व चुन्दी बनाई।" —इस सवाल पर आप ऐसे रीझे कि देवरानी जेठानी के मन्दिरों में मुकदमा चलवा दिया। आजकल उसे ही लड़ रहे हैं।

तब तक महावीर बाबा के पट बन्द नहीं होते। इसके बाद रोज सवा रुपये के लड्डुओं का चढ़ाया हुआ भोग भिखारियों को, खास करके बच्चों को बांटते हैं। जाड़ा-गर्मी हो या बरसात, अपनी या महलों में से किसीकी तबीयत अच्छी हो या खराब, चाहे कमिश्नर-कप्तान के सामने हों या किसी मन्त्री-मन्त्रुल्ले के, नमाज का टेम हुआ नहीं कि और बात छोड़कर माफी चाही और, फिर आपकी गरज हो तो दूसरी जगह बता दो, नहीं तो हम दफ्तर के ही किसी कोने में अपनी खुदाई ड्यूटी पर चालू हुए जाते हैं—यह अदा हरदम साथ बनी रहती है, मखमली जानमाज सदा बगल में ही दबी रहती है। यही हाल बड़े हनुमानजी के दर्शनों का भी है। मशहूर है और आप भी लोगों से कुछ कम नहीं कहा करते हैं कि मुझे लाल लगोंटे, लम्बी पूछवाले का इष्ट है। जहां किसीने मेरे काम में विघ्न डाला नहीं कि उनकी दुम का कोड़ा उसपर पड़ा नहीं, ऐसी धिरी बजरंग बली की दया-दिरिस्टी है मुझपर। जहां तक रुपया कमाने के काम में उनकी बुद्धि का सवाल है, वहां तक तो सिकन्दरमल किसी अरस्तू, अफलातून से कम दिमागदार नहीं, यों दूसरी तरह से गोबर गनेस भी नम्बरी और नामी हैं। इनकी गोबर गनेसी के लतीफे इनके दुश्मनों तक को हंसा देते हैं, दोस्तों की तो बात ही न्यारी है।

जिन दिनों 'मुगले-आजम' फिल्म बन रही थी, उन्हीं दिनों गोपीनगर में इनकी कोठी भी बन रही थी। वहीं से इनके कान में भनक पड़ी कि उसमें दो लाख रुपयों का शीशमहल बनवाया गया है और बनवानेवाला पहले दर्जी था, अब तकदीर का सिकन्दर है। सिकन्दर लाला को सुनते ही बड़े ताव के साथ यह धुन समाई कि अब हम भी शीशमहल ही बनवाएंगे। उसके लिए फिर से कोठी के नक्शे में फेर-बदल करवाया और मुगलई ठाठ का शीशमहल बनवा डाला। कोठी तीन हिस्सों में बनी, अगल-बगल दो बेगमों के महल और बीच में उनका रंगमहल बना। बापराज की ब्याहता को वे बड़े प्यार से दाई बेगम कहते हैं और आपराज की ब्याहता

पास बीवी के मालिक भी बन गए हैं। किसीसे हाथ मिलाते हैं तो अंग्रेज़ी में 'हाय डूडू' ज़रूर कहते हैं, कहीं से लौटते हैं तो 'टा-टा, चीरियू' भी कह आते हैं, हुक्के के बजाय सिगार पीते हैं, सोते हैं तो नाइट सूट पहनते हैं और जागते हैं तो रेशमी बुशर्ट और पतलून—यानी अब कोई यह नहीं कह सकता कि लाला सिकन्दरमल पढ़े-लिखे नहीं हैं। नौकर चाहे उनकी आंख के सामने ही क्यों न खड़ा हो, मगर उसे बुलाने के लिए वे घण्टी ज़रूर बजाएंगे। बड़े हाकिम-हुक्कामों को छोड़कर अगर कोई एकाएक उनसे मिलने, बातें करने या चन्दा मांगने आ जाता है, तो कहते हैं, "हमारे प्रैविट सिकेट्री के पास जाओ, अपोइण्टमिण्ट लो, तब आकर बात करो।" लेकिन यह सब होने पर भी बहुत-सी बातों में ये पक्के राष्ट्रवादी हैं। मिसाल के तौर पर विलायती ढंग की सीटी बजाना या अंग्रेज़ी गाना इन्हें हरगिज़ पसन्द नहीं। बाथरूम में गाने की ज़रूरत होने पर ये आज भी अपने अब्बा मरहूम का प्रिय पेटेण्ट गाना ही गाते हैं—

सड़क पर किन्ने जलाई लालटेन।
कहां से आए लाल दरोगा,
कहां से आई बड़ी मेम। सड़क पर···।

लाला सिकन्दर को लेकर उनकी जान-पहचानभरी शहर की दुनिया में तरह-तरह की बातें फैली हैं। उनका नाम लेते, ज़िक्र-रंगी छिड़ते ही बहुतों के चेहरों पर आपसे-आप हंसी के कंवल खिल उठते हैं और कइयों की त्योरियों पर धनुष-बाण भी चढ़ जाते हैं, नाकें भी सिकुड़ जाती हैं; शहर के पचीसों सभा-सोसाइटीबाज़ तिकड़मी तमाशबीनों के लिए वे कामधेनु गऊ हैं। दुनिया जानती है कि पांचों वक्त की नमाज़ बिला नागा, बिलउज्र अदा करते हैं और नित्त-नेम से रात की शयन आरती के समय बजरंगबली के बड़े मन्दिर के सामने, दूर बरामदे में हाथ जोड़े, हनुमानजी की आरती भी बड़े चाव से गाते हैं। आरती लेकर फिर एक बार वहीं से हाथ जोड़े खड़े-खड़े, ललकारती आवाज़ में अपने लाल लंगोटे, लम्बी पूंछ-वाले को देखते हुए हनुमान चालीसा और संकटमोचन का पाठ करते हैं—

तब तक महावीर बाबा के पट बन्द नहीं होते। इसके बाद रोज़ सवा रुपये के लड्डुओं का चढ़ाया हुआ भोग भिखारियों को, खास करके बच्चों को बांटते हैं। जाड़ा-गर्मी हो या बरसात, अपनी या महलों में से किसीकी तबीयत अच्छी हो या खराब, चाहे कमिश्नर-कप्तान के सामने हों या किसी मन्त्री-मन्त्रुल्ले के, नमाज़ का टेम हुआ नहीं कि और बात छोड़कर माफी चाही और, फिर आपकी गरज़ हो तो दूसरी जगह बता दो, नहीं तो हम दफ्तर के ही किसी कोने में अपनी खुदाई ड्यूटी पर चालू हुए जाते हैं—यह अदा हरदम साथ बनी रहती है, मखमली जानमाज़ सदा बगल में ही दबी रहती है। यही हाल बड़े हनुमानजी के दर्शनों का भी है। मशहूर है और आप भी लोगों से कुछ कम नहीं कहा करते हैं कि मुझे लाल लंगोटे, लम्बी पूंछवाले का इष्ट है। जहां किसीने मेरे काम में विघ्न डाला नहीं कि उनकी दुम का कोड़ा उसपर पड़ा नहीं, ऐसी सिरी बजरंग बली की दया-दिरिस्टी है मुझपर। जहां तक रुपया कमाने के काम में उनकी बुद्धि का सवाल है, वहां तक तो सिकन्दरलाल किसी अरस्तू, अफलातून से कम दिमागदार नहीं, यों दूसरी तरह से गोबर गनेश भी नम्बरी और नामी हैं। इनकी गोबर गनेसी के लतीफे इनके दुश्मनों तक को हंसा देते हैं, दोस्तों की तो बात ही न्यारी है।

जिन दिनों 'मुगले-आज़म' फिल्म बन रही थी, उन्हीं दिनों गोदीनगर में इनकी कोठी भी बन रही थी। कहीं से इनके कान में भनक पड़ी कि उसमें दो लाख रुपयों का शीशमहल बनवाया गया है और बनवानेवाला पहले दर्जी था, अब तकदीर का सिकन्दर है। सिकन्दर लाला को सुनने ही बड़े ताव के साथ यह धुन समाई कि अब हम भी शीशमहल ही बनवाएंगे। उसके लिए फिर से कोठी के नक्शे में फेर-बदल करवाया और मुगलई ठाठ का शीशमहल बनवा डाला। कोठी तीन हिस्सों में बनी, अगल-बगल दो बेगमों के महल और बीच में उनका रंगमहल बना। बाबराज की ब्याहता को वे बड़े प्यार से दाई बेगम कहते हैं और आपराज की ब्याहता

बनाकर हमाला, बैरे-आयाओं से मीठे मजाक, रुपये-दो रुपये का लेन-देन—यह सब करते हुए सिकन्दर ने अपनी गाहकी का दायरा बहुत बड़ा बना लिया। धीरे-धीरे वे घी के छोटे-मोटे आढ़तिए बन गए। जब काम कुछ और फैला तो कुछ नौकर-चाकर बढ़ाए, साठ रुपये महीने पर एक बी० कॉम० बाबू रखा। बाबू उनके देसी विलायती गाहकों के यहां आर्डर सप्लाई करता था; उसके साथ इक्के पर कनस्टर-तराजू के अलावा एक घी तोलनेवाला नौकर भी जाता था, क्योंकि बाबू ने घी तोलने से साफ इन्कार कर दिया था। दूसरी लड़ाई छिड़ने के समय तक सिकन्दर की गिनती छोटे-मोटे हैसियतदारों में हो गई थी; लोग कहते थे कि सिकन्दर के पास दस-पन्द्रह हजार की पुड़िया हो गई है।

जब लड़ाई छिड़ी तो सिकन्दर के यार उस्ताद टुन्नू पहलवान एक दिन उनके पास आए। वे उस समय तक आंखों से लाचार हो गए थे, उनकी दूकान भी बिक चुकी थी। उनके पास कुछ रुपया था, सिकन्दर से बोले, "आगे बाजार बहुत चढ़ेगा, इसलिए कुछ माल कल के भाव और कुछ परसों के भाव बेचने के लिए अभी से ही जमा कर लो। सोती तकदीर जाग उठेगी तुम्हारी। मैं तो आंखों से लाचार हूं, वरना पैसा पैदा करके दिखला देता। हां, तुम अगर करना चाहो तो रुपया लगाने को मैं तैयार हूं, जी चाहे आधो-आध के साझीदार बनो या कम-ज्यादा के बनो।"

सिकन्दर ने अपने अब्बा खैराती से सलाह ली, कुछ उनकी सुनी, कुछ अपने मन की, वही टुन्नू पहलवान से दस-दस हजार की टहरी कि बीम का माल इस्टाक करेंगे। उस्ताद बोले, "लिखा-पढ़ी कर लो।" इन्होंने कहा, "हां।" वकील, गवाह, मैजिस्ट्रेट सब नकली बनाकर उन्हीं के घर ले गया। साझेदारी का इकरारनामा जो सुनाया गया, वह कुछ और था, जिसपर, 'टुन्नू खां वल्द लमसहद' के दस्तखत हुए, वह कागज कोई और ही था। सौ-डेढ़ सौ खर्च करके यार-उस्ताद के दस हजार रुपये सिकन्दर साफ डकार गया। साल-भर के अन्दर ही सिकन्दर तकदीर का सिकन्दर हो उठा। वह उस्ताद को खाने-खर्चे लायक रकम हर महीने पहुंचाता रहा,

मिसेज' छपा होता था। जलसों में लाला जाते तो चारों ओर सजी-वजी गुड़रियां देखते थे। लाला के जी में आया कि एक पढ़ी-लिखी लड़की से ब्याह करना चाहिए, जो उनके साथ ऐसे मौकों पर बाहर आया-जाया करे। उनकी पहली बेगम ओढ़नी-घघरिया मार्का इन्हीं की कौम की हैं। दोनों में यों इश्क तो बहुत गहरा था, मगर दुनियादारी की जरूरत भी आखिर बड़ी चीज होती है। फिर उनके बच्चे नहीं होते थे। शुरू में दो हुए, वो जाते रहे; फिर आठ-दस बरसों से खेत एकदम ऊसर ही हो गया है, कोई आस नहीं रही। बाप की रूह से 'प्लेन्चाट' पर पूछा तो उसने हुक्म दे दिया। बस फिर क्या था, लोगों की सलाह पर अखबारों में बड़े-बड़े इश्तहार अपने फोटू के साथ छपाए और घटनाओं की तरह लड़कियां और उनकी तसवीरें उमड़कर उनके चारों तरफ घिर आईं। एक बी० ए०, बी० टी० पास सलमा बेगम उनकी नजरों पर चढ़ी और दिल में बस गईं। सलमा बेगम मास्टरी करती थीं और अपने मौजूदा शौहर को नापसन्द करती थीं, क्योंकि शादी के बाद ही उसके चेहरे पर फालिज गिर गया और मुंह टेढ़ा हो गया था। सलमा बेगम उसे तलाक देकर इनसे निकाह पढ़वा लेने पर राजी हो गईं।

पहले ही दिन दोनों एक बात पर अड़ भी गए। लाला सिकन्दर ने अपनी बिरादरी की रस्म के मुताबिक निकाह पढ़वाने के बाद हिन्दुआने ढंग से आग के सामने फेरे फिरवाने की बात कही तो सलमा बेगम ने साफ इन्कार कर दिया। लाला वहीं सबके सामने गरजकर बोले, "मैं इसी दम के दम में दूसरी बी० ए० पास लड़की को बुलवा के निकाह-फेरे फिरवाऊंगा और तुम्हें खड़े-खड़े तलाक दे दूंगा। औरत मेरे दिल पर चढ़ सकती है, मेरी खोपड़ी पर हरगिज हरगिज चढ़ नहीं सकती।" सलमा बेगम हंसते-हंसते राजी हो गईं। अपनी शादी के बाद इन्होंने ऐसी धूमधाम की पार्टी की कि उसमें 'सरोजनी नैडो' और 'गोविन्दवल्लभ पन्थ' तक आए थे।

लाला सिकन्दरमल की कुछ खूबियां और सिद्धान्त सारे शहर में

पर उनके बार-बार पूछने पर भी उन्हें कभी हिसाब न समझाया। एक बार जब पहलवान लाल-पीले होने लगे तो सिकन्दर ने कहा, "हमारा-तुम्हारा सा झा कभी हुआ ही नहीं था। तुमसे जो बनाए बने, बना लो।" पहलवान को यह सुनकर शक हुआ। घर आकर वह कागज़ निकाला और एक से पढ़वाने ले गए। उर्दू खुश्खत में उसपर लिखा था, "मैं इसी लायक हू।" नीचे दस्तखत थे —'टुन्नू खा बकलम खुद।" पहलवान फूटी आंखों से चौधारे बहाकर चुप रह गए। लेकिन खैंरातीमल सिकन्दरमल फर्म के मालिक सिकन्दर ने इतना सलूक जरूर किया कि जब तक वे जिये, उनका कुछ खर्चा उठाकर आराम से जीने दिया।

लड़ाई के दिनों में सिकन्दर लाला हर बरस के हिसाब से चौगुने बढ़े। देसी-विलायती ओहदेदारों की गहरी लड़ाई के दिनों में फली, मिलिट्री में माल सप्लाई करने लगे; खूब चार सौ बीसियां हुईं। वार फण्ड में भी बड़ा रुपया दिया। अपने मुहल्ले के आगे एक नाला पटवाकर उसके आस-पास की बहुत सारी जमीन सस्ते में हथिया ली। उसमें पुरानी चाल की बगीचेदार कोठी बनवाई, मोटर खरीदी—बाप-बेटे लाला खैरातीमल लाला सिकन्दरमल बन गए। लाला सिकन्दर की बड़ी इच्छा थी कि बाप के लिए सरकार से खासाहबी, खांबहादुरी कुछ भी सही, पर मिल जरूर जाए। इसके लिए हाकिम-कप्तानों ने हां-हां भी कर दी, पर लड़ाई जीत जाने पर भी झट उन्हें वफादारी की मामूली सनद के सिवा और कुछ न मिला तो लाला खैरातीमल साहब का हार्टफेल हो गया और लाला सिकन्दरमल साहब सिर से पैर तक खादीधारी और पक्के देशभक्त हो गए।

एक कांग्रेसी नेता की तंगदस्ती में ये बड़े काम आए। कई कांग्रेसियों का भला किया। सन् '४६ के चुनाव में कांग्रेस के लिए बड़ा पैसा खर्च किया, इसलिए आजादी आते ही लाला सिकन्दरमल बड़े व्यापारी होने के अलावा शहर के बड़े भारी समाज सेवक भी बन गए। सभा-सोसाइटियों के छपे हुए कार्ड भी उनके पास आने लगे। हर कार्ड में 'मिस्टर और

सन् '६२ की अष्टग्रही लगने से कम कुछ ही दिनों पहले शीशमहल में इनके गृहप्रवेश का दिन निश्चित हुआ। कलकत्ता, मैसूर, पूना, जयपुर, शिमला और काशी तक से कई हज़ार रुपया खर्च करके पण्डितों की रायें जब उनके ज्योतिषी ने मंगवाकर यह भरोसा दिला दिया कि यही दिन और मुहूर्त सबसे उत्तम है, तो उन्होंने धूमधाम से प्रवेश किया, बड़ी भारी ज्याफ़त और नाच-गाना हुआ। इनको अष्टग्रही की खबरों से बड़ा डर लगता था। हर पण्डित को इनका यही प्रश्न विचारना पड़ता कि अष्टग्रही में हम और हमारी बेगमें और हमारा कारबार वगैरा सब राज़ी-खुशी रहेगा या नहीं। दक्षिणा की लालच से पण्डितों ने 'हां-हां' कर दिया··· मगर होनी होके रही। ऐन अष्टग्रही के दिन अपने शीशमहल के धुर ऊपर कंगूरेदार चौबारे में पहली बार अपने गुगों के साथ प्लान्चेट पर ध्यान साधा तो बाप की रूह ने आते ही ऐसा अजब रंग लिया कि लाला के हाथों के तोते उड़ गए। पहले पांच खटके हुए, यानी कि अब्बा आ गए। लाला ने सलाम किया, इसपर एक खटका हुआ, यानी कि कबूल हुआ। "आपको और अम्मां की रूह को अपने बेटे का यह शीशमहल पसन्द आया और हमने जो बाग में आपकी 'इस्टाचू' आपकी फोटू से बनवा के औ' इटाली से मंगवा के लगवाई है, उसमें जो शीशे की पच्चीकारी करवाई है, वो आपको पसन्द आई?" खट्-खट् सात खटके हुए, जिसके माने थे कि अब्बा की रूह ने सातों दुआएं दे दीं। लाला सिकन्दरमल खुशी से खिले-खिले पड़ते थे। प्लान्चेट थोड़ी देर तक चुप रहा, फिर तीन खटके हुए, जिसका मतलब सलमा उर्फ बाई बेगम से था। पूछा, "सलमा बेगम को बुला दूं?" ज़ोर-ज़ोर के दो खटके, यानी कि नहीं, वह भी गुस्से के साथ। लाला घबरा गए, पूछा, "उसको लेकर कोई फिकर की बात है?" इसपर एक खटका, यानी कि हां। और ये सब खटके ज़ोरदार हो रहे हैं, यानी कि गुस्सा चढ़ा है।

लाला के हाथ ठण्डे होने लगे। एक बार जब पुरानी कोठी में रहते थे, तब किसी बात पर नाराज़ होकर अब्बा की रूह ने को करिश्मा दिखाया

छोटे-बड़े सबको मालूम हैं। एक तो रोज़ म्युनिसिपैल्टी के तेल-गोदाम से पांच बोतल मिट्टी का तेल चोरी करवा के उसे अपनी दूकान पर बेचते हैं। उनके बाप खैराती जनम-भर इतना तेल चुराते रहे और इसी चोरी की बचत के रुपयों से खैराती ने अपने बेटे सिकन्दर को घी की दूकान खुलवाई थी। लाला की दूसरी अदा ये है कि हर जरूरी काम का फ़ैसला वे प्लान्चेट पर अपने अब्बा की रूह से पूछकर ही करते हैं। इस काम के लिए उन्होंने तीन गूंगे लड़के पाले हैं और कोठी की छत पर बीचों-बीच में एक छोटी कोठरी भी बनवाई है। जब कोई सवाल करना होता है तो तीनों गूंगों को लेकर ऊपर चले जाते हैं; छत में आने-जाने का दरवाज़ा बन्द करके वे चारों प्लान्चेट पर हाथ रखकर ध्यान जमाते हैं और जब अब्बा की रूह आ जाती है, तब सधे-बंधे खटकों में कहा-सुनी होने लगती है। इस प्लान्चेट के बारे में वह अपनी सबसे प्यारी दाईं-बाईं बेगमों तक को कभी कुछ नहीं बतलाते। अपने पेट की थाह उन्होंने नींद की बर्राहट में भी आज तक किसीको नहीं दी। तीसरी अदा यह है कि अच्छे-अच्छों को अपने चांदी के जूतों तले लाकर उन्हें बड़ी ख़ुशी होती है। सिकन्दरमल की बिरादरी का आदमी पीढ़ी-दर-पीढ़ियों से ऐसी सामाजिक हैसियत में रहता है, जिसमें न तो कोई कुलीन हिन्दू उन्हें हिन्दू मानने को तैयार है और न कोई कुलीन मुसलमान उन्हें मुसलमान ही मानता है। मगर बड़े-बड़े ख़ूख़्वार, भयानक दरिन्दे-परिन्दों के घनघोर जंगल में कोने-क्तरे अपनी जान छिपाने के वास्ते रेंगते हुए इन कीड़ों की कौम में एक अचम्भा ऐसा भी हुआ कि कीड़ी के पेट से हाथी जनमा, हाथी भी ऐसा-वैसा नहीं ख़ास इन्द्र का ऐरावत, यानी लाला सिकन्दरमल। वे अब बड़े ठाठ से गरज-गरजकर बड़ी सभाओं में कहते हैं कि हमारे पुरखे बड़े समझदार थे, जो पहले से ही हिन्दू-मुसलमान दोनों एकसाथ हो गए। एक दिलचले पत्रकार ने जब से इनके कान में एक 'टिप' दे दी है, तब से कहा करते हैं कि अकबर बादशाह ने जब दीने-इलाही मज़हब चलाया, तब से हमारे पुरखे उसी मज़हब को मानते चले आए हैं।

सन् '६२ की अष्टग्रही लगने से कम कुछ ही दिनों पहले शीशमहल में इनके गृहप्रवेश का दिन निश्चित हुआ। कलकत्ता, मैसूर, पूना, जयपुर, शिमला और काशी तक से कई हज़ार रुपया खर्च करके पण्डितों की राये जब उनके ज्योतिषी ने मंगवाकर यह भरोसा दिला दिया कि यही दिन और मुहूर्त सबसे उत्तम है, तो उन्होंने धूमधाम से प्रवेश किया; बड़ी भारी ज्याफ़त और नाच-गाना हुआ। इनको अष्टग्रही की खबरों से बड़ा डर लगता था। हर पण्डित को इनका यही प्रश्न विचारना पड़ता कि अष्टग्रही में हम और हमारी बेगमें और हमारा कारबार वगैरा सब राज़ी-खुशी रहेगा या नहीं। दक्षिणा की लालच से पण्डितों ने 'हाँ-हाँ' कर दिया··· मगर होनी होके रही। ऐन अष्टग्रही के दिन अपने शीशमहल के धुर ऊपर कपूरेदार चौबारे में पहली बार अपने गुरु के साथ प्लान्चेट पर ध्यान साधा तो बाप की रूह ने आते ही ऐसा अजब रुख लिया कि लाला के हाथों के तोते उड़ गए। पहले पांच खटके हुए, यानी कि अब्बा आ गए। लाला ने सलाम किया, इसपर एक खटका हुआ, यानी कि कबूल हुआ। "आपको और अम्मां की रूह को अपने बेटे का यह शीशमहल पसन्द आया और हमने जो बाग में आपकी 'इस्टाचू' आपकी फोटू से बनवा के औ' इटाली से मंगवा के लगवाई है, उसमें जो शीशे की पच्चीकारी करवाई है, वो आपको पसन्द आई?" खट्-खट् मात खटके हुए, जिसके माने ये कि अब्बा की रूह ने मानों दुआएं दे दीं। लाला सिकन्दरमल खुशी से खिले-खिले पड़ते थे। प्लान्चेट थोड़ी देर तक चुप रहा, फिर तीन खटके हुए, जिसका मतलब सलमा उर्फ़ बाई बेगम से था। पूछा, "सलमा बेगम को बुलाद्‌ !" ज़ोर-ज़ोर के दो खटके, यानी कि नहीं, वह भी गुस्से के साथ। लाला घबरा गए, पूछा, "उसको लेकर कोई फ़िकर की बात है?" इसपर एक खटका, यानी कि हां। और ये सब खटके ज़ोरदार हो रहे हैं, यानी कि गुस्सा बड़ा है।

लाला के हाथ पांव ठण्डे होने लगे। एक बार जब पुरानी कोठी में रहते थे, तब किसी बात पर नाराज़ होकर अब्बा की रूह ने जो करिश्मा दिखाया

कि 'पिलेन्चाट' सीधा लड़कों के दोनों गालों पर दनादन तमाचों की तरह पड़ने लगा। गूगे बेहोश हो गए थे। इन्होंने जब बड़ी देर तक हनुमान चालीसा और संकटमोचन का पाठ किया, तब कहीं जाकर रूह काबू में आई और फिर बड़ी-बड़ी चिरौरियों पर मानी थी। उस दिन भी कुछ ऐसे ही लटके नज़र आने लगे। एकाएक 'पिलेन्चाट' ज़ोर-ज़ोर से खट-खट-खट-खट करता रहा, फिर एकाएक चुप; फिर उसी तरह ज़ोर-ज़ोर से खटके चले और 'पिलेन्चाट' अपनी जगह से खिसकने लगा। गूंगों के होश गुम, और ये भी घबराए, मगर किसी तरह हिम्मत बांधकर कहा कि "अब्बा हम आपके किसी हुकुम से बाहर नहीं, पर आपका हुकुम अभी हमारी समझ में नहीं आया है। छोटी बेगम पर क्या कोई बड़ी आफत आनेवाली है ?" एक खटका हुआ, हां। "आप उससे नाराज़ हैं !" फिर ज़ोरदार खटका, हां ! —"तो मेरे लिए उसको लेकर क्या हुकुम होता है ?"—फिर ज़ोरदार लम्बी खट-खट। इतने में लाला को सूझ गई, पूछा, "उसे घर से निकाल दूं ?" इसपर एक खटका हुआ, कि हां। इसके तुरन्त बाद ही कुछ कमज़ोर-से नौ खटके हुए, जिसके माने थे कि अच्छा अब हम जाते हैं। बहुत थक गए हैं, तुम बड़े बुढ्ढ हो, प्यार और दुआ।

अब्बा की रूह तो गई, साथ ही लाला सिकन्दरमल की रूह भी फना हो गई। यों लाला को अपनी दोनों आंखों से समान प्यार था, मगर बाईं बेगम कुछ ज़्यादा लडैती थीं। सभा-जलसों में वही साथ रहती थीं। लाला को दिलपसन्द नई गुजरियों जैसी उसकी चाल-ढाल और सजावट, उसका फराफर अंग्रेज़ी बोलना—हाय कैसे उसे निकाल दें ! बड़े लोगों के समाज में लाला की बाईं बेगम ही उनकी इज़्ज़त-आबरू थी। एकाएक उन्हें निकाल देंगे तो दुनिया क्या कहेगी ! उधर अब्बा की रूह का हुक्म भी कैसे टालें ?

बहुत गम्भीर भाव से धीरे-धीरे कदम बढ़ाते हुए अपनी दाईं बेगम के महलों में पहुंचे। चुपके से सब हाल कहा। दाईं बेगम पुरनिया औरत, चट से सयानी कोठे चढ़ गईं; जी में आई कि औरत चाहे लाख अच्छी हो,

मगर सौत है और सौत चून की भी बुरी होती है। किसी बहाने टले तो घर में अपना राज हो। बोली कि अब्बा का हुक्म तो मानना ही होगा। तुम छोटी बेगम को कुछ दिनों तक किसी अच्छे होटल के कमरे में रखवा दो, बाद में अब्बा की रूह को खुश करके यहां उसे हम फिर लौटा लाएंगे। लाला सिकन्दरमल को यह सलाह बहुत जंच गई।

बड़ी ने छोटी को यानी दाईं ने बाईं बेगम को अपने ही महलों में बुलवा लिया। शीशमहल वाले कमरे में ही डनलपिलो के गद्दों पर बिछी नर्म ईरानी कालीन पर लाला सिकन्दर अपनी दाईं-बाईं के साथ बैठ गए, फिर दोनों के गलों में बांहें डालकर उन्हें प्यार से अपनी ओर खींचते हुए लाला एकाएक फफककर रो पड़े। दाईं बेगम जानकार थी, इसलिए न सहमीं, मगर बाईं बेगम के तो छक्के-बक्के छूट गए। बड़ी मुश्किल से थामने-मनाने पर दाईं की मदद लेकर लाला ने यह भेद खोला तो वह सनाका खा गई, फिर वह एकाएक त्योरियों के धनुष चढ़ाकर बोली, "देखिए, मैंने आपके अब्बा को कभी देखा नहीं, सिवा उस फोटोग्राफ के जो आपके कमरे में टंगा है, या उस मुजस्सिमे के जो कि कोठी के लान में खड़ा है। मगर वह भी मेरी ही सलाह से इटली से बनकर आया था। उसकी देखभाल और उसके आस-पास फूल-क्यारियों और फौवारों की सजावट पर मैंने हमेशा खास तवज्जह दी है और इससे ज्यादा मैं आपके वालिद बुजुर्गवार की रूह को भला किस तरह खुश कर सकती हूं!"

लाला बोले, "यही तो हमारी समझ में भी नहीं आता है। मगर हम भी क्या करें! हम न पढ़े न लिखे। जो कुछ यह माया है, सब रूहों की दुआ से है। नाराज़ होकर अब्बा ने भूत-चुड़ैलों से हमारा शीशमहल जलवा दिया तो फिर भला क्या होगा?"

इसपर बाईं बोली, "आज हमको बेकसूर निकलवा रहे हैं, कल मुन्नी बहन को भी निकलवाएंगे। रूह का क्या भरोसा! आखिर हवा ही ठहरी, चाहे जिधर रुख ले ले!"

सलमा की इस बात से मुन्नी के कलेजे पर घूमा जैसा लगा, फिर

कि 'पिनेन्चाट' सीधा लड़कों के दोनों गालों पर दनादन तमाचों की तरह पड़ने लगा। गूंगे बेहोश हो गए थे। इन्होंने जब बड़ी देर तक हनुमान चालीसा और संकटमोचन का पाठ किया, तब कहीं जाकर रूह काबू में आई और फिर बड़ी-बड़ी चिरौरियों पर मानी थी। उस दिन भी कुछ ऐसे ही खटके नजर आने लगे। एकाएक 'पिनेन्चाट' जोर-जोर से खट-खट-खट-खट करता रहा, फिर एकाएक चुप; फिर उसी तरह जोर-जोर से खटके चले और 'पिनेन्चाट' अपनी जगह से खिसकने लगा। गूंगों के होश गुम, और ये भी घबराए, मगर किसी तरह हिम्मत बांधकर कहा कि "अब्बा हम आपके किसी हुक्म से बाहर नहीं, पर आपका हुक्म अभी हमारी समझ में नहीं आया है। छोटी बेगम पर क्या कोई बड़ी आफत आनेवाली है ?" एक खटका, हां। "आप उससे नाराज हैं !" फिर जोरदार खटका, हां ! —"तो मेरे लिए उसको लेकर क्या हुक्म होता है ?"—फिर जोरदार लम्बी खट-खट। इतने में लाला को सूझ गई, पूछा, "उसे घर से निकाल दूं ?" इसपर एक खटका हुआ, कि हां। इसके तुरन्त बाद ही कुछ कमजोर-से नौ खटके हुए, जिसके माने थे कि अच्छा अब हम जाते हैं। बहुत थक गए हैं, तुम बड़े बुद्धू हो, प्यार और दुआ।

अब्बा की रूह तो गई, साथ ही लाला सिकन्दरमल की रूह भी फना हो गई। यों लाला को अपनी दोनों आंखों से समान प्यार था, मगर बाईं बेगम कुछ ज्यादा लड़ैती थीं। सभा-जलसों में वही साथ रहती थीं। लाला की दिलपसन्द नई गुजरियों जैसी उसकी चाल-ढाल और सजावट, उसका फराफर अंग्रेजी बोलना—हाय कैसे उसे निकाल दें ! बड़े लोगों के समाज में लाला की बाईं बेगम ही उनकी इज्जत-आबरू थी। एकाएक उन्हें निकाल देंगे तो दुनिया क्या कहेगी ! उधर अब्बा की रूह का हुक्म भी कैसे टालें ?

बहुत गम्भीर भाव से धीरे-धीरे कदम बढ़ाते हुए अपनी दाईं बेगम के महलों में पहुंचे। चुपके से सब हाल कहा। दाईं बेगम पुरनिया औरत, चट से सयाने कोठे चढ़ गईं; जी में आई कि औरत चाहे लाख अच्छी हो,

मगर सौत है और सौत चून की भी बुरी होती है। किसी बहाने टले तो घर में अपना राज हो। क्योंकि अब्बा का हुक्म तो मानना ही होगा। तुम छोटी बेगम को कुछ दिनों तक किसी अच्छे होटल के कमरे में रखवा दो, बाद में अब्बा की रूह को खुश करके यहां उसे हम फिर लौटा लाएंगे। लाला सिकन्दरमल को यह सलाह बहुत जंच गई।

बड़ी ने छोटी को यानी दाईं ने बाईं बेगम को अपने ही महलों में बुलवा लिया। शीशमहल वाले कमरे में ही डनलपिलो के गद्दों पर बिछी नर्म ईरानी कालीन पर लाला सिकन्दर अपनी दाईं-बाईं के साथ बैठ गए, फिर दोनों के गलों में बाहें डालकर उन्हें प्यार से अपनी ओर खींचते हुए लाला एकाएक फफककर रो पड़े। दाईं बेगम जानकार थी, इसलिए न सहमीं, मगर बाईं बेगम के तो छक्के-छक्के छूट गए। बड़ी मुश्किल से पामने-मनाने पर दाईं की मदद लेकर लाला ने यह भेद खोला तो वह सनाका खा गई, फिर वह एकाएक त्योरियों के धनुष चढ़ाकर बोली, "देखिए, मैंने आपके अब्बा को कभी देखा नहीं, सिवा उस फोटोग्राफ के जो आपके कमरे में टंगा है, या उस मुजस्सिमे के जो कि कोठी के लान में खड़ा है। मगर वह भी मेरी ही सलाह से इटली से बनकर आया था। उसकी देखभाल और उसके आस-पास फूल-क्यारियों और फौवारों की सजावट पर मैंने हमेशा खास तवज्जह दी है और इससे ज्यादा मैं आपके वालिद बुजुर्गवार की रूह को भला किस तरह खुश कर सकती हूं।"

लाला बोले, "यही तो हमारी समझ में भी नहीं आता है। मगर हम भी क्या करें! हम न पढ़े न लिखे। जो कुछ यह माया है, सब रूहों की दुआ से है। नाराज होकर अब्बा ने भूत-चुड़ैलों से हमारा शीशमहल जलवा दिया तो फिर भला क्या होगा?"

इसपर बाईं बोली, "आज हमको बेकसूर निकलवा रहे हैं, कल मुन्नी बहन को भी निकलवाएंगे। रूह का क्या भरोसा! आखिर हवा ही ठहरी, चाहे जिधर रुख ले ले!"

सलमा की इस बात से मुन्नी के कलेजे पर घूसा जैसा लगा, फिर

तड़पकर बोलीं, "अच्छा मुझे निकालने को कभी नहीं कहेंगे। मैं उनकी गोद में एक पोता और एक पोती डाल चुकी हूं। अब न जिये तो ये इनके खानदान की बदनसीबी है, मैं क्या करूं? हां, तुम बंजर धरती-सी एक दम बेकार···"

"दाई बेगम, खबरदार जो मेरी बाई के खिलाफ कुछ कहा तो! औलाद की आस मैं अब छोड़ चुका। जब तक हम तीनों रहेंगे, मौज करेंगे और मरेंगे तो इसी शीशमहल में अपनी मजारें बनवाएंगे। लोग-बाग जैसे आगरे का ताजमहल देखने जाते हैं, फिर हमारा शीशमहल भी देखने आया करेंगे। सरकारी ट्रस्ट बना जाऊंगा, एक सदावर्त-खैरात कायम कर जाऊंगा। नाम चलता रहेगा, बस! ···लेकिन ये तो सब बाद की बातें हैं। इस दम तो यही फिकर कि बाई को न घर में रखते बनता है, न निकालते ही बनता है। मैं क्या करूं?"

एकाएक सलमा बेगम के मन में कोई बात आई जिससे उनकी आंखें चमक उठीं, लाला सिकन्दर के गले में एक बाहु डालकर अपनी ओर खींचती हुई बोली, "सुनो डार्लिंग, तुम पण्डत-बरहमनों से सलाह लो। एक बार नवाब वाजिदअली शाह को भी किन्हीं ग़ैबी वजूहात से अपनी चन्द बेगमात को तलाक देना पड़ गया। बेचारे बादशाह रोने लगे तो पण्डत-बरहमनों ने कुछ हवन-जाप वगैरह करके दोख दूर कर दिया था।'

सिकन्दर लाला नवाब वाजिदअली से कम तो थे नहीं, उसी दम पण्डित बुलवाए गए। पण्डितों ने आपस में कुछ देर तक तो शास्त्रार्थ की तरकारी छौंकी, फिर एक पं० देवता बोले, "हमने सब सोच-विचारकर यह तय किया है कि आपके पिता की आत्मा को प्रेत योनि से मुक्त कराने के लिए उनकी नारायण बलि करवा दी जाए। नारायण रूपी अल्लाह में लीन हो जाने से फिर उनकी रूह प्लानचेट पर नहीं आने पावेगी।"

लाला सिकन्दरमल को यह सलाह पसन्द आई, मगर उसी दम दाई बेगम तड़पकर कहने लगी, "तुम भले ही निठुर हो जाओ, मगर मैं कैसे भूल सकती हूं कि जब से मैं तुम्हारे यहां आई तब से मरते दम तलक रोज मेरे-

तुम्हारे वास्ते छिटांक-छिटांक-भर मलाई लाते रहे अब्बा, पांच पैसे छिटांक से पाच आने छिटांक तक की खिलाई—अब उन्हींकी रूह को हम बली मे बकरे की तरह जिबह करा दें ! हाय अल्ला, ये मैं कैसे सह सकूंगी ?" और उन्होंने रोना शुरू कर दिया।

एक पण्डित बोले, "आप मतलब गलत समझ बैठी हैं बेगम साहबा। असल में आपके ससुर की रूह यानी आत्मा, भगवान यानी अल्लाह मे लीन हो जायगी। उनकी मोक्ष हो जाएगी, और फिर क्या चाहिए ?"

दाई बोली, "यही तो नहीं हो सकता। हम हिन्दू देवी-देवताओं को मान भले लें, पर हमारा सच्चा मजहब तो मुसलमानी ही है। कयामत के दिन हमारे यहा रूहों का हिसाब होता है। उस दिन जन्नत मे सभी दिख-लाई देंगे, अकेले मेरे अब्बा ही वहा न होंगे। हाय, मुझसे ये कैसे सहा जायगा उस वक्त!" वह फिर फफक-फफककर रोने लगी। लाला सिकन्दर-मलजी साहब का कलेजा भी अपने अब्बा मरहूम लाला खैरातीमलजी साहब की याद मे हू-हू कर उठा, कहने लगे "ये नहीं होगा। बाई आज से हरमजेस्टी होटल मे रहेंगी—"

"मैं मरकर ही जाऊंगी इस घर से, जीते-जी नहीं जाऊंगी। अगर निकालना हो तो अपने हाथ से मुझे जहर लाकर दे दो।" कहकर बाई अपने बायें महल की ओर चली। जहर के नाम पर तड़पकर लाला ने कहा, "जहर मैं क्यों लाऊं, तुम्हीं मगा के मुझे दे दो। अब या तो इस घर मे तुम्हीं रहोगी या मैं ही रहूंगा; बहरहाल अब्बा की रूह को हरगिज नाराज नहीं करूंगा।"

सिकन्दर लाला ने उसी दिन से अनशन ले लिया। बस रात को महावीरजी के दर्शन करने जाने पर सेर-भर मिठाई खाके पानी पी आए। दूसरे दिन भी ऐसा ही अनशन चला, मगर बाई बेगम के ऊपर उसका कोई असर न हुआ। चार दिन यो ही तनातनी मे बीत गए, लाला का गुस्सा बराबर बढ़ता जा रहा था। उनके अनशन मे साथ देनेवाली उनकी

दाईं बेगम अपनी बातों से आग में घी डाल रही थीं। लाला क्रोध और कमज़ोरी के मारे उस दिन दुकान भी नहीं गए थे, अकेले अपने रंगमहल में बैठे-बैठे ताश खेल रहे थे कि एकाएक घरेलू टेलीफोन की घण्टी बज उठी। बायें महल से डॉक्टर मिस फीरोज बोल रही थीं, "सेठ साब, आपकू मुबारक हो! आपकी छोटी बेगम साहबा आपको नौ-दस महीना के अन्दर वारिस दलाएगा। बेगम साब का खूब सम्हाल रक्खो? हां।"

सेठ सिकन्दरलाल को अपने कानों पर भरोसा न हुआ। दौड़े हुए बायें महल पहुंचे, जब डॉक्टर ने फिर बतलाया कि बेगम साहबा के दिन चढ़े हैं और बाईं बेगम ने बड़े प्यार से शर्माते हुए उन्हें देखा तो सेठ साहब निहाल हो गए। अपने अब्बा की रूह के डर से कहीं अधिक उन्हें खुद अपने को अब्बा कहकर पुकारने के लिए आनेवाली नई रूह का प्यार कोंचने लगा। अपने एम० ए० पास प्राइवेट सेक्रेट्री माशूक मियां को वहीं बुलाकर कहने लगे, "सेक्रेट्री साहब, आज हमने भी आप अंगरेज़ी पढ़े लोगों की तरह ही इस सिलेन्चाट के मामले में 'साइन-टिफकली' सोच डाला और इसी नतीजे पर पहुंचे हैं कि पण्डितों को बुलवा के अब्बा की रूहे-पाक का बलिदान करवा डालना चाहिए, ताकि उनका नूर खुदावन्दे करीम में समा जाए। ये सवाब का काम होगा और साइन-टिफकली भी होगा। क्यों, क्या राय है तुम्हारी?"

"हुजूर का नजरिया साइंटिफिक है। मैं ऐसा ही इन्तजाम करवाता हूं।" सेक्रेट्री माशूक मियां आदाब बजाकर वापस लौट गए। सिकन्दर सेठ का अनशन टूट गया।

इसके महीना-बीस रोज बाद ही एक शाम दाईं बेगम की एक बांदी दौड़ती हुई उनके पास पहुंची और हांफ-हांफकर बतलाया कि सेक्रेट्री और बाईं बेगम आपस में दुलहे-दुलहिन-सी छेड़-छाड़ करते हैं। कोई अजब नहीं, जो औलाद की आस उन्हीं से पूरी हुई हो—अपने ससुर की इसी वजह से छोटी बेगम पर नाराज थी, ये अब समझ में आया।

दाई बेगम ने सुना तो आंखें फट गईं, दम-भर बाद कलेजे को दोनों हाथों से दबाकर बोलीं, "हाय अल्ला, मैं सिक्रेट्री साहब की बाबत सोचती ही रह गई और इसने वहां भी बी० ए० पास कर डाला !! ···"

उस वक्त सेठ सिकन्दरमल अपनी गद्दी पर बैठे चन्दा मांगने के लिए आई हुई नेतानियों के सामने अपनी दाई-बाईं बेगमों की सतजुगी वफादारियों का ढिंढोरा पीटकर खुश हो रहे थे।

डोल

सरकारी खाद्य-विभाग के बाज़ारू अफसर मिस्टर कन्हैयालाल मिसरा की फिटफिटिया ज्यों ही अपनी गली में मुड़ी त्यों ही उनकी त्योरियाँ भी चढ़ गईं। यह उनकी बरसों की आदत है। जब घर का ध्यान आता है तो शीला, जिसको वह 'शीला' कहकर ही उच्चरित कर पाते हैं, फूहड़पन की साक्षात् मूर्ति की तरह दिमाग में घूम आती है। उसके साथ ही चें-चें-पें-पें करते बच्चे, जिन्हें वे अपने से अधिक शीला के बच्चे मानते हैं, ध्यान में आ जाते हैं। तब उनका सिद्ध अफसरी अंकुश गृहस्थी रूपी हथिनी के मस्तक पर भोथरा सिद्ध होने लगता है। सफलता-असफलता की इस दोहरी सिद्धि का साक्षात्कार मिस्टर कन्हैयालाल मिसरा को पिछले आठ वर्षों में, जब से शीला शहर में आकर उनके साथ रहने लगी, दिनप्रति करना ही रहता है। घर के दरवाज़े पर पहुँचकर उनका चेहरा और उतर गया। झटके से किवाड़ खोले, फिटफिटिया ऊपर चढ़ाई, द्वार उढ़काया तभी ऊपर से शीला का स्वर सुनाई दिया, अरे, "सुनते हो, बैठके में ही बैठ जाओ, इतने बड़े साथ लेके आइत हैं।" कन्हैया बाबू समझ गए कि पास-पड़ोस की औरतें आई होंगी, ऊपरवाले कमरे में बैठी होंगी। खैर, मोटर साइकिल दालान में चढ़ाकर बैठके का दरवाज़ा खोला। खोलते ही एक आश्चर्यजनक नज़ारे पर, नीचे फूलोंदार दरी पर दृष्टि गई। वहाँ

हटाते ही कमरे को देखकर कन्हैया बाबू ठीक उसी प्रकार ठगे से खड़े रह गए, जैसे द्वारका से लौटने पर सुदामा अपने घर का कायापलट देखकर हुए होंगे। उनकी बैठक में सिरकी के दो मोढ़े, लोहे की दो कुर्सियां, मैली चादर बिछे हुए एक छोटे तख्त और दीवार पर टंगे हुए दो-एक कैलेण्डरों के अलावा बरसों से और कोई भी नयापन कभी सपने में भी नहीं दिखलाई पड़ा था, लेकिन आज पूरे फर्श पर जूट की कार्पेट बिछी हुई नज़र आई, मोढ़े-कुर्सियों की जगह शीशम का सोफासेट देखा, सेण्टर टेबुल, दो छोटी तिपाइयां, उनपर प्लास्टिक के कवर और फूलों के गुलदस्ते देखे, दोनों खिड़कियों और सड़क-पड़ते दरवाज़े पर भी पर्दे नज़र आए, चारों दीवारों पर चार तस्वीरें थीं, एक श्रीराम पंचायतन की, दूसरी दिलीपकुमार और वैजयन्तीमाला की, तीसरी हनुमानजी की और चौथी पं० जवाहरलाल की।

उन्हें आज बड़ा आश्चर्य हो रहा था। ऊपरी आमदनी रूपी हींग से छौंकी हुई उनके जीवन-क्रम की मसालेदार दाल में जिस नमक की चुटकी की कसर थी, सो आज पूरी हो गई। वे हीन कुल के दरिद्र ब्राह्मण के बेटे हैं, भीख-चन्दों के-ट्यूशनों से एम० ए० गोल्ड मेडलिस्ट होकर खाद्य विभाग में दस वर्षों से उन्नति करते हुए इस हैसियत पर पहुंचे हैं। कन्हैया बाबू दिल से अपने पिता आदि रिश्तेदारों और सारे गांववालों को तुच्छ समझने के मूड में रहते हैं, पर वे अब तक उन सबसे केवल इसीलिए दबने को मजबूर हैं कि उन लोगों के घर में घुसते ही शीला घूंघट काढ़कर उनके पैरों पड़ जाती है। कई बार इसीपर पति-पत्नी में ठनी है। आठ बरसों में अब से यह शहर आई है, न जाने कितनी बार कन्हैया बाबू का दम करते-करते मुंह सूखा है कि शीलो, ज़रा माडर्न बनो। मैं तुम्हें एजूकेशन दिलाऊंगा। मेरे सुसरे छोटे अफसरों में भी बड़ों के घर घुसने लगे हैं। लेकिन शीला को अपने को न सुधारना था और न सुधरा। हां, इधर दो-तीन महीनों से उसमें कुछ परिवर्तन आने लगा था। अपनी और बच्चों के कपड़े-लत्तों की सफाई पर थोड़ा-बहुत ध्यान देने लगी थी, फिर

भी आज का परिवर्तन इतना क्रांतिकारी था कि कन्हैया बाबू एकाएक अपनी आँखों पर विश्वास न कर पाते थे कि सीलो माडर्न बन गई। वे अपनी 'सीला' को देखने के लिए बेताब थे। अपना नेवानल कोट उतारकर उन्होंने खूंटी पर टांगा और बड़े ठाठ से सोफा पर बैठ गए। सुहागरात और उसके कुछ दिनों बाद तक तो कन्हैया बाबू ने अवश्य अपनी सीलो का इसी तरह इन्तजार किया था, पर उसके बाद उनके दिल का पेण्डुलम इस तरह कभी न हिला था। खैर, दरवाजे का नया पर्दा हिला, कमरे के मद्धिम उजाले में आसमानी रंग की नये ढंग की सूफियानी साड़ी पहने, जूड़े में प्लास्टिक के फूलों की वेणी लगाए, चमचम मुखवाली कन्हैया बाबू की अर्द्धांगिनी विजयोल्लास पर लाज-रंगी मुस्कराहट लिए आंखों में 'चलो हटो' का मदमाता अन्दाज लिए, हाथों में चाय की ट्रे लिए हुए आईं। "हाय !" कन्हैया बाबू ने तुरन्त सोफा पर हाथ रखकर 'टच-वुड' का टोटका कर लिया, ताकि उनकी सीलो को उनकी नजर न लग जाए पास आने पर दोनों ने एक-दूसरे को प्यार-भरी नजरों से इस तरह देखा जैसे, सिनेमा के परदे पे हीरो-हीरोइन देखते हैं। टेबुल पर चाय की ट्रे रखते ही कन्हैया बाबू ने शीला के दोनों हाथ थामकर पूछा, "ये क्या माजरा है ? कहीं से लाटरी निकल आई है ?"

शीला बनावटी रोब-भरे व्यस्त स्वर में बोली, "छोड़ो अबही हमें फुरसत नाहीं है। ऊपर अलकापुरी में मिसिज महरा और मिसिज गुप्ता आई हैं।"

"ये मिसेज मेहरा और मिसेज गुप्ता कौन हैं ?" कन्हैया बाबू ने पूछा।

"अरे, अपने पड़ोस के बैजू बाबू, जो अब अलकापुरी में कोठी बनवाइन हैं, उनकी मिसिज। औ मिसिज महरा उनकी नई पड़ोसिन हैंगी। पिछले मंगल को हम वहां गई रहीं न—तो मिसिज बैजूने हमें और मिसिज महरा को चाय पिलाई, सो आज हमने भी उन लोगों को बुलाय लिया।···अच्छा, अब हम जाते हैं।"

शीला चली गई। आज तो बस दिल को धड़ाम-धड़ाम करनेवाला ही कोई ग्रह-नक्षत्र कन्हैया बाबू की जन्म-कुण्डली में उदय हुआ था। नाश्ते पर नज़र डाली, एक तश्तरी में मद्रासी 'डोसा' दिखाई दिया और दूसरी में शाही टोस्ट, तीसरी में बिस्कुट और चौथी में केले, नया टी-सेट, नई ट्रे—फिर नई सेण्टर टेबुल पर उसे रखकर नये सोफासेट पर बैठकर चाय पीने में जो नया आनन्द उन्हें प्राप्त हुआ, उसका क्या वर्णन किया जाए। ऐसा लगता था कि मानो कन्हैया बाबू अपने घर में नहीं, बल्कि साहब के घर में चाय पी रहे हों। खैर, औरतों के जाने के बाद शीला ने बड़े उत्साह के साथ अपने पति को ऊपरवाले कमरे की नई सजावट भी दिखलाई, जहां कुछ नया फर्नीचर आ गया था। कन्हैया बाबू ने शीला से पूछा, "ये एकाएक इतना फर्नीचर खरीदने की क्या जरूरत आ पड़ी? मेरे ख्याल से चार-पांच सौ रुपया तुमने बिगाड़ दिया!"

शीला तुनककर बोली, "हांऽऽ चार-पांच सौ नहीं, चार-पांच हजार बिगाड़ दिया। तुम हमका समझत का हो? नब्बे रुपये में सोफा लाए। अस्सी का पलग हैगा। चौबीस रुपये में ई मेज-तिपाइया ली और बाईस रुपये में ई सब गद्दी-पर्दे औ' अठारा रुपये का सिट लाए। मगल के दिन अलकापुरी से लौटती बिरिया फरनीचर का आडर दिया, पर्दे-गद्दी मिसन मार्किट कपड़ा लैके दर्जी के हिया हम दै आईं। आज तुम्हारे दफ्तर जाने के बाद हम दौड़ के फरनीचर लाईं, सब सजाया—देखो, कैसी सोभा आय गई हमरे घर में! अलकापुरी के घरन जैसी।"

"पर मैं पूछता हूं कि इस सोभा की फिलहाल आवश्यकता क्या थी महारानी?"

"वाह, थी कैसे नहीं? मिसिज महरा हमारी नई-नई फरेन्ड भई हैं, मिसिज गुप्ता के यहां हम दुइ-दुइ बार चाय पी आए। जो न बुलौते तो यही कहती कि इत्ते बड़े मारकटिंग अफसर की घरवाली होय के कजूसी दिखाय गईं। हम कोई का कहन लायक मौका काहे का देईं?"

शीला के मुख पर दर्द की पालिश चढ़ आई। कन्हैया बाबू ने पूछा,

'और ये मदरासी डोसे-वोसे बनाना कहाँ से सीखा ?"

"अरे, अबही का है, जरा अलकापुरी में कोठी बन जाय देखो हमारी, तब हुआ रोज नई-नई चीजें बनायके तुम्हें खिलावैंगे। अरे अलकापुरी में बहुत मजे हैं भाई।"

कन्हैया बाबू ने तुनुककर कहा, "मेरे बस का नहीं है घर बनवाना। प्राविडेण्ट फण्ड की रकम हाथ लगने में अभी बरसों की देरी है और ऊपर की कमाई निकालूंगा तो सरकार मुकदमा चला देगी"

"चलो-चलो, हमें पट्टी न पढ़ाव। बैंजू की मिसिज बतावत रही कि जमीन खरीद लेव तो कोपरेटी से लोन मिल जात हैगा। पचीस-तीस बरस में अदा हुइ जात हैगा। अरे किराया न दिया, कोपरेटी को पैसा दिया, पर घर तो अपना हुइ गया।"

बहरहाल शाही टोस्ट खिलाकर मैडम सीलो ने अपना शाही प्रस्ताव इस जोर से पेश किया कि कन्हैया बाबू ना न कर सके। एक साल के अन्दर वे लोग भी अलकापुरीवासी हो गए। गवई-गांव के कन्हैयालाल बरसों शहर की सड़ी-घुसी गलियों के सस्ते किराये वाले मकानों में रह चुकने के बाद पोखरमल चोकरमल जैसे स्वार्थी मकान मालिकों के चंगुल से मुक्त होकर अब अलकापुरी के 'बी' टाइप की कोठी 'शीलाविला' के लान की हरी-हरी घास पर 'तरावटें' लिया करते हैं।

अलकापुरी में कुछ 'सी' टाइप के मकान हैं, कुछ 'बी' टाइप और कुछ 'ए' किस्म की कोठियां हैं। 'ए' टाइप की कोठियों में कारें हैं, अल्सेशियन कुत्ते हैं, बड़े-बड़े लान, विलायती फूलों के गमले और क्यारियां, कूलर और रेफ्रिजिरेटर हैं, कीमती फर्नीचर, पर्दे-पोशाक, बैरा-बावर्ची हैं और इन सबके ऊपर अंग्रेजी बोली है। बी टाइप के बहुत-से मकानों में भी कम व बेश यही सब मजे हैं, जिनकी देखादेखी सी टाइप की कोठियों पर भी असर पड़ता है। सी सेक्टर में विलायती न सही मगर देसी कुत्तों की कमी नहीं, करीब-करीब हर घर में उन्हें क्रिश्चियन नाम देकर विलायतीनुमा

"और ये मदरासी डोसे-वोसे बनाना कहां से सीखा ?"

"अरे, अबही का है, जरा अलकापुरी में कोठी बन जाय देखो ह
सब हुआ रोज नई-नई चीजें बनायके तुम्हें खिलावेंगे। अरे अल
में बहुत मजे हैं भाई।"

कन्हैया बाबू ने तुनुककर कहा, "मेरे बस का नहीं है घर बनव
प्राविडेण्ट फण्ड की रकम हाथ लगने में अभी बरसों की देरी है और
की कमाई निकालूंगा तो सरकार मुकदमा चला देगी"

"चलो-चलो, हमें पट्टी न पढ़ाव। बैजू की मिसिज बतावत रहं
जमीन खरीद लेव तो कोपरेटी से लोन मिल जात हैगा। पचीस-तीस
मे अदा हुइ जात हैगा। अरे किराया न दिया, कोपरेटी को पैसा दिया
घर तो अपना हुइ गया।"

बहरहाल शाही टोस्ट खिलाकर मैडम सीलो ने अपना शाही प्र
इस ज़ोर से पेश किया कि कन्हैया बाबू ना न कर सके। एक साल
अन्दर वे लोग भी अलकापुरीवासी हो गए। गंवई-गांव के कन्हैया
बरसों शहर की सड़ी-घुसी गलियों के सस्ते किराये वाले मकानों में रह क
के बाद पोखरमल चोखरमल जैसे स्वार्थी मकान मालिकों के चंगुल से
होकर अब अलकापुरी के 'बी' टाइप की कोठी 'शीलाविला' के लान

पड़ा, वरना मेरी तबीयत नहीं थी कि इन सबके पास ऐसे दिखाई जाएं।"

'जब हम ऐसे नहीं करते रहे तब तुम हमें तंग करते रहे और अब···" मैडम मीनो ने मान में आंसू छलकाए। कन्हैया बाबू भी नर्म पड़े, बोले, "ठीक है, घर को मार्डन बनाकर अवश्य रखना चाहिए मगर शर्म और शोबाजी की भी एक लिमिट होती है। मगर तीन-चार सौ रुपये का खर्च तुम्हारी टी-पार्टियों का ही बढ़ गया है हर महीने।"

"हां-हां, अकेली मेरी फ्रेन्डों की ही पार्टियां होती हैं, तुम्हारे फ्रेन्डों की तो जाने होतीं ही नहीं!"

"मेरे फ्रेन्ड नहीं फ्रेण्ड्स हैं फ्रेण्ड्स···" कन्हैया बाबू की बकवास चल ही रही थी कि पप्पू ने आकर खबर दी, "मम्मी! श्यामलाल अंकिल की आंटी कहती हैं कि कप नहीं देंगी। कहती हैं कि अंकिल गुस्से होते हैं, मिसिज़ डीन के यहां कप गए थे सो दो टूट गए।"

कन्हैया बाबू ने ताना दिया, "जाओ, बिजली की केतली के साथ-साथ सौ-पचास कप भी खरीद लाओ अपनी शान जताने के लिए।"

मीरा ने ताने का उत्तर न देकर कहा, "ठहरो, मैं जाके लाती हूं उनके यहां से। मेरी बड़ी फ्रेन्ड है।" और थोड़ी ही देर में वह खुशी-खुशी प्याले लेकर लौट आई। चेहरे पर ऐसी चमक थी, लगता था मानो किसी प्रतियोगिता में कप जीतकर लौटी हो। कन्हैया बाबू तब तक अपनी हजामत बनाने बैठ चुके थे। उनके सामने कप खनखनाकर रखते हुए इठलाकर बोली, "लीजिए हुजूर, आपका आर्डर मान लिया। बिना खर्चे के काम बनाय लिया। अब तो खुश हुए जाइए।" कन्हैया बाबू प्यार से देखकर मुस्करा दिए। मीरा बोली, "अच्छा ये बताओ कि नाश्ते में क्या बनाय लें? मिसिज़ भगवानदास की पार्टी में गाढ़ी टोस्ट थे, डोसे के दिया रसगुल्ले थे, मिसिज़ मधोक ने मलाई, चाप और कुल्फी कुल-कुल चीजें खिलाईं। अब हमारे यहां बारी है, बोलो क्या खिलावें?"

कन्हैया बाबू ने गाल पर ब्लेड छोड़ाते [illegible] र कहा, "तुम्हारी फ्रेण्डों के नाश्ते की बाबत

"क्यों ?"

"क्यों क्या ! तुम तो सान जताओगी। उसने दो मिठाइयां खिलाईं तो तुम चार खिलाओगी। मैं इस दीवाला-पीटू स्कीम में अपना कोई सजेसन नहीं दे सकता।"

पति की बातों पर ध्यान न देकर बड़ी उमंग से पास खिसककर उनके हजामत बनाते हाथ को पकड़कर बड़े प्यार से कहा, "मेरी एक बात मानोगे ?"

"क्या ?"

"तुम हंसी उड़ाओगे। बहुत दिनन से हमार मन में थी कि तुमसे कहूं। हंसी तो नहीं उड़ाओगे ?"

"अरे, पहले बात तो बताओ।" कन्हैया बाबू ने कहकर फिर रेजर सम्हाला। सीला के चेहरे पर लाज का गुलाबीपन निखर आया, मन के संकोच को तोड़ने का प्रयत्न करके बोली, "मिस्टर चटर्जी और मिस्टर मामलाल दोनों जने अपनी-अपनी मिसजों को डोन कहते हैं, तुम भी हमें ऐसे ही पुकारा करो।"

"डोन ? ये डोन क्या बला है ?"

"अच्छा-बच्छा क्या करते हो ? अब तो सभी अपनी-अपनी मिसिज़ों को डोन या डोनी कहते हैं। पीछेवाली सड़क की तो सभी कोठियों में मिसिज़ों को उनके साहेब लोग डोनी पुकारते हैं।" मैडम सीलो भावविभोर हो गईं। मिस्टर मिसरा अपनी पत्नी की बात अब तक न समझ पाए थे पर एक मज़ाक अवसर सूझ गया, तौलिये से मुँह पोंछकर बोले, "सुनो, एक फैशन से ही काम नहीं चलता, दो-चार फैशन होने चाहिए।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यही कि डोन-डोनी तो कहा ही जाता है, अब अपनी मिसेज को बाल्टी कहें या पालकी पुकारें तो नया फैशन चले। तुम्हें क्या कहूं ?" कन्हैया बाबू ने हंसते मुख से बात कही पर मैडम सीलो का पारा चढ़कर सिर में चढ़ गया। ऐसे झटके से गर्दन घुमाई कि मान गया अब कभी इस ओर

रख दी न बरेली।

कन्हैया बाबू के मन में बात आई-गई हो गई लेकिन जब पार्टी के बाद घर आए, यहां तक कि दूसरे दिन सवेरे भी मैडम का मुंह सीधा न हुआ तो इन्होंने उनका जी खुश करने की नीयत से आवाज़ लगाई, "अरे डौल, चाय अभी तक चाय नहीं बनी भाई।" डौल ने कोई उत्तर न दिया। कन्हैया बाबू ने जब दो-चार बार डौल-डौल पुकारा तो पप्पू हंस पड़ा, बोला, "अहा, मम्मी डौल हो गई, मम्मी डौल-डौल!" बस घर में कुहराम मच गया। पप्पू को मार पड़ी, कन्हैया बाबू इसपर बिगड़े, फिर मैडम मीना तड़ाके वाक्य ज़बान से तोड़-मोड़कर रोईं। फिर उनके सिर में दर्द हो गया, न चाय बनी न खाना। कन्हैया बाबू भी समझौते के मूड में न आ सके, महा-जोकर तैयार हुए मोटर साइकिल उठाई और जल्दी ही दफ्तर चल दिए।

चार-पांच रोज़ तनाव रहा। जो सामने पड़ जाएं तो ये कतरा जाएं और इनके आने का वक्त हो तो वो टल जाएं। कन्हैया बाबू ने घर में चाय तक पीना छोड़ दिया। रात में देर से घर आने लगे। अन्त में मीना झुकी, रोना गाना हुआ, मनावन-रिझावन हुआ, शाम को मियां-बीवी मोटर साईकिल पर बाज़ार गए। वहां घूमते हुए कन्हैया बाबू का आमना-सामना एक चकमाचारिणी रोबीली मगर काली-कलूटी महिला से हो गया। देखते ही दोनों मुस्कराए, कन्हैया बाबू ने लटककर कहा, "अरे डौली! तुम यहां कहां?"

"मैं तो यहां चार महीने से आ गई हूं। लड़कियों के स्कूल की इन्चार्ज हूं। तुम क्या करते हो इधर?" डौली ने पूछा।

"मैं कन्ट्रोल ऑफिसर हूं। ये मेरी वाइफ है मीना—और ये डौली। मेरे साथ यूनिवर्सिटी में पढ़ती थी। कभी मैं यहां आता था, कभी ये। मैं बड़ा खुश हुआ। डौली, परसों संडे है तुम हमारे यहां लंच पर आओ, ज़रूर आना।" कन्हैया बाबू के निमन्त्रण को डौली ने सहर्ष स्वीकार किया,

उनका पता नोट किया और विदा हुई। तब तक शीला को काठ मार चुका था। कन्हैया बाबू ने इसपर ध्यान न दिया और अपने उत्साह में डौली के सम्बन्ध में बतलाते रहे। शीला गुमसुम, पत्थर! घर पहुंचते ही शीला सीधी मुड़मार अपने कमरे में घुस गई और दरवाज़े की सिटकनी भीतर से चढ़ाकर बिना साड़ी बदले ही पलंग पर लेट गई। दोनों जने अपने और बच्चों के लिए मिठाई-नमकीन लाए थे। कन्हैया बाबू ने शीला को खाने और खिलाने के लिए पुकारा। शीला न आई, दो-तीन बार पुकारा फिर कन्हैया बाबू उठकर गए। बड़ी मुश्किल से दरवाज़ा खुला। 'क्यों सीलो, क्या बात है?" पूछते-पूछते बड़ी मुश्किल से फूले मुख से जवाब फूटा, "मुझसे क्यों पूछते हो, जो तुम्हारी डोली है उसीसे जाके पूछो।"

मिस्टर कन्हैयालाल मिसरा एम०ए० गोल्ड मेडलिस्ट को अब जाकर अपनी पत्नी की डौल-डौली वाली फरमाइश का मतलब समझ में आया, लेकिन तब आया जबकि वह शब्द परिस्थितिवश नासूर बनने की धमकी देने लगा था। पूरे दो घंटों के अथक परिश्रम के बाद वे अपनी सीला को समझा पाए कि डौली मुखर्जी तो उस औरत का नाम है। कहा, "तुमको तो स्कूल इस्पेक्ट्रेस की भावज बनने से एडवांटेज रहेगा सीलो। परसों उससे दोस्ती कर लो, फिर एक दिन टी-पार्टी करके उसका लेक्चर कराना, फिर क्लब खोल देना। डौली के सहारे तुम लीडर बन सकती हो लीडर।"

मैडम सीलो की समझ में यह बात आ गई लेकिन खुट्टी को मिट्टी में बदलने की शर्त रखते हुए उन्होंने कहा, "अच्छा तुम खुसी से उसे डोली कहो पर हमें भी डोल कह के पुकारा करो।"

इस प्रकार मैडम सीलो अपने पास-पड़ोस में तीसरी 'डोल' बनी। लेकिन यह संतोष भी अधिक दिन न टिक सका क्योंकि उनके पड़ोसवाली कोठियों में मिसेज ढोल के यहां पहला रेफ्रिजिरेटर आ गया था। सुनकर कन्हैया बाबू की डोल को रात-भर नींद न आई।

टेसन पर किसीको भेज देना। और गाड़ी की नमैं हमारे चिरंजिउ बचवा के परोगाम अर्थात् नक्स इगनिस माफा का है जो हमारे बचवा बोलते हैं, उसी पर निरभर करता है। सो अपने आदमी को उन दिन सबेरे से रात तक टेसन पर हर गाड़ी देखने की ताकीद कर देना और वो गाड़ी से उतरते ही उन्हें गोटे का हार पहिनायके बाद गरम जिलाय के पान अपेंड करें और किसीकी मोटर पर बिठाय के तुम्हारे घर पर लावें। क्योंकि हमारे चिरंजिउ बचवा बीए पास अफसर हैं उनका मिजाज न बिगड़ पावे और तकलीफ जरा भी न होय। उनकी अपनी सगी मासी मलहजैं न होने के कारड से उनका मन न कुम्हलावें सो अपने मुहल्ले में मुहबोली मासियों से उन्हें होली जरा हौंसते से खिलाय देना। और हजरतगज अमीनाबाद घुमाना। और इमामबाड़े दिखाय देना। और सनीमा बाइसकोप चाइटोस का सत्कार भी भरपूर रीती से करना क्योंकि चिरंजिउ बचवा हमारी चौदह पीड़ियों में पहले कुलदीपक बीए पास मिनेट्री इंस्पेक्टर भए हैं। और सुभनौरात्र में हमारी सौभागवती बहू अर्थात् आपकी सुपुत्तरी को हमारे चि० बचवा के साथ बिदा कर देना। और रुँपैया दुइ हजार जौन दहेज का बाकी है सो भी उनके हस्तू अवस्य अवस्यमेव भेज देना। क्योंकि हमारे कुल की सनातन रीती ये है कि बहू आवें तो घर में लच्छमी लेके आवें नहीं तो हमारे द्वारे पर एक टाग से ठाढ़ी रहे। सो इससे हमारे बचवा की बहू को कस्ट होवेगा। और अब उसे एफे पास करावने की जरूरत नहीं है क्योंकि उसके पतिदेव अर्थात् हमारे चिरंजिउ बचवा आपैं सकल गुडनिधान हैं। सो नौरात्र में वह अवस्य हमारे घर आय जावें और दुइ हजार रुँपैया हमारा लेती आवें। रुँपैया नही पहुंचने से हम चिरंजिउ बचवा का दूसरा बिवाह कर देवैंगे। हमारे पास पचीस हजार दहेज में देने की बात आय चुकी है सं जानना। थोड़ा लिखा बहुत मानना। इती। मिती फागुन सुदी ७ सम्मत २०१८ वि०।"

मीरा की अनन्य सखी गीता और उसके भाई कामेश्वर के पारे चढ़ने लगे। मिसरी काकी के चेहरे पर चिन्ता और घबराहट व्याप गई

सोमेश्वरजी की पत्नी कलियुग और मीना के ससुर को कोसने लगी।

गीता-मीता की आपसी बातें चलीं। रोते-रोते मीना की आखें सूज आईं, उसका पढ़ना छूट रहा था, उसकी असहाय मा के ऊपर दो हजार रुपयों का बड़ा चिन्ता-भार आ गया और उसके पति आनेवाले थे, जिनसे उसकी कोई जान-पहचान नही। ब्याह के समय ही दो हजार रुपया न मिलने के कारण उसके ससुर बिना उसे विदा कराए ही लौट गए थे। अन्य ब्याही हुई सखियों के पति प्रेम-पातिया भेजा करते हैं, मगर मीना के पति ने ब्याह के इन तेरह महीनों मे प्रेम-पत्रो की कौन कहे, अपने हाथ से उसका नाम लिखकर कभी एक कोरा लिफाफा भी नहीं भेजा। जी मे न जाने कितनी हायें छिपाए बैठी है। पति को उसने ब्याह के अवसर पर छिपकर दो-चार झलक देखा है, सुन्दर तो हैं पर अक्खड़ हैं। उन्होंने तो शायद मीना को देखा भी नहीं है। ये कैसा पिया-मिलन है···कितनी चिन्ता, कितना भय ! "मैं मर जाऊंगी, कमरे मे फांसी लगा लूंगी। मैं ही सारी आपदाओं की जड़ हूं। मैं अभागी हूं, धरती माता की छाती का बोझ हूं···" इत्यादि बातें एक प्रकार के हिस्टीरिया के उफान मे वह गीता के आगे बकती ही चली गई। गीता उसकी दशा देख सहम गई, उसने अपने घर जाकर कहा। उसके पिता और भाई उसी प्रसग को लेकर बातें कर रहे थे, उसकी मा गभीर बैठी थीं और मिसरी चाची रो रही थी। भाई को बातो मे जोश भरते देखकर सखी के सन्ताप से तपी हुई गीता भी क्रान्तिकारी बन गई। सोमेश्वरजी बोले, "अच्छा, बकवास बन्द कर और मीनू को यहा बुला ला। कामे, अभी तो टाइम है, जाओ, दोनो बहनों को पिक्चर दिखा लाओ।" बेटे-बेटी के कमरे मे जाने के बाद सोमेश्वरजी ने मीना की मा से कहा, "मैंने अच्छी तरह सोच लिया है भाभी। कामे बिलकुल ठीक कह रहा है। तुम अपने भाई के यहां चली जाओ। दामाद साहब की खातिर-दारी उनके साले-सालियो को ही करने दो। होली का मौसम है, और इसी-के लिए वे आ भी रहे हैं। फिर हम लोग तो हर समय यहा मौजूद रहेंगे ही। कोई चिन्ता करने की बात नहीं है।"

२

मिस्टर रामगुलाम त्रिवेदी बी० ए० सैनिटरी इंस्पेक्टर निश्चित ति
पर रात के साढ़े आठ बजे की गाड़ी से चारबाग स्टेशन पर पधारे। गा
के प्लेटफार्म में प्रवेश करने से पहले ही अच्छी तरह सज-बजकर दरवा
खोलकर खड़े हो गए थे, जिससे कि उनका ससुराली स्वागतकर्ता दूर से
देखकर उन्हें पहचानने के लिए गोटे का हार सम्हाल ले। एक अफमोस-भ
विचार यह भी आया कि बप्पाजी ने गोटे के हार के साथ-साथ फोटोग्राफ
लाने का आदेश न देकर गलती की, वरना शान आ जाती। मगर गाड़
रुकते ही सारी शान हवा हो गई, कोई उन्हें लेने ही न आया था। चार
ओर आंखें फाड़े देख रहे थे और कलेजा भुना रहा था। कुली कम्पार्टमेंट
से सामान उतारकर कब तक प्लेटफार्म पर खड़ा रहता। आखिर उसक
झल-झल हो ही गई। ये साहबी रौब दिखाने लगे, तैश में आकर गाली भ
दे डाली। कुली विनम्र हो गया, बोला, "हुजूर, हमारे उस्ताद कहा करते
थे कि जो गालियां दे, उसे कुली-कबाड़ी ही समझना। तो हुजूर किस टेशन
पर बोझा ढोते हैं?"

हुजूर क्रोध के मारे आपा खो बैठे। प्लेटफार्म पर खड़े लोग-बाग उन्हें
देखने लगे। कुली हंसा और लोगों से कहने लगा, "साहबो, आप लोगों ने
अभी इनकी बाबू-मार्का अकड़ का 'नमूना' तो देख ही लिया, अब मेरी कुली-
मार्का अकड़ का मजा भी देखिएगा। आज इन्हींसे इनका सामान न उठ-
वाया तो मेरा नाम फकीरे नहीं। चारबाग टेसन का एक भी कुली इनका
असबाब नहीं उठाएगा।"

मि० रामगुलाम उफनते रहे। थोड़ी देर में दो-चार कुली लौटकर
आए भी, पर इनके कुली ने सबको मना कर दिया। ये स्टेशन मास्टर से
रिपोर्ट करने चले। दस कदम ही बढ़े होंगे कि इनके कुली ने अपने किसी
साथी से कहा, "अमा नूरमम्मद, ये लावारिस सामान पड़ा है भाई। इसे
ठिकाने लगा दो।" रामगुलाम डर गए कि सामान न सिड़ी हो जाए।

लौटकर मुंह फुलाए हुए अपने बिस्तर पर बैठ गए। लेकिन कब तक बैठते। हाथ मारकर मुन्नी की खुशामद को सब बाहर आए।

ससुराली गली के मुहल्ले पर फिर मुसीबत आई। इन्हें अपनी ससुराल के घर का नक्शा ठीक-ठीक मालूम न था और इनके ससुर बन्नीदीन पांडे को मरे इतने बरस बीत चुके थे कि आम तौर पर नये लोगों को उनका पता भी न था। कामेश्वर इनकी बाट में तो था ही, दूर से देखते ही पहचान गया और घर जाकर खबर कर दी। इधर रामगुलाम भी एक बूढ़े सज्जन से पता पाकर और अपना सामान तमोली की निगरानी में छोड़कर गली में पैठे और टटोलते हुए अपनी ससुराल के दरवाजे पर पहुंच गए। वहां ताला बंद देखा। सारी अकड़ निकल गई, किंकर्तव्यविमूढ़ हो गए। मीना मौसी के घर उनके साथ ऊपर वाले कमरे में खड़ी छिपकर देख रही थी। कामेश्वर अपने घर से बाहर आया। इन्हें देखकर डपटा

"कौन हो जी? यहां क्यों खड़े हो?"

"बन्नीदीन पांडे का घर—"

"मर गए वो। कई बरस हुए।"

"मगर उनकी वाइफ तो—"

"यहां है नहीं, कानपुर गई है।"

"और उनकी लड़की—"

"क्यों साहब, आपको शर्म नहीं आती किसी शरीफ लड़की के सम्बन्ध में यों पूछते हुए? बदनाम करना चाहते हैं बेचारी को। कौन हैं आप?" कामेश्वर ने घूरकर पूछा। मिस्टर रामगुलाम सकपका गए, विनय से बोले, "आई एम—अ-अ-रेस्प-हर हजबैण्ड। माई नेम इज रामगुलाम त्रिवेदी।"

"ओ हो, तो आप ही हैं मि० गुलाम। वेरी ग्लैड टु मीट यू। मेरा नाम कामेश्वर दुबे है। मुहल्ले और पड़ोस के नाते से मीना मेरी बहन है। अरे मीना, ओ मीना, अरे, अपनी मीनू के गुलाम आए हैं भाई। आइए, मेरी बैठक में तशरीफ ले चलिए। सामान कहां है आपका?"

नाश्ता आया। गीता, कामे और रामगुलाम बैठक में बैठे। थोड़ी देर में नौकर चाय लेकर आया। कामेश्वर ने कहना शुरू किया, "आपके फादर का लेटर आया था। काकी हमारी यानी आपकी सास तो यहां करीब पन्द्रह-बीस रोज से नहीं हैं, अपने भाई के यहां गई हैं, इसलिए मीना ने ही वह पत्र पढ़ा। आगबबूला हो गई। आप तो जानते ही हैं माडर्न ज़माने की लड़की है। उसने पुलिस में रिपोर्ट कर दी है कि मेरे ससुर अपने बेटे पर अनुचित दबाव डालकर मेरे रहते उनका दूसरा विवाह करना चाहते हैं और मेरी मां को डरा-धमकाकर दो हज़ार रुपया वसूल करना चाहते हैं।

मिस्टर रामगुलाम अपने बाप के खिलाफ़ पुलिस में रिपोर्ट किए जाने की खबर सुनकर परेशान हो गए।

गीता बोली, "आपके पिता की ये हिम्मत कि वो मेरी सखी को एक टांग से अपने दरवाज़े पर खड़ा रक्खेंगे! आपको मालूम है कि पुलिस मिनिस्टर की लड़की हम लोगों के साथ पढ़ती है। उसने अपने फ़ादर से कह दिया है और मिनिस्टर साहब ने कहा है कि मैं शिवगुलाम, रामगुलाम से जेल में खड़ी चक्की पिसवाऊंगा। आपको मालूम है, एक पत्नी के रहते अब दूसरा विवाह नहीं हो सकता, ये कानून बन चुका है।"

रामगुलाम घबराकर बोले, "नहीं-नहीं, हमारा ये इण्टेंसन नहीं था।" अंग्रेज़ी शब्द के देहाती उच्चारण को सुनकर भाई-बहन को मज़ा आ गया। कामे बोला, "क्यों मि० गुलाम ये इण्टेंसन किस भाषा का शब्द है?"

"जी इंगलिस का है?"

"और ये इंगलिस किस चिड़िया का नाम है?" गीता ने सवाल किया। रामगुलाम बुरा मानकर चुप हो गए और फिर त्यौरी चढ़ाकर प्रश्न किया, "मीना भी क्या अपनी मदर के पास चली गई है?"

"नहीं, वो तो हमारे यहां ही रहती है आजकल।" कामे के ये कहते ही रामगुलाम आतुर होकर बोल उठे, "उसे बुलवा दीजिए।"

गीता बोली, 'क्यों?"

"मैं-मैं मिलना चाहता हूं।"

"अदालत में ही मिल लीजिएगा अब। आपको तलाक देकर वह भी अब दूसरी शादी करनेवाली है।"

गीता की इस बात ने मि० रामगुलाम की सिट्टी-पिट्टी गुम कर दी। मीना दरवाज़े के बाहर से सटी खड़ी हुई सब सुन रही थी। तभी सोमेश्वर जी आए, कामे से बोले, "अब इनको भोजन-वोजन कराओ भाई, भूखे होंगे बेचारे।"

"जी मुझे भूख नहीं है।"

"अभी तो मैंने इतनी गालियां नहीं दीं जीजाजी, कि आपका पेट भर गया हो।" गीता ने कहा।

"नहीं-नहीं गीताजी, बात यह है कि मेरा पेट खराब है।"

"वो तो अदालती नोटिस के जुलाब से ठीक हो जायगा।" गीता कह-कर उनके भोजन का प्रबन्ध करने के लिए चली आई।

दामाद के ठहरने की व्यवस्था ससुराली घर में ही की गई थी। जिस कमरे में उनका पलंग बिछाया गया था, उसमें मीना का एक चित्र भी टंगा था—दो चोटियां, उनमें फूलदार रिबन; बड़ी-बड़ी शरबती आंखें, होंठों पर मुस्कान देखकर कुम्हार के आवें की तरह उनके कलेजे से आहों का धुआं निकलने लगा। उसी भड़क में इस महत्त्व ख्याल की लपट भी एकाएक उठी, कि हाय, मेरी वाइफ का नाम भी एकदम फिल्मी है—मीनाकुमारी! उफ मीना! हाय-मीना!

कामे भी इसी घर में सोने के लिए भेजा गया था। वह दूसरे कमरे में लेटा हुआ पढ़ रहा था। रामगुलाम के अरमान उबले आलू की तरह फटे जा रहे थे, गरब, गुमान और संकोच के छिलके उतरे-उतरे पड़ रहे थे। न रहा गया तो कामेश्वर के पास पहुंचे।

"क्यों गुलाम, क्या बात है?" उसने देखते ही पूछा।

"भाई साहब, मेरी वाइफ को बुलवा दीजिए। मैं सारी सिचुएशन उन्हें समझा दूंगा। फादर कुछ भी कहें, पर मैं मीना को लव करता हूं।"

"अमां अभी देखा तक तो है नहीं, लव कैसे हो गया ?" कामे ने उनकी ओर सिगरेट बढ़ाते हुए पूछा। रामगुलाम के मन की आखों के आगे मीना की फोटो नाच रही थी, बोले, "मेरा लव बहुत ग्रेट है भाई साहब। आपसे क्या छिपाऊं, जब से उस कमरे मे मैंने अपनी वाइफ का फोटोग्राफ देखा है तब से—"

कामे बोला, "भई, अब लव करने से लाभ ही क्या होगा। मीनू तो तुम्हें तलाक देने पर तुली हुई है। वो कहती है कि तुमने कभी उसे एक लव-लेटर तक नहीं लिखा। दो हज़ार रुपयों के पीछे उसे ठुकरा दिया—"

"नईं-नईं, मेरा इसमें दोष नहीं भाई साहब। मेरे फादर अमल में वेरी ओल्ड आइडियाज़ के हैं—"

"मगर आप तो ग्रेजुएट हैं, ऊपर से सैनिटरी इस्पेक्टर भी हैं। आपने अपने बाप के दिमाग की गंदी नालियों को साफ क्यों न किया ?" कामे ने *सिगरेट का कश खींचकर धुआं उनके मुह पर छोड दिया।*

धुएं को हाथ से हटाते हुए रामगुलाम सास खीलाकर बोले, "उन्हें अब समझाया नही जा सकता।"

"उन्हें समझाया नहीं जा सकता और आप उनकी आज्ञा के बिना कुछ समझ नही सकते, चलिए, झगड़ा निपट गया। अब तलाक के बाद आपके भाग्य और आपके पिता की समझ के अनुसार कोई काली-कलूटी चिकचिकानी चिपचिपानी लट्ठ देहानी बीवी आपको मिलेगी और मीना को कोई ऐसा पढ़ा-लिखा 'सुंदर' समझदार युवक, जो उस जैसी पढ़ी-लिखी सुदर सुशील स्त्री का पति बन सके।"

रामगुलाम के कलेजे पर आरा चल गया, तड़पकर बोले, "भाई साहब, तलाक की बात क्यों उठाते हैं ? मीना मेरी पत्नी है।"

"जी नही, आपकी पत्नी होती तो आप अपने बाप से साफ कह देते कि दो हज़ार रुपयों के पीछे आप उसे नहीं छोड़ेंगे।"

"पर भाई साहब, मैंने ही तो बोल दिया कि मैं होली पर लखनऊ जाऊंगा नहीं तो सन्यासी हो जाऊंगा।"

"ठीक है तो अब आप संन्यासी हो जाइए। मुझे नींद आ रही है।"

रामगुलाम आहें भरते हुए अपने कमरे में लौट आए, मीना की तस्वीर उन्हें विरही बनाने लगी, तस्वीर उतारकर पलंग पर रख ली। बड़ी मुश्किल से नींद आई।

३

मुंह पर कुछ ठंडा-सा टपका। नींद ही में हाथ मुंह पर पहुंचकर फिसल गया। करवट उसी ओर बदल गई। हथेली गाल के नीचे ही दबी रही। नाक खर्र-खों बोलती रही। फिर हथेली के किनारे गाल पर कुछ ठंडा-ठंडा लद् से गिरा, हथेली बढ़कर नाक तक फिसल गई। नाक की खर्र-खों इस घटना से खचड़ा मोटर की तरह फुफकारने के बाद फिर से स्पीड पकड़ने के लिए सूं-खुर्र सूऽऽ खर्र-खर्र के बाद खों-खों का सुर साध भी न पाई थी कि दूसरे गाल पर कुछ ठंडा-ठंडा लद् से टपका। नाक बजना बंद। दूसरा हाथ उठा पर छाती तक पहुंचते-पहुंचते अलसाकर वहीं पड़ रहा। नाक ने फिर सुषकारी साधनी चाही, पर गाल पर टपकी वस्तु ने गहरी नींद में अलसेट डाली, हाथ उठकर गाल पर पहुंच गया। चूंकि वस्तु गाढ़ी थी। इसलिए कुछ देर तक हाथ गाल को रगड़ता रहा। फिर एकदम से चौंकानेवाला ठहाका; आंख खुल गई। रामगुलाम ने देखा, उनके सामने चार-चार सूरतों में, कुरते, सलवार, दुपट्टे, साड़ी-ब्लाउज में हसीन नमकीन गोरी सांवली जवानी खड़ी हंस रही थी। ये सकते में आ गए। इन्हें जागा देखकर चारों एकदम चुप हो गईं, कवायदी ढंग से चारों एकसाथ दो कदम पीछे हट गईं और झुक-झुक के सलाम करने लगीं। ये घबरा के उठ बैठे। उनमें से एक ने अपनी हंसी रोकने की कोशिशों के साथ ही साथ कहना शुरू किया, "आपके बप्पाजी के आदेशानुसार हम आपकी मुंहबोली सालियां होली खेलने के लिए यहां तैनात की गई हैं। हमें दुख है कि आपके बप्पाजी की आज्ञानुसार हम अभी आपकी मुंहबोली सलहजों को इकट्ठा नहीं कर पाए हैं, उनका भी प्रबंध किया जा रहा है।"

ये बेचारे हे-हें-हे करने लगे। इतने में एक ने लपककर पलंग से मीना का फोटो उठाया। फिर तो ले-दे मच गई। फिर मीना और उनके नाक-नक्शे से जोड़ा मिलाया जाने लगा। फिर लालच दी गई कि जब फोटो के पीछे ये इतने दीवाने हुए हैं तब···

एक बार दूर ही से सही मगर एक झलक मीना को इन्हें दिखला देना चाहिए।

गीता गंभीर होकर बोली, "भई पराये मर्द के सामने उसे कैसे लाया जाय।"

"क्यों, शादी तो इन्हींसे हुई थी?" सरला ने कहा।

'नहीं, उसकी शादी तो रामगुलाम से हुई थी।"

"तो ये कौन है?"

"ये वप्पाजी गुलाम है।" बस फिर तो इसी नाम की धूम मच गई। एक ने शुरू किया 'वप्' दूसरी ने 'पाजी' जोड़ा, तीसरी ने 'गुलाम' कहा। फिर कोरस गाना-सा जुड़ गया। सबकी सब ताली दे-देकर गाने लगीं—

आ हा हा हा हा!
पाजी गुलाम
वप्।—
पाजी गुलाम!

रामगुलाम नर्वस हो गए, सफाई देने लगे, कहा, "नहीं-नहीं, मैं बिलकुल इंडिपेंडेंट आदमी हूं। मेरे फादर पुराने विचारों के है लेकिन मैं–मैं–मैं माडर्न हूं।"

"हां-हां तभी तो दो हजार के लिए अपनी पत्नी को छोड़ गए हैं।" —एक।

'बेचारी मीना की मदर को आप दो हजार रुपयों के लिए अपमानित करना चाहते है?"—दो।

"और अगर रुपया न मिलेगा तो हमारी मीना अपनी ससुराल के दर-वाजे पर एक टांग से खड़ी रखी जाएगी? गांववाले उसका तमाशा देखेंगे

और आप इंडिपेंडेंट माडर्न आदमी चुपचाप सिर झुकाए बप्पाजी गुलाम बने रहेंगे! आपके फादर को तो मीना की तरफ से नोटिस भेजा ही गया है, अब उससे हम आपको भी तलाक दिलवाकर ही छोड़ेंगी। नहीं तो आपकी मूछें मुड़वाके छोड़ेंगी।" —तीन, चार, एक, दो—एक, दो, तीन, चार—दनादन चतुर्मुखी शक्ति उनके कानों और मन को घेरने लगी। मन से बड़ी ना-ना-ना उमड़ती थी मगर डर के मारे आवाज़ नहीं फूटती थी। बेचारे घबराकर रोने लगे।

तभी कामेश्वर पहुंचा। बोला, "क्यों गुलाम, रो रहे हो माई डियर! हाय-हाय, क्या सूरत बनाई है सालियों ने तुम्हारी, आधे लाल, आधे काले, क्या खूबसूरत छवि बनी है आपकी।" वह हंसा, नज़र लड़कियों की तरफ गई और उधर से भी ठहाके फूट पड़े। रामगुलाम रोना भूलकर अपने चेहरे की चिंता में पड़े। गीता हंसती हुई शीशा उठाकर उनके सामने ले गई। रामगुलाम ने अपना चेहरा देखा, फिर उलटकर हथेलियां देखीं, फिर सबकी ओर देखा और झेंपकर हंस पड़ा।

घंटे-दो घंटे के अंदर ही वे इतने बहादुर बन गए कि मैं मीना को अपने साथ सीधा हरदोई ले जाऊंगा। वहां मेरा घर है। फादर कुछ नहीं कर सकते। मैं भारतीय संस्कृति की वजह से उनका लिहाज़ करता हूं। मगर मैं अब बिलकुल नहीं डरता।

गीता बोली, "आज शाम को पिक्चर देखने चलेंगे। मैंने मीना को भी किसी तरह मना लिया है। मगर वह कहती है कि मुछक्कड़ मियां के साथ न जाऊंगी।"

आधी बात सुनकर जैसी गुदगुदी मन में उठी थी, पूरी सुनकर वैसी ही दहशत भी हुई। मूछें मुड़ी देखेंगे तो बप्पाजी नौ-नौ बांस उछलेंगे, मारपीट पर भी आमादा हो सकते हैं।···लेकिन, लेकिन मैं स्वतन्त्र हूं। मैं क्यों उनके दकियानूस विचारों से बंधूं।···मगर शायद ये गीता···

"क्यों बप्पाजी गुलाम! ढे बोल गई?" गीता ने अपनी आंखों, हाथों और हंसी में तीखे व्यंग्य की मुद्रा साधकर कहा।

"नहीं-नहीं, मैं-मैं उनसे बिलकुल नहीं डरता। मैं तो माडर्न आदमी हूं।"

"तो गुलाम बुलवाऊं नाऊ को ?" कामे ने पूछा।

"नहीं-नहीं, मैं खुद ही सेव करता हूं। कर लूंगा," रामगुलाम बोले।

"अमा सेव तो करते ही हो रोज मगर आज सेव करवा लो। गीतू, छिद्दा से कह, लपककर नाऊ को बुला लाए।"

फिर तो मुछमुण्डा होने ही बना। इनाम में राजाती-रिसाती और छूटकर भागने की कोशिश करती हुई मीना को गीता और सरला ने जबर्दस्ती ला खड़ा किया। सारा दिन खाते-पीते, हंसते-बोलते ही बीत गया। शाम को गीता और मीना के साथ रामगुलाम पिक्चर देखने गए।

लौटकर घर आए। दरवाजे से दस कदम पहले ही गली में चलते-चलते एक दहाड़ता हुआ स्वर सुनकर रामगुलाम के पैर सुन्न हो गए। आवाज आ रही थी—"हमारी उमिर सारी मुकदमे लड़ाने में बीती है। हमें कानून क्या सिखाते हैं। अरे जो बचवा का बेहाव नहीं कर पाऊंगा तो रण्डी-रखैल रख दूंगा उसके लिए। चाहे आगे का वंस न चलै मेरा, पर वल्लीदीन की बिटिया अब मेरी देहरी हरगिज-हरगिज न लांघ सकैगी। उसने मुझे नोटिस भेजा, मुझे ! हैं ?"

गीता, मीना और रामगुलाम सुनते रहे। अन्दर से सोमेश्वरजी की आवाज आई, "लेकिन रामगुलामजी तो मुझसे कह रहे थे कि वे मीना को हरदोई ले जाएंगे, आपके यहां नहीं।"

"उसकी मजाल है कि हमारी आज्ञा के बिना कहीं लै जाए। मैं इसी खातिर आप बचवा को लिवाने आया हूं।'

"बप्पाजी के साथ जाइए गुलाम साहब।" गीता के बोलने पर रामगुलाम चौंके।

मीना गीता से बोली, "अब तुम तो घर चलो, या यहीं खड़ी रहोगी। इनको जहां जाना हो जाएं।" मीना मस्त होकर बोली और आगे बढ़ चली। रामगुलाम भी आगे बढ़े। सोमेश्वरजी के बैठके में उसके पिता एक स्थानीय नातेदार के साथ बैठे थे। सामना हुआ। शिवगुलाम

रामगुलाम की मूछविहीन सूरत देखकर पहले तो न पहचान पाए, पर जब वो पैर छूने लगे तो गरजकर कहा, "अच्छा, या कैदिन मां यू असर हुएगा! हम पांच हाथ के वँ—"

अपने भय को जीतने की घबराहट मे रामगुलाम अकड़कर बीच ही में बोल पड़े, "आप यहां क्यों आए ? किसने कहा था ?"

शिवगुलाम चौंक पड़े, फिर दूसरे झोंक मे ऐसा तैश चढ़ा कि लडके को गालियां देने मारने झपटे। सोमेश्वरजी ने उन्हें थाम लिया। रामगुलाम भी स्वमान रक्षा की चिन्ता मे क्रोध के मारे उबल पड़े। बाप ने आकर काम बिगाड दिया, किसी तरह तो मीना प्रसन्न हुई थी। वह ये देखकर क्या सोचेगी ! इस विचार ने आग मे घी डाला, बोले, "आप ार इस तरीके से पेश आएगे तो मैं आपके खिलाफ पुलिस मे रिपोर्ट ववाऊगा। अगर अपना मान रखना चाहते हैं तो मेरे और मेरी वाइफ मामले मे न बोलिए। समाजवादी जुग मे मैं आपकी ओल्ड फैसन की तें नहीं मानूगा।"

"कुलंगार, मैं तुझे अपनी जैजाद से फूटी कौड़ी भी तुझे न दूगा।" वगुलाम फिर गरजे। पर अब तो रामगुलाम की लोई भी उतर गई । बराबरी की टक्कर से गरजकर उत्तर दिया, "मुझे नहीं चाहिए पकी धन-सपत्ति। मैं आपकी गलत इच्छा के लिए अपनी पत्नी को नही ाड़ सकता।"

नानेदार बोले, "और पत्नी के लिए बाप को छोड दोगे। यही पढ़े-खे हो बेटा ?"

"मैं तो इन्हें छोड़ना नही चाहता, पर जो ये चाहे कि गलत-सही अपने ा का ही हुकुम चलाएगे, तो वह अब मैं नहीं मानूगा।"

"मैं अनसन करूंगा ! यही बल्लीदीन के द्वारे पर प्रान दूगा।" वगुलाम तड़पे, फिर अपने नानेदार से कहा, "भगवानसहाय, अब तुम र जाओ बेटा। मैं गली मे बैठके परान दूगा। आने-जाने से कहूंगा कि सपूत है।"

रामगुलाम झुंझला गया बोला, "आप चाहे जो कीजिए। मैं भी पुलिस में रिपोर्ट कर दूंगा कि ये मुझपर अनुचित दबाव डाल रहे हैं। कामेश्वरजी, आप कोतवाली टेलीफोन कर दें। मैं भी गवाही दूंगा कि ये बाप नहीं कसाई हैं।"

शिवगुलाम स्तंभित खड़े रहे, फिर धीमे स्वर में कहा, "यहै तुम्हार अंतिम फैसला आय ?"

"हां, और क्या करूं, जब आप नहीं मानते तो।" रामगुलाम ने उत्तर दिया।

"तौ हमारी अंतिम फैसला सुनि लेव रामगुलाम—"

"सोच-समझ के बोलिएगा बप्पाजी। मेरे पास आपकी सब चिट्ठियां रक्खी हैं और बहुत-सी चिट्ठियों में आपने अपनी जालसाजियों का ब्योरा खुद ही बड़ी शान से लिखा है।"

रामगुलाम ने धीरे से पिता के कान में कहा।

शिवगुलाम ने एक ठंडी सांस छोड़ी, लड़के के चेहरे को ताका, फिर बोले, "आज हमार मोंछ नीची हुइगै। अब हम हूं मोंछ मुड़ाय लाव। चलौ भगवानसहाय, हमरे बचवा रामगुलाम अब ओरू-गुलाम हुइगे हैं।"

लार्ड लिलनियगो का रेडियो

बरसों की बड़ी साध के बाद, मेहतर-मेहतरानियों से वसूली हुई रिश्वत की चवन्नी-अठन्निया जोड़-जोड़कर परसाल पहली अप्रैल के दिन वाल्दे के ी राधेरमन साहब एक देसी 'शलवार' रेडियो लाए थे। पूरे डेढ़ सौ रेडियो खरीदा और एरियल-लाइसेंस आदि के लिए बीस रुपये ऊपर खर्च किए। महीना-पन्द्रह दिनों तक वह खूब बजा। अड़ोसी-पड़ोसियों बड़ा रंग गठा कि मुंशीजी लार्ड लिलनियगो का रेडियो लाए हैं। यह ाल जर्मन 'शौल्मर' है। जब नया था तब पांच हजार का था, अब पांच ः में खरीदा है। वह भी लार्डी सिफारिश से मिला है। इस तरह की दड़ी-ड़ी डींगियां मुंशी और मुंशियाइन ने हांकी, पर बीस-बाईस दिन भी न ते थे कि 'शलवार' की बखिया उधड़ने लगी। दो-चार दिन खड़खड़, सू-ृ बिया, फिर बजना ही बन्द हो गया। खैर, दूकानवाले ने चूंकि माल-भर ी गारंटी लिखकर दी थी, इसलिए जाकर बनवा लाए। मगर वह साल । दस बार बिगड़ा, कभी घर्र-घर्र, कभी कू-कू बोलने लगता था। अपने नोरंजन में तो मुंशीजी को विघ्न पड़ना ही था, ऊपर से घरवाली के ानें और मुहल्लेवालों के मज़ाक सुनने पड़ते थे। पहले तो 'शलवार' ने विविधभारती और रेडियो सीलोन भी सुनाया, पर बाद में दस बार ठीक होने पर भी उन सनियों में मुंशीजी के रेडियो की सुई फिर कभी घूम ही

न सकी।

आज फिर पहली अप्रैल थी। दिन में जनाना प्रोग्राम सुनाते-सुनाते रेडियो बन्द हो गया। मुंशियाइन का गुस्सा मन ही मन में सातवें अकास पर चढ़ गया। शाम को मुंशीजी के घर आते ही उनकी ले-दे शुरू हो गई, "आदमी अभागा हो तो कोई बात नहीं, पर बेअकल हो तो कैसे निभे? पौने दो सौ की हाथी जैसी रकम निकल गई और निगोड़े दूकानदार ने ये मरी-हत्या हमारे गले मढ़ दी। मगर कौन कहे इनसे। बाल्दे के मुंशी ठैरे, शहर-भर के मेहतर-मेहतरानियों के आला आफिसर ठैरे, अभी कुछ कह दो तो हजार झाड़ुओं से कहनेवाले का मूं पिटवा के धर दे।" मुंशीजी साप के सूंघे-से गुमसुम बैठे रहे, फिर ताव आया तो रेडियो उठाकर सीधे, स्पेस रेडियो के काने मालिक सरदार गुल्फामसिंह से लड़ने चल दिए।

सरदार गुल्फामसिंह गरीब शौकीनों के रेडियो-विक्रेता थे। पन्द्रह रुपये के त्रिस्टल और अस्सी या सौ-सवा सौ तक के हाथ से बने ट्रांजिस्टर तथा सैकेण्ड हैंड रेडियो बेचते थे। इनके बनाए हुए ट्रांजिस्टर का नाम 'डार्लिंग' रेडियो था और मरम्मत किए हुए पुराने रेडियो नई खोल में 'शलवार' और 'लाल दुपट्टा' के नाम से बिकते थे। मुंशीजी का 'शलवार' जिसे वे असली मेड इन जरमनी 'शैलमर' बतलाते थे, देखने में बड़ा एरि-स्टोक्रेटिक था। उसकी शान-बान पर रीझकर ही मुंशीजी ने डेढ़ सौ रुपये खर्च किए थे। होशियारी जतलाने के लिए उन्होंने सरदारजी से एक साल की गारण्टी भी लिखा ली थी। आज जब मुंशीजी ने सरदारजी को एक साल की गारण्टी दिखलाई तो वे बड़ी बेरुखाई से बोले, "प्रटी वा इक्क साल पूरा हो गया जी, अब मरम्मत के पैसे पड़ेंगे।"

"पूरा कैसे हो गया? आज पहली तारीख है।"

"तो मैं कब नाहीं करता हूं कि नई है।"

"तब फिर?"

"फिर क्या जी मुंशीजी, आप तो पढ़े-लिखे हैं, गौरमिंट का कानून

२

"अरे गुनती हो, ज़रा रेडियो को चपत तो मार दो एक।"

मुंशी गाट पर लेटे हुए सुबह का बासी अखबार पढ़ रहे थे और मुंशियाइन रेडियो से ज़रा दूर पर बैठी स्वेटर बुन रही थीं।

"ऊंह, यह एक और काम बढ़ गया है मरा—चल, चल, बेशरम रेडियो चपत खाकर फिर चालू हो गया, मगर मुंशीजी को अपनी पत्नी के द्वारा इतनी ज़ोर-ज़ोर से उसे चपतें मारना खल गया, बोले, "अरे इतने ज़ोर से न मारा करो। पुरानी मशीन है, बिगड़ गई तो हम इतने मनोरंजन से भी हाथ धो बैठेंगे।"

मुंशियाइन झुंझला उठीं, कहा, "मरा तुम्हारा मनोरंजन। इसमें विविधभारती तक तो आता नहीं कि चार फ़िल्मी गाने सुनने को मिलें। जब देखो तब शास्त्री संगीत—ऍं-ऍं-ऍं-ऍं, निगोड़ा।"

मुंशीजी को भले ही शास्त्रीय संगीत न आता या सुहाता हो, पर जब उनका रेडियो सिर्फ वही सुना सकता है तो मजबूरी में उन्हें वही प्यारा भी लगता है। वे रौब से घुड़ककर बोले, "शास्त्रीय संगीत का मज़ाक उड़ाती हो? तुम्हें समझ भी है?"

"मुझे तो खैर नहीं ही है, पर क्या तुम्हें है समझ?"

"आह, शास्त्रीय संगीत! कैसा मीठा कैसा राग-भरा···वाह-वाह!"

"अच्छा बताओ, यह कौन-सा राग है?"

"ये? ये आदिताल में झिझौटी का मारू विहाग राग भीम पलासी गा रहा है। वाह, वाह, अहा-हा-हा!"

गाना खत्म हुआ। अनाउंसर ने बतलाया कि निसारखां गौड़-सारंग सुना रहे थे। मुंशियाइन हंस पड़ीं, बोलीं, "अब बोलो, कहां गई तुम्हारी संगीत की समझ? गौड़ सारंग को निगोड़ी झिझोड़ी बताते थे।"

मुंशीजी तप गए। मुंशियाइन भी उन्हें तपाने के मूड में आ गईं, पर इतने में ही मुंशीजी का ध्यान रेडियो के गूंगेपन पर गया, बिगड़ना छोड़-

कर पत्नी से कहा, "चपत, चपत, जल्दी से लगा तो दो एक-ठो।"

पत्नी ने उठकर रेडियो को चपत मारी; न बजा तो मुंशीजी घबराए, कहा, "एक चपत और मारो, जरा धीरे से भई, मशीन है। अरे, क्या बात है, फिर *मारो चपत। आज तो रेडियो चलना ही चाहिए। अभी बजट सुनाया जायगा।*"

पत्नी ने लगातार पांच-छह चपतें मारी। रेडियो थोड़ा खड़खड़ाकर रह गया। मुंशीजी हड़बड़ाकर उठे, रेडियो की सूई इधर-उधर घुमा कर फिर से ठिकाने पर लगा दी, ऊपर चपतें मारी, अगल-बगल ढोलक की तरह से उसे पीटा। रेडियो चलने लगा। फिल्मी गाने का प्रोग्राम आ रहा था। मुंशियाइन मगन हो गई, बोली, "ऐ है, मेरा फरमाइशी गाना है! हाय, निगोड़ा मुखड़ा तो सुनने को मिला ही नही।"

रेडियो के चल पड़ने से मुंशी राधेरमन का जी हरा-भरा हो गया था, इसलिए पत्नी की बात का रसीला उत्तर दिया, बोले, "अरे फरमाइशी मुखड़ा कही आसानी से दिखाई पड़ता है? याद करो, सुहागरात मे तुम्हीने अपना मुखड़ा दिखाने मे कितनी हीलोहुज्जत की थी।"

इससे पहले कि मुंशियाइन कुछ जवाब देती, दरवाजे पर दस्तक पड़ी, "अजी मुंशीजी, सो गए क्या? रेडियो तो बज रहा है अभी।"

"अरे, यह तो चड्ढाजी पुकार रहे हैं।"

चड्ढाजी अकेले नही, अपने साझेदार लाला भगवानदास के साथ रेडियो पर बजट का ब्योरा सुनने के लिए आए थे। मुंशी राधेरमन को अपने रेडियो पर अभिमान हुआ। गरीब-गुरबे, अड़ोसी-पड़ोसी तो रेडियो सुनने के लिए अक्सर ही आया करते थे, मगर आज उनका दानवार उर्फ मैलमर चर्चीवन माडल एक नही दो-दो लखपतियो को आकर्षित कर लाया था। यह अभिमान मुंशीजी के मन मे चन्द सेकेण्ड भी चैन से न टिक पाया था कि रेडियो के ठप हो जाने का भय उन्हे सता उठा। मौके पर रेडियो को चपत मारने के लिए वे पहले से ही सावधान होकर उसके पास ही कुर्सी खींचकर बैठ गए।

रिले ब्राडकास्ट होने में अभी तीन-चार मिनट बाकी थे। इधर-उधर की दो-चार बात करके कन्हैयालाल बोले, "आपका रेडियो देखने में तो बड़ा शानदार है मुंशीजी, पर पुराना लगता है, सेकिन्ड हैण्ड लिया था क्या ?"

सेकिंड हैंड की बात मुंशीजी ने ज़रा नाक सिकोड़कर स्वीकार की और बोले, "हुज़ूर, है तो सेकिंड हैंड ही, मगर शैल्मर है, शैल्मर थर्टीन माडल, मेड इन जर्मनी। यानी वह जर्मनी जबकि वहां का स्टैण्डर्ड एकदम टाप-क्लास था। ये चीज़ तो अब देखने को भी नहीं मिलती लालाजी। यह तो कहिए कि तकदीर थी जो ये मिल गया मुझे।"

तारीफों का पहला दौर खत्म भी न हो पाया था कि रेडियो में खर-खराहट शुरू हो गई। मुंशी राधेरमन का दिल धड़क उठा। धीमे हाथ से वे रेडियो पर ताल देने लगे। रेडियो रुकने न पाया, चलता रहा। मुंशीजी की जान में जान आई, मगर आकर एक मिनट बाद फिर लौट भी गई। रेडियो बजते-बजते रुक गया। मुंशीजी धर्म-संकट में पड़ गए। बाहरवालों के सामने रेडियो को आखिर थपथपाते भी तो क्योंकर? कुछ न सूझा तो [illegible] पर अपना पंजा इस तरह से पटका कि मालूम पड़े कि हाथ धोखे से रेडियो पर गिर पड़ा है। इस यत्न ने रेडियो को बजने के लिए मजबूर तो अवश्य किया, पर सीटियां बजने लगीं। मुंशीजी उबल पड़े; जो गालियां अक्सर वे अपने मातहत मेहतर-मेहतरानियों को दिया करते हैं उन्हीं में से एक मनसबदार के लिए भी निकल पड़ी। मेहमानों का ध्यान बिगाड़कर उन्होंने एक ज़ोर का तमाचा रसीद किया। मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों-ज्यों दवा की। ऐसा लगता था कि मानो मशीनगनें दागनेवाली एक [illegible]

हो गया चड्ढाजी, कहीं बजट निकल न जाय।"

मुशीजी ने झुंझलाकर जोर से चपत मारी। रेडियो को मानो शर्म आ गई, खट से चल पड़ा—"अब आप बजट सुनिए—(खर्र) लोक···भा में (घड़ घड़-घड़-घड़) का—जट पेश हुआ। एक सरसरी दृष्टि से ब··· (चपत) का नक्शा इस प्रकार है। गिलट तामचीनी और प्लास्टिक के आयात-निर्यात पर चार सौ बीस प्रतिशत मारी छूट दे दी गई है। तिलहन अलसी के तेल और मूगफली के तेल पर···" (चूं-खिड-खिड-खिड··· (चपत)।

चड्ढाजी झुंझलाकर बोले, "माडडाला इसने। यही तो सुनने आए थे।"

रेडियो एकाएक ठीक होकर चलने लगा, "साड़ियों और मेकअप आदि शृंगार-प्रमाधनों पर··· (भड़भड़)···दवाओं के दाम (सू-सू, खिर्र···)

भगवानदास बोले, "चलो यार चड्ढाजी, मजा किरकिरा हो गया।"

चड्ढाजी बोले, "हां यार, इससे अच्छा था कि हम लोग निरपाठीजी के यहां ही चले चलते। हमने तो समझा था कि मुशीजी का रेडियो अच्छा होगा, वैसे देखने में तो अच्छा ही है, मगर···"

लज्जा के मारे मुंशीजी ताव खा गए, बोले, "मगर-वगर कुछ नहीं चड्ढाजी, मौके की बात है कि यह फेल हो गया इस समय। मगर आप यह मत भूलिए कि ये हॉलमर है, हॉल्मर थर्टीवन माडल, मेड इन जर्मनी। एक अमरीकी क्यूरियो डीलर मुझे बारह सौ रुपये दे रहा था कि बेच दो, इसे म्यूजियम में रखूगा। लार्ड लिलनियगऊ का हिस्टोरिकल रेडियो है जनाब!"

"हां, चीज तो अब अजायबघर के लायक ही हो गई है। किसी कबाड़ी से खरीदा होगा आपने।"

चड्ढाजी की बात सुनकर मुंशीजी खिसियानी बिल्ली की तरह खभा नोचने के मूड में आ गए। क्रोध मे और कोई बात न सूझी तो एकाएक तड़ककर बोले, "चड्ढाजी, आपने मेरा नहीं बल्कि कहना चाहिए कि मट्र

की एक नामी दूकान 'स्पेस रेडियोज़' का अपमान किया है। मैं उसके मालिक से जरूर कहूंगा जाकर।"

"इस्पेस रेडियो ? अजी जानूं हूं, जानूं हूं। अपने गुलफाम सिंह की दूकान है जी। कबाड़ी तो हैही ससुरा।" लाला भगवानदास के द्वारा इस तरह दूकान और दूकानदार का भरम खुल जाने से मुंशीजी कट तो अवश्य गए पर अपने मन का कसाव न छोड़, अकड़कर बोले, "जी हां, गुल्फामसिंह का स्पेस रेडियो, वह काना जरूर है पर कबाड़ी कतई नहीं है।"

"अजी वो कबाड़ी, उसका बाप, उसका दादा कबाड़ी। तीन पीढ़ी से तो मैं ही जानू हूं।"

"हो सकता है कि आपकी यह बात भी सच हो, मगर मैं पूछता हूं, आपसे वास्ता ? मैं तो आपसे यह कहने नहीं गया था कि लाला भगवानदास आइए और मुझ मुफलिस के रेडियो का मखौल उड़ाइए।"

"आप तो बुरा मान गए मुंशीजी, मैंने आपको तो कुछ कहा नहीं है इस कबाड़खाने के माल को कहा है, जिसे आप रेडियो बतलाते हैं।"

"आप मेरा मज़ाक उड़ाएं या मेरे रेडियो का, बात एक ही है।"

"अजी हम क्या उड़ाएंगे, आपका मज़ाक तो मेहतरानियां उड़ाती हैं, जिनकी पुन की कमाई से आपने ये बम्गुनिस जैसा रेडियो खरीदा है, हे-हे-हे। चल भई बहुरा, निगाटीजी का रेडियो सुन लें, अभी तो अगरेजी में मजा आएगा।"

"ये···ये जगहंसाई की शकल है मेरे रेडियो की ? हुः, एक दिन वह भी था जब इसी शैल्मर को लाट-लाटनी और लाट बच्चे बजाते थे। मेरे दादे-पड़दादे नवाबों के चकलेदार थे और आज ये नौबत आ गई कि गरीबी में मेरी घरवाली ही मेरे शैल्मर थर्टीवन को नकटा बताती है। (ठंडी साँस लेकर) हाय, इस शानदार चीज की आज यह दुर्गत हो गई! डूब मरने को जी चाहता है।" कहते-कहते मुंशीजी की आंखों में आंसू आ गए।

"तुम तो बेकार ही दुखी होते हो जी। मैंने तुम्हें तो कुछ भी नहीं कहा। अब छोड़ो ये सब चिन्ता-फिकर। मरा काना-निगोड़ा, ये कूड़ा सौंप-कर पौने दो सौ रुपये हमसे झटक लिए नासपीटे ने। आग लग जाय उसकी दूकान में, हां—नहीं तो।"

पत्नी के इन कोसनों से मुंशीजी को कुछ तसल्ली हुई, बोले, "बस, मैंने तय कर लिया। इस शैल्मर को उस काने से नहीं बनवाऊंगा। मेरे मेहतर का लड़का बुलाकी रेडियो मिकैनिक है—"

पत्नी तपड़कर बोली, "हां-हां, मरी टोकरी की गंध ही बाकी बच गई है इस नासपीटे रेडियो में उड़लवाने से। छि-छि घिनौनी कमाई के पैसों से रेडियो खरीदा तो ये फल मिला, और अब उसमें घिनौने हाथ भी लगवाओगे मरे। मैं नहीं घुसने दूंगी घर में उसे, बताए देती हूं।"

"अब यह तो तुम्हारी ज्यादती है भई। महात्मा गांधी जैसे महापुरुष तो उन बेचारों को हरिजन बना गए, और तुम अब भी ऐसे विचार रखती हो। राम-राम।" मुंशीजी का मन सचमुच ही बड़ा खिन्न हो गया था। खीझकर बड़बड़ाना शुरू कर दिया, "मुफ्त में रेडियो बन जाता, बुलकिया अपने बाप को पेंशन दिलाने के लिए मुझसे एक दिन खुशामद करने भी आया था। हंसी-खुशी से बना देता और क्या नाम है मजबूत भी बनाता। मगर इन्हें तो छूत-अछूत सूझ रहा है। जब इस जमाने में भी हमारी महिलाओं का यह हाल हो डिमाक्रेसी ससुरी की ऐसी-तैसी भला क्यों न हो।"

पत्नी दबकर नरमाई से बोली, "देखो, बुरा न मानो, हकीकत समझो।

इस मुर्दे से पलंगर बैद भी अब जान नहीं डाल सकते। धरम-दो कम
रुपये जोड़ के मत्था लिखाकिस्टर खरीद लेना। काने कबाड़ी के इस क
को अब तुम पूरे तौर से फेंको, इसमें दम नहीं रहा। ठग ले गया सरा। त
तन में कीड़े पड़ें उसके।" मुंशीजी की पत्नी को भी रेडियो-सुख से वंचि
होने का आसार स्पष्ट था।

मुंशीजी अपनी पत्नी की हर बात से सहमत थे, बस उन्हें यही दु
लगा कि उनके सैल्सबर मरहूम साहब को, उन्होंने केवल काने कबाड़ी
ही जोड़ा, लार्ड लिलनिथगो के साथ उनके ऐतिहासिक नाते को वे भू
गई। फिर भी वे कुछ बोले नहीं, अपने सैल्सबर उर्फ शलवार की लाश क
एकटक देखते हुए बड़ी देर तक हुड़कते रहे। हाय, अभी थोड़ी देर पह
तक कैसा बोल रहा था!

दूसरे दिन सवेरे दफ्तर जाने के लिए घर से चले तो गली में देव
मास्टर के भाई ने बड़ा भोला-सा मुंह बनाकर कहा, "हमने सुना है कि
आपका रेडियो फिर खराब हो गया है मुंशीजी।"

मुंशीजी उदास हो गए, ठंडी सांस लेकर कहा, "हां भाई।"

"वो साला बड़ा ही बेईमान है मुंशीजी। उसके डार्लिंग, लाल दुपट्टा
शलवार—तीनों रेडियो बिलकुल कण्डम हैं, कण्डम। जिसने लिए वही
पछताया। आप भी कहां जाके फंस गए। सचमुच बड़ा अफसोस हुआ
मुंशीजी। उसकी दूकान में तो केवल बेवकूफ ही फंसते हैं।"

"मैं बेवकूफी में नहीं फंसा लल्लू। मैंने तो सिर्फ इसलिए खरीदा था
कि लार्ड लिलनिथगऊ का रेडियो है।"

"जी हां, है तो लिलनिथगऊ का ही रेडियो, पर आपको यह नहीं
बतलाया उस काने ने कि यह उनके मवेशीखाने में सांड़ों के सुनने के लिए
इस्तेमाल होता था। यह तभी इतना रद्दी था कि लिलनिथगऊ के एक
सांड़ ने क्रोध में आके अपने सींग से इसे उछाल फेंका था।"

"देखो लल्लू, मैं गरीब आदमी हूं, सब कुछ बर्दाश्त कर सकता हूं, पर
सच्ची का मजाक मैं भी नहीं सह पाता।" कहकर वे तेज़ी से चल दिए।

उन्हें अपनी गरीबी और अपने रेडियो की मौत पर तमाम दिन रह-रहकर मलाल होता रहा।

उस दिन से मुहल्ले में नया मज़ाक शुरू हो गया, लिलनियगऊ के मवेशीखाने और सांड़ के रेडियो पटक देने की बात हंसते-हंसाते घर-घर मे फैल गई। घूमते-फिरते यह बात मुंशीयाइन के कानों तक पहुच गई। वे तन उठी, कोसाकाटी करने लगीं। मुंशीजी भी आते-जाते अपने रेडियो की मातमपुरसी के मज़ाक सुन-सुनकर घुट गए थे। रह-रहकर उनका जोम उभरने लगा कि इसे बुलाकी से ठीक करा ही लिया जाय। पत्नी भी अब नीमराज़ी हो गई थी। रेडियो बुलाकी के यहा मरम्मत के लिए पहुंचा दिया गया। जब ठीक होकर आया तो विविधभारती तक सुनाने लगा। मुंशीजी अब फिर अकड़-अकड़कर अपनी पुरानी थीसिस दुहराने लगे कि *यह लाट-लाटनी का रेडियो है, उनके मवेशीखाने का नहीं है। मगर हफ्ते-*भर में ही फिर घरंघर्र और चपतबाज़ी शुरू हो गई। बारहवें दिन इंदिरा गांधी की स्पीच सुनाते-सुनाते शैलमर उर्फ शलवार थर्टीवन माडल का हार्ट फेल हो गया। प्रधानमंत्री की स्पीच में विघ्न पड़ने से मुंशीजी विचलित हो उठे, लपककर चपत मारी। एक, दो, तीन, चार—हाथ दुखने लगा मगर मुर्दा रेडियो न बोला।

पत्नी ने हंसकर कहा, "भई, कुछ भी कह लो, अब तो हम भी मानती हैं कि यह लाट लिलनियगऊ के मवेशीखाने का रेडियो था।"

क्रोध की लपट मुंशीजी के मन से उठकर उनकी मुट्ठी में आ गई। *रेडियो पर ज़ोर से एक घूंसा मारकर बोले, "बोल साले, बोल।"* वे घूंसे पर घूंसे मारने लगे, पत्नी हाथ पकड़ने के लिए लपकी तो उन्होंने ताव में आकर रेडियो को दोनों हाथों से उठा लिया और ज़ोर से मेज पर पटक कर बोले, "बोल हरामज़ादे, बोल साले, बोल।" मगर इस बार रेडियो के इंजरपिंजर ही बोल गए। लिलनियगो के सांड़ ने रेडियो को दूसरी बार पटककर तोड़ डाला था

इस मुर्दे में धनंतर वैद भी अब जान नहीं डाल सकते। बरस-दो बरस में रुपये जोड़ के नया टिरांजिस्टर खरीद लेना। काने कबाड़ी के इस कचरे को अब तुम घूरे पर ही फेंको, इसमें दम नहीं रहा। ठग ले गया मरा। तन-तन में कीड़े पड़ें उसके।" मुंशीजी की पत्नी को भी रेडियो-सुख से वंचित होने का अपार कष्ट था।

मुंशीजी अपनी पत्नी की हर बात से सहमत थे, बस उन्हें यही बुरा लगा कि उनके दौलमर थर्टीवन माडल को, उन्होंने केवल काने कबाड़ी से ही जोड़ा, लार्ड लिलनियगो के साथ उसके ऐतिहासिक नाते को वे भूल गईं। फिर भी वे कुछ बोले नहीं, अपने दौलमर उर्फ शलवार की लाश को एकटक देखते हुए बड़ी देर तक हुड़कते रहे। हाय, अभी थोड़ी देर पहले तक कैसा बोल रहा था!

दूसरे दिन सवेरे वल्दे जाने के लिए घर से चले तो गली में देवी मास्टर के भाई ने बड़ा भोला-सा मुंह बनाकर कहा, "हमने सुना है कि आपका रेडियो फिर खराब हो गया है मुंशीजी।"

मुंशीजी उदास हो गए, ठंडी सांस लेकर कहा, "हां भाई।"

"वो साला बड़ा ही बेईमान है मुंशीजी। उसके डार्लिंग, लाल दुपट्टा शलवार—तीनों रेडियो बिलकुल *कण्डम हैं, कण्डम। जिसने लिए वही पछताया। आप भी कहां जाके फंस गए। सचमुच बड़ा अफसोस हुआ मुंशीजी। उसकी दूकान में तो केवल बेवकूफ ही फंसते हैं।"*

"मैं बेवकूफी में नहीं फंसा लल्लू। मैंने तो सिर्फ इसलिए खरीदा था कि लार्ड लिलनियगऊ का रेडियो है।"

"जी हां, है तो लिलनियगऊ का ही रेडियो, पर आपको यह नहीं बतलाया उस काने ने कि यह उनके मवेशीखाने में सांड़ों के सुनने के लिए इस्तेमाल होता था। यह तभी इतना रद्दी था कि लिलनियगऊ के एक सांड़ ने क्रोध में आके अपने सींग से इसे उछाल फेंका था।"

"देखो लल्लू, मैं गरीब आदमी हूं, सब कुछ बर्दाश्त कर सकता हूं, पर ..ा का मजाक मैं भी नहीं सह पाता।" कहकर वे तेजी से चल दिए।

उन्हें अपनी गरीबी और अपने रेडियो की मौत पर तमाम दिन रह-रहकर मलाल होता रहा।

उस दिन से मुहल्ले में नया मज़ाक शुरू हो गया, लिलनिथगऊ के मवेशीखाने और साड के रेडियो पटक देने की बात हसते-हसाते घर-घर में फैल गई। घूमते-फिरते *यह बात मुंशीयाइन के कानों तक पहुच गई।* वे तप उठीं, कोसाकाटी करने लगीं। मुंशीजी भी आते-जाते अपने रेडियो की मातमपुरसी के मज़ाक सुन-सुनकर घुट गए थे। रह-रहकर उनका जोम उभरने लगा कि इसे बुलाकी से ठीक करा ही लिया जाय। पत्नी भी अब नीमराज़ी हो गई थीं। रेडियो बुलाकी के यहा मरम्मत के लिए पहुचा दिया गया। जब ठीक होकर आया तो विविधभारती तक सुनाने लगा। मुंशीजी अब फिर अकड़-अकड़कर अपनी पुरानी थीसिस दुहराने लगे कि *यह लाट-लाटनी का रेडियो है, उनके मवेशीखाने का नहीं है।* मगर हफ्ते-भर में ही फिर घरंघरं और चपलबाज़ी शुरू हो गई। बारहवें दिन इंदिरा गांधी की स्पीच सुनाते-सुनाते शैलमर उर्फ शलवार थर्टीबन माडल का हार्ट फेल हो गया। प्रधानमंत्री की स्पीच में विघ्न पड़ने से मुंशीजी विचलित हो उठे, लपककर चपत मारी। एक, दो, तीन, चार—हाथ दुखने लगा मगर मुर्दा रेडियो न बोला।

पत्नी ने हसकर कहा, "भई, कुछ भी कह लो, अब तो हम भी मानती हैं कि यह लाट लिलनिथगऊ के मवेशीखाने का रेडियो था।"

क्रोध की लपट मुंशीजी के मन से उठकर उनकी मुट्ठी में आ गई। रेडियो पर ज़ोर से एक घूसा मारकर बोले, "बोल साले, बोल।" वे घूसे पर घूसे मारने लगे, पत्नी हाथ पकड़ने के लिए लपकी तो उन्होंने ताव में आकर रेडियो को दोनों हाथों से उठा लिया और ज़ोर से मेज़ पर पटक कर बोले, "बोल हरामज़ादे, बोल साले, बोल।" मगर इस बार रेडियो के इंजरपिंजर ही बोल गए। लिलनिथगो के सांड ने रेडियो को दूसरी बार पटककर तोड़ डाला था

ब्रिटिश राज्य का तिलिस्मी दरवाजा

इस रफ्तार को देखते हुए तो यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि
न्नू के परम पूजनीय चचा साहब, जिन्होंने उसे अपनी गोद और गद्दी का
धकारी बनाया है, मरते समय शायद वसीयत में भी यह लिख जाएंगे
अगर मुन्नू देश का नेता, प्रसिद्ध और पूजनीय उपन्यास लेखक अथवा
आदमी न बने तो उसे उसकी तहसीलदारी की गाढ़ी कमाई की एक
ई न दी जाए।

मुंशी शिब्बनलाल को सचमुच इस बात की बड़ी भारी तमन्ना है कि
वह किसी जगह जाएं तो राह चलते लोग उन्हें देख-देखकर कहें कि
उस बड़े नेता के बाप हैं।

तहसीलदारी के जमाने में, गावों में नेताओं का स्वागत होते देखकर
के मन में प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई कि पढ़-लिखकर हमारा मुन्नू भी
दिन नेता बने। बस उसी दिन से वे उसे नेता बनाने के चक्कर में पड़
हैं। प० जवाहरलाल नेहरू के आप बड़े भारी भक्त हैं। सैकड़ों से सुन
खा है कि पंडितजी का बगला किसी बादशाह के महल से कम नहीं
ना है। आपने भी मुन्नू के कमरे को अपनी समझ से उसका इमीटेशन
ना दिया। अखबारवाले को भी लीडर, पायनियर, हिन्दुस्तान टाइम्स,
मृत बाजार पत्रिका, प्रताप, भारत, वर्तमान, नवयुग, अर्जुन, आज तथा

और भी बहुत-से दैनिक साप्ताहिक और मासिक पत्र लाने की आज्ञा दे रखी है।

अपने दूसरे मकान को किराये पर न उठाकर उसमे मुहल्ला पोलिटिकल कान्फ्रेंस, हिन्दी साहित्य परिषद्, श्री सनातन धर्म-रक्षिणी सभा, गांधी नाइट स्कूल, जवाहर बेकार मण्डल आदि संस्थाओं के साइनबोर्ड लटका रखे हैं। इनमे से मुन्नू किसी संस्था का सभापति है और किसी-का उपसभापति अथवा मंत्री। बड़े-बड़े पत्रों में मुन्नू के व्याख्यानों के समाचार, उसके प्रोग्राम तथा उसके चित्र छपे हुए देखने की मुशीजी की बड़ी इच्छा है यानी किसी तरह मुन्नू को ठोक-पीटकर वैद्यराज बनाया जा रहा है।

मुन्नू अपने चचा साहब की इन तैयारियों से तंग आ चुका है। एक दिन रात को मुन्नू अपने चाचा से छिपाकर, 'भूतनाथ' का पहला भाग लाइब्रेरी से लाया। पलंग पर लेटकर एक बड़े नेता की तरह टांग पर टांग चढ़ाकर इतमीनान से भूतनाथ पढ़ने लगा। वह अक्सर इसी तरह चन्द्रकान्ता, नरेन्द्रमोहिनी, कटोरा-भरा खून आदि पुस्तकों में महात्मा गांधी और पं० जवाहरलाल के जीवनचरित पढ़ता है।

वह तन्मय होकर पढ़ रहा था। मुंशी शिवचरनलाल अफीम की गोली जमा लेने के बाद इतमीनान से पलंग पर लेटे हुए हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे। एकाएक वे बोले, "मुन्नू।"

मुन्नू ने हड़बड़ाकर उत्तर दिया, "जी, जी···हां।"

वे कहने लगे, "देखो, इस बार कांग्रेस में कुछ न कुछ बोलना जरूर। जरा लम्बा-सा वक्तियान देना। इससे बड़ी धाक जम जायगी।"

सारा मजा किरकिरा हो गया। कहां तो भूतनाथ अपना ऐयारी का बटुआ और पतेरी-भर भंग लेकर तिलिस्म में घूमने जा रहे थे और कहां वही कमबख्त आठों पहर का पुराना रोना।

मुन्नू बेचारा मन ही मन खिजलाया तो बहुत, पर उसे कहना ही पड़ा, "जी हां, देखिएगा कि इस बार गांधीजी और जवाहरलालजी ने

मेरी पीठ म ठोंकी तब की बात। इस वक्त जरा उसीके ध्याख्यान के लिए सुभाषचन्द्र बोस की लिखी हुई यह पुस्तक पढ़ रहा हूं।"

मुंशीजी तिनक मे जरा चौंककर बोले, "अच्छा, सुभाषचन्दरजी की किताब है। यही तो इस साल कांग्रेस के सभापति है ना?"

मुन्नू ने कहा, "जी हां, इसीमे तो उनकी ही किताब पढ़ रहा हूं।"

वे प्रसन्नतापूर्वक बोले, "हां-हां बेटा, अच्छा कर रहे हो। खूब मन लगाकर पढ़ना। क्या नाम है इस किताब का?"

मुन्नू एकाएक अटपटा गया, कहा, "जी-जी, नाम तो—नाम है 'ब्रिटिश राज का तिलिस्मी दरवाजा'। चाचाजी, सचमुच बड़ा मन लग रहा है इस किताब मे। बड़ी अच्छी किताब है।"

वे बोले, "अच्छा-अच्छा, पढ़े जाओ।" फिर हुक्के के दो कश खींचकर ...ावावेश मे कहने लगे, "भगवान करे मेरा मुन्नू भी एक दिन राष्ट्रपति ...ने। सब लोग इसकी जयजयकार करें।"

...भूतनाथ एक ऐयार को बेहोशी की दवा सुघाकर उसकी गठरी बांधे ...ल के बीच से चले जा रहे थे।

अपने चचा को प्रभावित करने के लिए मुन्नू पढ़ते-पढ़ते एकाएक कह ..., "अहा! वेरी नाइस।"

चचा साहब फिर बोले, "बड़ी अच्छी किताब मालूम होती है मुन्नू, ...जोर-जोर से पढ़ो तो बेटा, हम भी तो सुनें कि क्या बातें लिखी हैं। ...त तो यह है बेटा कि सारा धरमशास्तर-पुरान, सब इन्हीं किताबों मे ...कल।"

...नू के सिर पर जैसे पहाड़-सा टूट पड़ा, फिर भी अपने को सम्हालते ...े कहा, "इस समय मैं इसकी खास-खास बातों पर गौर भी करता ...हूं।"

...े तो एक बार सुना जा न। फिर दूसरी बार ध्यान के लिए ... जरा सुना तो बेटा, मुझे भी ज्ञान मिलेगा।"

...अजीब उलझन मे पड़ा। बेचारे को उस समय कुछ भी न सूझा

कि क्या करे। नौकर भी उस वक्त मौजूद न था, वरना बिस्तर ठीक तौर पर न झाड़ने के बहाने ही उसे फटकारने लगता। पास में कोई राजनैतिक पुस्तक भी नहीं रखी थी कि उसे ही पढ़कर सुनाने लगता। उधर मुंशीजी को अगर दो बार और मुन्नू से खुशामद करनी पड़ती तो वह नाराज़ हो जाते। बड़े पसोपेश में पड़कर आखिरकार मुन्नू ने एक जुगत साधकर पढ़ना शुरू कर दिया—

"रात लगभग ग्यारह घड़ी के जा चुकी है। महात्मा गाधी, जवाहर-लाल नेहरू और खां अब्दुलगफ्फार खां उत्कंठा के साथ अगस्त्य मुनि की मूर्ति की तरफ देख रहे हैं। एक आले पर मोमबत्ती जल रही है, जिसकी रोशनी से उस मंदिर की सभी चीजें दिखाई दे रही हैं। महात्मा गाधी और पं० जवाहरलाल का कलेजा उछल रहा है कि देखें अब यह मूर्ति क्या बोलती है।

"एकाएक कुछ गाने की आवाज आई, मालूम हुआ कि यही मूर्ति गा रही है। सब कोई बड़े गौर से सुनने लगे।

'सबहि दिन नाहिं बराबर जात।
कबहूं करि पछतात।'

इसके बाद मूर्ति इस तरह कहने लगी—

"*अहा! आज मैं अपने सामने किस-किसको बैठा देख रही हूं?* महात्मा मोहनदास। धर्मात्मा जवाहरलाल। पर मैं अभी धर्मात्मा कैसे कहूं। क्या सम्भव है कि भविष्य में भी यह धर्मात्मा बना रहेगा! खैर, जो कुछ होना होगा, देखा जाएगा। हा, यह तीसरा आदमी मेरे सामने कौन है? यही अब्दुल गफ्फार खां, जिसने अपनी कायापलट कर दी और अपना नाम बदलकर सीमान्त गाधी कहलाया। अहा! इस बात का किसी को स्वप्न में भी गुमान न था कि गोविन्द वल्लभ पंत ऐयार एक दिन दुश्मनों के तिलिस्म का दारोगा बनेगा, धन्य है उसके साहस को।'

"इतना कहकर मूर्ति चुप हो गई।

"महात्मा गांधी इसके बाद उस ओर जवा के दो फूल मूर्ति के चरणों

पर पहाकर हाथ जोड़कर खड़े ही गए। जवाहरलाल नेहरू और अब्दुल गफ्फार खां भी हाथ जोड़े खड़े हुए थे। मूर्ति ने फिर कहना शुरू किया।

"'अब एक काम करना कि ऐयार सुभाषचन्द्र बोस को पश्चिम के फाटक की तरफ भेजना। बड़े-से जंगल के बीच होकर बिट्टल नगर के पास जब वह पहुंच जाए तो उसको चाहिए कि माथे पर मुकुट रखकर तथा महाराजा का वेश बनाकर सिंहासन के बायें हाथ की खूंटी को खींच ले। लोग उसकी जय-जयकार करने लगेंगे और दुश्मनों को इस भेद का पता भी न लगने पाएगा।—अच्छा, अब इस वक्त जाओ। फतह होगी। और अब बीच में कुछ घटना घटी तो अगली अमावस्या के दिन मैं फिर इसी तरह बोलूंगी। तब आगे की बातें होंगी।'"

मुंशीजी बड़े गौर से सुन रहे थे। एकाएक बोले, "क्यों मुन्नू, यह बातें तो एकदम नई हैं। अच्छा क्या इसमें तिलिस्मी भी हो रही है?"

मुन्नू घबराया तो जरूर, लेकिन चट से उत्तर दिया, "जी यह तो कोई खास बात नहीं चाचाजी। आप समझिए कि यह साइन्स का जमाना है, लेकिन महात्मा गांधीजी ने कहा कि हम अपने स्वदेशी तरीके से ही लड़ाई जीतेंगे। इसमें आगे चलकर बड़ी-बड़ी बातें हैं।"

चाचा साहब ने हुक्का गुड़गुड़ाते हुए कहा, "अच्छा, आगे पढ़ो।"

मुन्नू ने पढ़ना शुरू किया, "ऐयार सम्राट महात्मा गांधी जब अपनी ऐयारी का बटुआ और पसेरी-भर भंग की झोली लादकर चले…।"

"लेकिन मुन्नू," चाचाजी ने बीच में ही टोककर कहा, "महात्मा गांधी तो भंग पीते ही नहीं थे। फिर यह क्या लिखा है?"

मुन्नू ने कहा, "बात यह कि चाचाजी कि महात्माजी अंग्रेजों को धोखे से भंग पिलाकर नशे में लाना चाहते थे न?"

इसके बाद वह कुछ न बोले। मुन्नू ने पढ़ना शुरू किया—

"बियाबान जंगल में एक बरगद के पेड़ के पास टूटा-सा शिवाला बना हुआ था। महात्मा गांधी बड़ी होशियारी से उस मन्दिर में घुसे और

महादेवजी की मूर्ति पर लिपटे हुए साप का फन पकडकर जोर से उमेठ दिया। सब एकाएक क्या देखते हैं कि पास की जमीन फट गई। महात्माजी बड़ी सावधानी से सीढ़िया उतरने लगे। उनके उतरने के साथ ही साथ जमीन अपने-आप ही ठीक हो गई। नीचे उतरकर देखते क्या हैं कि एक चौकोर कमरा बना हुआ है जिसमें काले और सफेद पत्थर जड़े हुए हैं तथा कमरे के चारो ओर चार मूर्तिया तीर-कमान लिए खड़ी हुई हैं।

"ऐयार सम्राट महात्मा गाधी ने उस जगह दो मिनट तक चुपचाप खड़े रहने के बाद फर्श पर जड़े हुए एक सफेद पत्थर पर धीरे से पैर रखा। मूर्ति ने फौरन तीर-कमान सभाला। महात्माजी ने तुरन्त सफेद पत्थर से पैर हटाकर काले पत्थर पर रखा तो कुछ भी नहीं हुआ। इस प्रकार सतर्कता-पूर्वक काले पत्थरों पर पैर रखते हुए महात्माजी धीरे-धीरे उन मूर्तियों के पास पहुंचे और उनके हाथों से तीर खेंच लिए। इसके बाद फिर उन्होंने सफेद पत्थर पर पैर रखा तो देखने क्या है कि मूर्तिया फिर हिलीं, पर उनके हाथ में अब तीर तो थे नहीं इसलिए मूर्तिया खाली हरकत करके रह जाती थीं। महात्माजी ने सतोष की एक गहरी सास ली, फिर जाकर हर मूर्ति के अगों को टटोलने लगे। एक मूर्ति के पास जाकर ज्योंही उन्होंने उसकी कमान को अपनी ओर खीचा त्योंही धड़ाके के साथ पास की दीवार का पत्थर हट गया और एक सुरग नजर आई। महात्माजी ने अपने ऐयारी के बटुए से मोमबत्ती का टुकड़ा निकाला और उसे चकमक पत्थर से जलाकर सुरग में बैठे। लगभग तीस कोस उस सुरग मे जाने के बाद देखते क्या है कि एक किला बना हुआ है, जिसके चारो तरफ एक खाई बनी है तथा उसमें एक चादी की डोंगी किनारे पर बधी हुई है और सोने की एक पतवार उसमे रखी हुई है। महात्माजी ने तिलिस्म की किताब खोलकर देखा तो हकीमों ने लिखा था कि तिलिस्म में घुसने-वाले को चाहिए कि पतवार को पहले अपने हाथ मे ले, फिर डोंगी मे बैठ जाए तो डोंगी अपने-आप ले जाएगी। महात्माजी ने वैसा ही किया। डोंगी

के साथ तीर की तरह चली और जाकर किले के फाटक पर रुक महात्माजी डोंगी से उतरकर फाटक के पास आए। भीतर जाकर तो एक पहरेदार बैठा ऊंघ रहा था। महात्माजी ने बड़ी चतुराई के उसे दवा सुंघाकर बेहोश कर दिया, फिर उसकी गठरी बांधकर की एक झोंपड़ी मे गए। वहा उन्होंने बटुए से निकालकर एक दवा ी जीभ मे लगा दी, जिससे कि वह ऐंठ गई। फिर उसके बाद से सामान निकालकर उसका-सा रूप बनाकर किले में घुसे। आगे र आगन में एक तालाब था। महात्माजी उसमे कूद पड़े। तालाब चे एक दरवाज़ा मिला। महात्माजी उसमे चले गए। देखते क्या हैं न्दर एक बारहदरी बनी हुई है, उसमें बारह कोठरियां बनी हैं। माजी ने सात नम्बर की कोठरी का ताला खोला तो उसमें कस्तूर- गांधी मिलीं। महात्माजी देखकर कस्तूरबाई बड़ी प्रसन्न हुईं। हंसग हा, 'अहा, इतने दिनों बाद दुख और कष्ट झेलकर तुम मुझे छुड़ाने ाए। तुम धन्य हो भूतनाथ···।' "

अरे राम रे! मुन्नू की जबान जैसे कट-सी गई। मुंशी शिवचरणलाल क बड़े आश्चर्य और कौतूहल के साथ यह सब सुन रहे थे। उन्हें च इस कथा को सुनकर आश्चर्य हो रहा था। सभी बातें एकदम ोगरीब, एकदम नई थीं। वे अचकचाकर बोले, "ऐं! ये भूतनाथ बला है? तुम भूतनाथ ऐयार का किस्सा पढ़ रहे हो?"

हकलाती जबान से मुन्नू ने कहा, "नहीं तो चाचाजी, ये बिटिश राज तलिस्मी दरवाज़ा है।"

चचा साहब को बड़ा तैश आ गया, बोले, "लौंडे, मुझको बनाएगा? का सिन होने आया। तमाम जिन्दगी तहसीलदारी करते गुज़ारी। तहत कारिन्दा लोग मुझसे थर-थर कांपते थे और तू मुझको ही बनाएगा। ये बाल धूप में सफ़ेद नहीं हुए। निकल जा। चल हट

सामने से नालायक।"

मुन्नू की आंखों की पुतलियों के बार-बार ज़ोर से फड़कने से उसके दिमाग़ का दरवाज़ा बन्द हो गया। उसे कुछ भी सुझाई न पड़ा। अपने चाचा की चरण रूपी खूंटी को बार-बार हिलाकर उनके दिल की बारह-दरी से प्रेम को लौटाने की कोशिशों में मुन्नू की आंखों ही आंखों में आंसू आ गए।

श्री श्री कथा : बाप-बेटे की

एक दैनिक पत्र में सम्पादक के नाम छपा पत्र :

आपके सुख्यात पत्र में 'शंकर विहार' रेस्तरां के मालिक मिष्ट मार्त्तण्ड, चाट-सम्राट, कविता-कामधेनु-कान्त, पण्डित पुत्तीलाल जी 'पुत्तीश' ने हिन्दी साहित्य की अड़सठोत्तरी पीढ़ी के महान कवि श्री केल सक्सेना द्वारा पुरानी पीढ़ी पर किए गए सत्याक्षेपों का अत्यन्त अ प्रलाप-भरा उत्तर दिया है। वैसे तो पुत्तीशजी का यह बुढ़भसिया पत्र तरुण पीढ़ीवालों के नोटिस लेने योग्य नहीं है, फिर भी उन्होंने जो र पीढ़ी को महत्त्वाकांक्षी और उद्दण्ड बतलाया है, उसका उत्तर देना लिए आवश्यक था। दुर्भाग्यवश पुत्तीशजी का पुत्र होने के कारण उ अनर्गल आक्षेपों का ठोस उत्तर मैं ही दे सकता हूं।

(१) पुत्तीशजी ने लिखा है कि तरुण पीढ़ी उद्दण्ड है। इसके उ में मैं स्वयं पुत्तीशजी की जीवन-कथा का संक्षेप में उद्घाटन करता . पाठक स्वयं देखें कि उद्दण्ड कौन है।

पुत्तीशजी के पिता राजपण्डित थे। दन्द-फन्द, मुकदमे-महाजनी क उन्होंने बड़ी जमींदारी कमाई। जिसका अधिकांश भाग उनके उ भी प्रबल तिकड़मी और ऐयाश बड़े पुत्र ने गुपचुप उधार ले-लेकर उ डाला। जब इस रहस्य के खुलने का समय आया तब बड़कऊ मुसलम

हो गए। छुटकऊ भी भग, गोला, भगतबाजी और कविताई के फेर में पड़ गए। बाप ने मार-बाँधकर पढ़ाना चाहा तो धमकी दी कि किरिस्तान बन जाऊंगा। राजपण्डित तो इस मामले में दब गए, पर अपने धन की क्षति-पूर्ति के लिए एक जमींदार की इकलौती पुत्री से विवाह कर दिया। यह अधिकतर तान्त्रिक और खयालबाज बैजू बाबा के शिवाले में ही बने रहते थे। बाबा के लिए त्रिकाल भाग घोटने और बाबा के एक हलवाई भगत की सगत में चाट-पकवान बनाने की कला में पारगत हो गए। अपनी पत्नी को मार-मारकर बाबा की सेवा के लिए उनके गहने छीन ले जाते थे। उसी पैसे से शिवाले के आसपास की जमीन खरीदी गई। बेचारी पति, ससुर-सास आदि से निरन्तर अपमानित होते-होते, एक पुत्र इनके कुल को उजागर करने के लिए देकर कुएं में डूब मरी। राजपण्डित के यही दूसरे पुत्र हमारे आलोच्य मिठाई-मार्तण्ड पुत्तीशजी हैं और उस अमर शहीद माता का पुत्र इन पंक्तियों का लेखक है। मेरी अमर माता के धन से खरीदी जमीन पर ही पुत्तीश का 'शकर विहार' स्थापित है। पाठक अब स्वयं निर्णय करें कि पुत्तीश जैसा भद्दा नाम रखनेवाला पिता पद कर्नेकी यह व्यक्ति उद्दण्ड है या तरुण पीढ़ी है।

(२) पुत्तीश ने कुछ दरबारी किस्म के लोगों, कुछ बोगीदा कवियों और खयालबाजों को अपने 'शकर विहार' में एक दिन खिला-पिलाकर, अपने ही पैसों से अपना अभिनन्दन-पत्र छपवाकर मिष्टान्न-मार्तण्ड-चाट सम्राट की उपाधियां धारण की थीं। पुत्तीश ने राजनीतिक तिकड़में करके तरुण प्रतिभाशाली कवियों को गोमाता स्वर्ण-जयन्ती समारोह के कवि-सम्मेलन में घुसने तक न दिया और महान तरुण कवि माइकेल सक्सेना को संयोजक के पद से हटवाकर अपने-आपको संयोजक निर्वाचित कराया। कवि-सम्मेलन की अभूतपूर्व विराट योजना को मिट्टी में मिलाकर उसे सोलह रद्दी कवियों का मच बना दिया। क्यों? इसलिए कि मिठाई-चाट-सम्राट बनने से ही उनकी अहंता तुष्ट नहीं हुई थी और वह अपने कवि के आगे भी दाम डालना चाहते थे। इनकी बुद्धि का

अन्दाजा इसीसे लगाया जा सकता है कि अपने लिए कविता-कामधेनुकान्त जैसा टाइटिल चुना, जिसका शुद्ध अर्थ कविता का बैल है। ऐसी भोंडी बुद्धि और ओछी महत्त्वाकांक्षाओं वाला व्यक्ति आखिर किस मुंह से तरुणों को मिथ्या महत्त्वाकांक्षी कह सकता है। श्री महावीर सक्सेना ने यदि अपना उपनाम माइकेल रखा तो क्या बुरा किया। पुत्तीश जैसे भोंडे उपनाम से वह लाख गुना अधिक सुन्दर है।

अन्त में आपके सुविख्यात पत्र द्वारा मैं यह भी घोषित करता हूं कि यदि पुत्तीशजी ने फिर कभी तरुणों पर आक्षेप किया तो मैं उनकी संकीर्ण वृत्ति और स्वार्थी कारनामों की कच्ची पोल खोलूंगा।

—शम्मुद्दीन द्विवेदी (भूतपूर्व शंकरदीन 'शंकर')

एक नई कविता :

अखबार के उसी अंक में शम्मुद्दीन द्विवेदी की निम्नलिखित कविता भी छपी थी :

> यदि मार्ग में तुम्हें मिल जाएं कभी एकसाथ
> बाप और सांप—
> तो याद रखो, सांप कम जहरीला है बाप से।
> सांप को जाने दो;
> बाप का फन फौरन कुचल डालो।

दो पीढ़ियों की भेंट वार्ता :

स्थान : शंकर विहार के ऊपरवाला मार्डन फ्लैट। अड़सठोत्तरी पीढ़ी के कवि करार दिए जाने के उम्मीदवार पिछले तीन वर्षों से बी० ए० पार्ट-वन के छात्र, पुत्तीशनन्दन शम्मुद्दीन द्विवेदी का निद्रा-कक्ष। सवेरे आठ बजे का समय। कवि शम्मुद्दीन घनघोर निद्रामग्न हैं। मेज पर रम की बोतल, अपनी तलछट में रात का रंग झलकाता हुआ शीशे का गिलास, 'शंकर विहार' नाम-छपी चीनी की दो जूठन-भरी प्लेटें। बुझी सिगरेटों से भरी ऐश-ट्रे। बजता हुआ ट्रांजिस्टर जो रात में निश्चय ही बन्द न किया जा सका होगा। दीवारों पर दो नंगी पेंटिंगों के बीच में तीन मार-

तीय फिल्म अभिनेत्रियों की तसवीरें जिनमें से दो उन्टी टगी थीं। उनसे यह स्पष्ट था कि वे तरुण कवि की रिजेक्टेड माशूक हैं। अलमारी में कुछ यूनिवर्सिटिया किताबें, कुछ काव्य-संग्रह और कुछ गुप्त साहित्य। फर्श पर कुछ फिल्मी मैगजीनें, कुछ कामिक्स। खुला वार्ड-रोब, बिखरे कपड़े।

कविता-कामधेनुकान्त मिष्टान्न-मार्तण्ड पुत्तीश कागावासी छाने, भस्म-त्रिपुण्ड लगाए, हाथ में उस दिन के अखबार और रविवासरीय परिशिष्टांक को लिए खड़ाऊं खटखटाते हुए पधारे। बेटे को झिंझोड़कर जगाया। बेटा जागने को मजबूर हुआ। बाप ने कहा, "कुलागार, अपने बाप की निन्दा करते तुझे लाज नहीं आई। बाप सांप से अधिक जहरीला है। क्यं? हमका बिजावें के बदे ससुर सम्सुद्दीन बने हैं। चिताए देइति हैं, अब जो ऐसी खुराफात करिहौ तौ कमर पै चार लातैं मार कै..."

"लातें मारेगा, ले, ले!" कच्ची नींद में जागा बेटा बाप से गुत्थमगुत्था हो गया। शोर सुनकर नौकर आ गए। खींच-खांचकर दोनों को अलग किया। बाप हांफ रहा था, बेटा गरज रहा था, "अब जो कभी मेरे साथ उलझे तो हजार स्टूडेंटों को लाकर दुकान लुटवा दूंगा..."

तरुण पीढ़ी की महान विजय के इस ऐतिहासिक क्षण में कवि माइकेल सक्सेना और उनके साथ एक विदेशी तरुण जोड़े का प्रवेश होता है। राम-राम और जै-शिव छपे पीले दुपट्टों से बनाई गई कुरतें, पीली लुंगियां पहने रुद्राक्ष और त्रिपुण्डधारी एक हिप्पी, एक हिप्पिन साथ आते हैं।

विदेशी जोड़े पर भारतीय संस्कृति की छाप देखकर आश्चर्यचकित पुत्तीश चुप होकर ठिठक गए। दिव्य विदेशियों के साथ तरुण कवियों के नगरनेता को देखकर सम्सुद्दीन द्विवेदी का मनरूपी कमल खिल गया। आत्मबल दस हजार गुना बढ़ गया। उन्हें लेकर अपने ड्राइंग-रूम की ओर बढ़ते हुए उन्होंने नौकर को नीचे से चाय-नाश्ता लाने का आदेश दिया।

माइकेल जी बोले, "मैं तुम्हारे 'लेटर टू दी एडीटर' और 'इम्मार्टल पोयम' पर बधाई देने आ रहा था कि यहां तुम्हारी सीढ़ियों पर ही मुझे तुम्हारी आत्म-शक्ति का भी परिचय मिला। बधाई पट्ठे, वैल्ड...वैल्ड,

बधाई!"

दोनों हिप्पियों का परिचय देते हुए बतलाया कि वे अमेरिकावासी हैं। आज ही सवेरे इस नगर में आए हैं। तुम्हारी दुकान के पास शिवाले के सामने खड़े थे। मुझसे कहा कि दर्शन करना चाहते हैं। मैं इन्हें यहां ले आया। हिप्पी का नाम अबोध स्वामी और हिप्पिन का रामचेली है। ये लोग भारत में अपनी आत्मा की खोज करते हुए आए हैं।

उनकी बातों से शम्सुद्दीन द्विवेदी की भारतीय संस्कृति हुमक उठी, बोले, "मैं राजपण्डित का पोता हूं। भारतीय संस्कृति मेरे घर की लौंडी-बांदी है। हम चार दरवाजों से आत्मा के किले में प्रवेश करते हैं—धर्मा दैट इज़ रेलिजन, अर्था दैट इज़ मनी, कामा दैट इज़ सेक्स एण्ड मोक्षा दैट इज़ फुल फ्रीडम।"

"यस। लेकिन हम लोग दूसरे सिरे से चले हैं। पहले मोक्ष ली, अब काम सिद्ध कर रहे हैं और अर्थ तथा धर्म सिद्ध करने के लिए हम भारत आए हैं।"

शम्सुद्दीन ने गद्गद भाव से कहा, "आपको ये सिद्धियां ज़रूर मिलेंगी। धर्म की तो भारत के एक-एक गली-कूचे में लूट मचती है। हमारे शिवाले में रोज़ रात को ६ से ११ बजे तक कीर्तन होता है। आपको दिखलाऊंगा।"

माइकेल सक्सेना ने हिप्पियों को अंग्रेज़ी में उपदेश देकर फिर द्विवेदी से कहा, "यार जलपान नहीं आया अभी। तुम्हारे बाप कहीं लाल भभूकी न दिखा दें। ये लोग हमें भाग्य से मिले हैं, इन्हें खुश कर लोगे तो ये लोग हमारी-तुम्हारी कविताओं का अंग्रेज़ी में अनुवाद कर देंगे। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति तुम्हारे घर पर आकर तुम्हें पुकार रही है।"

"बेफिक्र रहो। बाप को बस में करने का जादू अब मेरे पास है। अभी आता हूं भाभा।" कहकर शम्सुद्दीन द्विवेदी नीचे अपनी दुकान में पहुंचे। मुनीमजी अपनी गद्दी पर बैठे थे, उनके पास पहुंचकर उन्होंने अपनी एक चप्पल उतारकर हाथ में उठा ली और कहा, "हूं।"

चलती सड़क, चलती दुकान—बेटे को भले ही अपनी इज्जत का लिहाज न हो पर पुत्तोशजी को है। चट से घिघियाके कहा, "हैं, हैं, बचवा, का बात है ? चप्पल की कील उभरि आई है का ?" आंखों में मूक अरदास थी कि बेटा भरे बाजार में कहीं मेरा चप्पलाभिनन्दन न कर बैठना।

शम्सुद्दीन उर्फ बचवा ने चप्पल जमीन पर गिराते हुए कहा, "बप्पा-जी, नाश्ता नहीं, पहुंचा अब तक !"

"तुम चलौ, दुइ मिनट मां नास्ता पहुंच जाई ऊपर। हैं, हैं, ई साधु कहां ते आए हैं बचवा ?"

"अमरीका के योग-साधक हैं। हमारे धर्म की शिक्षा लेने आए हैं। *तुम्हारी तसवीर वहां छपवा दूगा। शाम को आरती-कीर्तन के समय इन्हें* शिवाले में भी लाऊंगा।"

"हां, हां, अरे ई सिवालौ तुम्हार है औ दुकानौ तुम्हार है। बस उयि लोग आपनें महिया ठाढ़ हुइ के सेवा-पूजा देखें, यहै हमार अरदास है तुम ते। तुम ई जानि लेऔ कि धरम···"

"हां, वो मैं समझता हूं। नाश्ता भेजो जल्दी से।" *शम्सुद्दीन* द्विवेदी के मन में उस समय विजयोल्लास के अनहद ढोल बज रहे थे।

मिश्रित संस्कृति व्यवस्था : बवजन मिश्रित धर्म-व्यवस्था : अबोध स्वामी और रामचेली शाम के मुस्तकिल मेहमान बन गए। शिवाले के कीर्तन में पहली रात पहुंचने पर हिप्पी-हिप्पिन पहले तो बैठे-बैठे 'हरेरामा, हरे कृष्णा, कृष्णा-कृष्णा हरे-हरे' सुनते और कीर्तन-मास्टर का मटकना-ठुमकना देखते रहे, *फिर उन्होंने एका एक उठकर जो 'हूला-हूला-चिक्की-चिक्की बुम'* और ट्विस्ट की पैंतरेबाजियां दिखलाकर 'हरे रामा, हरे कृष्ना' के बीच-बीच में अपने रचे प्रकृति-पुरुष महामिलन के नग्न वर्णनों वाले अंग्रेजी गीत गाना शुरू किया तो वहां उपस्थित लोग धन्य-धन्य हो उठे। जो अंग्रेजी नहीं पढ़े थे, वे बीच-बीच में आनेवाले संस्कृत शब्दों 'प्रकृति-पुरुष, शिव-गौरी, राधा-कृष्ना' आदि से योगावस्था में पहुंचते थे।

जो भाग्यशाली अंग्रेजी जानते थे, उन्होंने सौ टके शुद्ध अश्लीलता में परम शुद्ध भक्तिभाव के दिव्य दर्शन पाकर ऐसा आनंद पाया कि हिप्पी-हिप्पिन के चरणों में लुट-लुट गए।

गुरुवर लमुराहोजी का अबोध मार्ग : कविवर शम्भुद्दीन द्विवेदी के ड्राइंग-रूम में चुने हुए आठ तरुण-तरुणियों की मण्डली विराजमान है। लड़की-लड़कों में तीन-पांच का हिसाब है। यों गोरे-सांवलेपन में भेद नहीं, पर सलोने और स्वस्थ कमोवेश सभी हैं। इन सबकी जिन्दगियों को चैन-आराम ने कुछ-कुछ ढंपा तो जरूर छुला रखी है पर बहुत कुछ की चाह है, तड़प है, न पाने का विद्रोह है। सभी २२ और २३ के बीच में हैं। इनमें चार युवक तो माइकेल सक्सेना द्वारा संगठित अड़सठोत्तरी पीढ़ी के चौधरी लोग हैं : वकरीदी तिवारी, 'भूतलिंगम' चौहान, कैक्टस टण्डन और राम अली। बी० ए० से एम० ए० और ला तक यूनिवर्सिटी की कक्षाएं इन्हें कुछ न कुछ पढ़ाकर धन्य हो रही हैं। माइकेल के नेतृत्व में ही ये लोग और कुछ दूसरे भी अपने नये नामकरणों से हंसी-हंसी में ही अनायास अफलातून की तरह चमक उठे हैं। बाकी तीन लड़कियों और एक युवक को ये लोग पहली ही बार देख रहे हैं। हैसियत में ये चारों इन्हें अपने से कुछ अधिक अच्छे नजर आ रहे हैं, इसलिए उनके प्रति उपेक्षा करके ये लोग आपस ही में बतिया रहे हैं।

अभी अबोध स्वामी, शम्भुद्दीन द्विवेदी और रामचेली कमरे में मौजूद नहीं हैं। नौकर भंग का गोला और ठण्डाई के कुल्हड़ लेकर आता है। चारों अड़सठोत्तरिए तो बेझिझक चढ़ा जाते हैं, पर तरुणी-मण्डल 'उहुं, उई, हाय राम, कम, बस-बस' की चहकन-थिरकन दिखलाने लगा और अपरिचित युवक उन्हें हौसला देते हुए गोले का सबसे बड़ा हिस्सा उठाकर सबको चकित करता है। इसके बाद ही भीतर से अबोध स्वामी का प्रवेश होता है। नमस्कार-चमत्कार के बाद अबोध स्वामी का अंग्रेजी में प्रवचन आरम्भ हुआ, "मेरे प्यारे 'पट्ठों' और प्यारी 'पट्ठियों'! आज की इस ऐतिहासिक गोष्ठी का आयोजन जब हमारे परम पट्ठे थी

प्रमस्त स्वामी ने किया तब मेरा यह आग्रह था कि गोष्ठी में पुरुष तत्व के साथ प्रकृति तत्त्व का उपस्थित होना जरूरी है। मैं और रामचेली अपने देश में एक बड़े पुस्तकालय में धूमकेतुओं के समान मिले थे। हमने खजुराहो के सम्बन्ध में एक सचित्र महाग्रन्थ एकसाथ पढ़ा और इस निश्चय पर पहुंचे कि खजुराहो-दर्शन ही एकमात्र सच्चा दर्शन है। हमने उसी दिन से ग्रेट खजुराहो को अपना गुरु माना है और भारतीय दर्शन की गहरी छानबीन करके अपने अबोधवाद को जन्म दिया है।

"प्रिय पट्ठे-पट्ठियो, आप इस सत्य से इन्कार नहीं कर सकते कि स्वयं प्रकृति और पुरुष ही योगानन्द पाने के लिए इस पृथ्वी पर नर-मादाओं के अनन्त रूप धारण करते हैं। प्रकृति-पुरुष आनन्द से विवश होकर नये प्रकृति-पुरुष को सर्जते हैं। गणित के इस सीधे-सादे फार्मूले में इस मिथ्या नाता-बोध, पीढ़ी-बोध, भीड़-बोध आदि को आखिर कौन घुसेड़ता है? निहित स्वार्थों के मारलिस्ट। इतिहास ने इन्हें एक अजेय शक्ति बनाकर हम मुक्ति-पथ-गामियों की राह में रोड़े ही रोड़े डाल रखे हैं। हमें इनपर विजय पानी है। विजय पाने का एक ही तरीका है, दुनिया के लिए पत्थर हो जाओ। यही अबोधवाद की आधार-शिला है। अबोध को जगत्-गति कभी व्याप ही नहीं सकती। आनन्द अबोध ही को होता है। बोध में तर्क है, कुतर्क है, विचार-मीमांसा है पर आनन्द नहीं। आनन्द तो प्रकृति-पुरुष के महायोग में है।"

इसके बाद अबोध स्वामी ने चरस-गांजा आदि भारतीय नशों की महिमा बतलाते हुए प्रकृति-पुरुष के पट्ठों-पट्ठियों को विलायती नशों के प्रति अपने गुलामी के संस्कारों के कारण आकर्षण रखने के लिए लताड़ा। सच्चे भारतीय बनने का आग्रह किया। आठों कवियों से कहा कि शीघ्र ही अपनी-अपनी अबोधवादी कविताएं उन्हें दें ताकि वह और रामचेलीजी अंग्रेजी में उनका अनुवाद प्रकाशित करा दें।

माइकेल सक्सेना कुण्ठित : 'पूर्व पश्चिमी जाता है' शीर्षक से मोटे आर्ट-पेपर पर बड़ी सजधज के साथ नौ अबोधवादी कवियों की कुछ कविताओं

का अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित हुआ। सबके नामों में स्वामी और चेनी जुड़ा हुआ था। सबकी तसवीरें और तारीफ़ें। उनमें भी शम्स स्वामी की तो रंगीन तसवीर और अलबेली प्रशंसा छपी थी। माइकेल को देखकर धक्का लगा। उसने इस कविता-संग्रह की आलोचना करते हुए इसे भारतीय संस्कृति के खिलाफ षड्यन्त्र और हिप्पी-हिप्पिन को सी० आई० ए० का एजेण्ट बतलाया। बड़ा आन्दोलन छेड़ना चाहा।

पुत्तोश प्रतिक्रिया : अबोध स्वामी और रामचेली के कारण कविता-कामधेनु-कात मिष्टान्न-मार्तण्ड की दुकान पर भंग की बिक्री पहले से दूनी हो गई है। मिठाई-चाट से भी भंग-भवानी की कृपा से लाभ हो रहा है पर उन्हें लगा कि उनके बचवा को आमदनी भी कहीं से होने लगी है। बचवा ने पढ़ना छोड़ दिया है। वह और रामचेली साथ-साथ रहते हैं। अक्सर हफ्तों गायब रहते हैं। अबोध स्वामी कहीं और रहता है और कभी-कभी आता है। और इस तमाम आवाजाही में छह महीने के अन्दर ही बचवा के पास एक कार भी आ जाती है। बचवा के फ्लैट में कीमती सजावट भी बढ़ गई है। पुत्तोश तो जनम-भर शिवाले की कोठरी में रहे, बेटे के लिए ही दुकान के ऊपर फ्लैट बनवाया था। उन्होंने बेटे के लिए बहुत कुछ किया पर बेटा अब कमासुत होकर धेला भी नहीं देता। एक दिन ताव में ऊपर पहुंचते हैं। बहुत खटखटाने पर द्वार खुलते हैं। शम्स स्वामी ने त्योरियां चढ़ाकर कहा, "हे पूर्व-पुरुष, हमारे योग में तुम विघ्न डालने क्यों आए?"

पुत्तोश भी टेढ़े पड़े। कहा, "योग करो चाहे भोग, बाकी अपने नफे मां हमारा हिस्सा···"

"कैसा हिस्सा जी? बेकार की बकबक मत करो।"

"वा बेट्टा, हम ही ते पैदा किए और हमही का चरै हो? तुम्हरे घर मां कहां-कहां गांजा-चरस धरी है, हमका पता···" बात पूरी होने से पहले ही पुरुष शम्स स्वामी ने पूर्व-पुरुष पुत्तोश को मारने के लिए हाथ उठाया, पर पूर्व-पुरुष ने झपटकर पुरुष की बांह पकड़ी और टंगड़ी मारकर गिरा

दिया, फिर कमर पर एक करारी ठोकर मारी। प्रकृति अपने पुरुष को बचाने के लिए पुत्तीश को दात से काटने लगी। पुत्तीश इस समय अपने *अपमान का बदला लेने के जोश में थे। अबवेसुध पुत्र को* छोडकर रामचेली की ओर झपटे और उसे ढकेलते हुए दहलीज मे ले गए और उसका पीढ़ी-बोध नष्ट करने लगे।

पटाक्षेप: रामचेली अब चाट-सम्राट, कविता-कामधेनु-वात, सिद्धान्त-मार्तण्ड पं० पुत्तीलाल दुबे 'पुत्तीश' को अपना पुरुष मानती है। शंकरदीन 'शंकर' उर्फ शम्स स्वामी रामचेली पर बलात्कार करने के अपराध मे जेल-सुख भोग रहे हैं। शेष अबोध कवि अब कविता छोड़ लक्ष्मी-बोध प्राप्त करते हैं। और जब तक अबोध स्वामी का व्यापार-बोध बढ़ रहा है, तब तक रामचेली रूपी श्री-प्रकृति का पुरुष कोई भी हो, उनकी बला से। उन्होंने पुत्तीश की तिरंगी तसवीर उनकी कुछ कविताओं के अंग्रेजी अनुवाद के साथ छपा दी है।

अकेला माइकेल ही चिल्ला रहा है, "काली सस्कृति वाली पीढ़ियो से सावधान रहो।"

मुंशी घिराऊलाल

दुबले-पतले शरीर पर बड़ी-सी खोपड़ी में खमदार भौंहों पर खुमारी से भरी हुई झुर्रीदार आंखें ठीक ऐसी मालूम होती हैं जैसे कि गोबर के पुतले पर टेढ़ी-मेढ़ी दो कौड़िया जड़ दी गई हों।

छितरी हुई मूछें—सन-सी सफेद—पोपले मुंह की रौनक बढ़ा रही हैं। बाअदब, बाकायदा—उर्दू और फारसी तो जैसे उनके खानदान की लौंडी थी। हर एक से 'अलेक-सलेम' की पाबन्दी—बाबूजी, भैयाजी, लालाजी, 'अक्खह! जैरामजी की। कहिए मिज़ाज तो शरीफ, बाल-बच्चे सब खैरियत से है न?' गरचे कि मुंशीजी शराफत के जीते-जागते पुतले हैं।

वकौल मुंशीजी, वह एक आला-खानदान के टिमटिमाते हुए चिराग हैं। बाबाजान महाराज सोनागढ के मुख्तार-आम थे, वालिद बुजुर्गवार की तमाम जिंदगी भी उस गद्दी पर ही तमाम हो गई। आपपर भी उस पुश्तैनी गद्दी को रौनक-अफरोज़ करने के लिए काफी ज़ोर डाला गया था, लेकिन उसके पहले ही आप अपनी रंगीन तबीयत की गुलामी मंजूर कर चुके थे, इसलिए मजबूरी थी; महाराज आपके खानदान की काफी कद्र करते थे। और बकौल मुन्शीजी, आपको तो वह अपने वली-अहद से भी ज्यादा प्यार करते थे। एक बार का ज़िक्र है कि महाराज आपको अपने पास बिठाए

हुए प्यार से बातें कर रहे थे, उसी वक्त राजकुमार साहब भी तशरीफ लाए, लेकिन महाराज ने उनकी तरफ तवज्जह भी नहीं दी। मुन्शीजी फरमाते हैं कि इस बात पर महाराज और महारानी में कुछ—योंही मामूली-सी—कहासुनी भी हो गई थी। आपकी शादी के मौके पर महाराज की तरफ से रहने के वास्ते एक आलीशान कोठी, आठ नौकर, चार बांदियां, दो दरबान, एक हाथी और न मालूम कितनी चीज़ें बख्शिश में मिली थीं।

अलावा इसके और भी बहुत-सी बातें हैं जो कि आप ही के शब्दों में, "फकत एक अफसाना है। जिन्हें सुनने से कोई फायदा नहीं। क्योंकि आजकल के नौजवान अंग्रेज़ीदां बाबू लोग उन्हें महज़ चण्डूखाने की गप समझकर हंसी उड़ाते हैं।"

मुन्शीजी अभी कमसिन हैं। यही कोई साठ-पैंसठ की उम्र होगी, जो कि शादी का सवाल उठने पर चालीस हो जाती है, और वैसे तो गदर में आप बाईस बरस के पट्ठे ही थे। उसी सिलसिले में आपकी तमाम शानोशौकत कम्बख्त बलवाइयों के कब्जे में चली गई। उस लूट का भी बड़ा दर्दनाक किस्सा है। पूछने पर ठण्डी सांस लेकर, कुरसी के पीछे की तरफ अपना सिर डालते हुए, छत की कड़ियां गिन-गिनकर, रुक-रुककर धीरे-धीरे फरमाते हैं, "क्या बताएं साहब, क्या हाल था। बस खिड़की से बाहर एक बार झांकिए—चारों तरफ, लाशें ही लाशें नज़र आती थीं—एक चिड़िया का बच्चा भी उड़ता हुआ नज़र नहीं आता था। ऐसा मालूम होता था जैसे भूतों के परिस्तान आ गए हों।" यहां पर मुन्शीजी एक क्षण के लिए अपनी कथा कहना बन्द कर हंसती हुई आंखों से सोना बाहर की ओर निकालकर श्रोता की ओर देखेंगे। इतने पर भी 'ज़ुल्म है गर दो सखुन की दाद।' मुन्शीजी का 'मूड' खराब हो जाता है। फिर साफ कह देंगे, "देखो न बाबू साहब, मेरी गुस्ताखी माफ कीजिएगा, मैं पहले ही अर्ज़ कर चुका था कि आप लोग मेरी बातों पर यकीन नहीं लाएंगे। और परमेसुर न करे, आपको इन दर्दनाक बातों

पर यकीन आए ही क्यों—यह तो जिसपर बीतती है वही जानता
देखिए, माफ कीजिएगा, बुरा मानने की कोई बात नहीं। जो मैंने
लोगों की शान में कहा, इसमें अगर ज़र्रा बराबर भी झूठ हो तो फि
का सर हाज़िर है ? हां बाबू साहब !"

परन्तु यदि उसी वक्त श्रोता ने समझदारी से काम लेकर चट से
दिया, "वाह, यह भूतों के परिस्तान की एक ही कही। भई खूब
मुन्शीजी तब मुस्कराकर झुककर सलाम करने और दो-चार मीठी
(हेः-हेः-हेः के साथ लपेटकर) शुकराने के तौर पर पेशेनज़र कर देते।

गाड़ी फिर आगे बढ़ती—

"हां जनाब, मैं क्या अर्ज़ कर रहा था ?···हां, ठीक, याद आय
जी, मैंने कहा कि क्या बतलाऊं, महलसरा में रोना-पीटना मचा हुआ
घर में सब लोग राम-राम का कुहराम मचाए हुए हैं। आप यकीन मानि
बाबूजी कि एक अकेला मैं ही हाथ में तलवार लिए हुए कमरे में चह
कदमी करता हुआ मल्हार गा रहा था।"

"ओफ-ओह ! बड़े गजब का दिल पाया है, आपने मुन्शीजी ! वा
मुसीबत के वक्त भी मल्हार !"

मुन्शीजी फिर कहना शुरू कर देते, "बस जनाब, कयामत क
दिन भी आ गया, जिसकी इन्तज़ारी थी। सदर फाटक पर चोटें पड़
लगीं। घर में सब लोग रोने-चिल्लाने लगे। इतने में बलवाई घर में घुस
आए। मैंने उनका मुकाबिला किया, लेकिन वहां वह पचास और कहां
अकेला। लूटा-खसोटा, मारा-पीटा।···सब तबाह कर दिया। मुझे उस
वक्त रुपये-पैसे, हीरे-जवाहरात किसीकी फिक्र न थी, महज़ अपनी
जान—जान से ज़्यादा प्यारी चीज़, दो सौ बरस की पुरानी हाथ से लिखी
हुई किताब को इन जाहिलों के हाथ से बचाने के लिए अपने तोशेखाने की
ओर दौड़ा हुआ गया।···तब से जनाब, यह हालत हो गई, वरना हम भी
आदमी थे शान के। आह !"

मुन्शीजी के साथ-साथ सुननेवाले के लिए यह भी आवश्यक है कि

दो-तीन लम्बी-लम्बी सर्द आहे खीचकर, एक मिनट के लिए गर्दन लटकाकर मौन हो रहे।

मशहूर कहानी लेखक बाबू गोविन्दविहारी खरे के मकान पर एक दिन दोस्त-अहबाब की दावत थी। 'भोग' जी, 'मुनि' जी, 'सागर' जी आदि बड़े-बड़े साहित्य-महारथी भी पधारे हुए थे। मुन्शीजी भी दावत मे शरीक होने के लिए बुलाए गए थे।

"अक्खह ! मुन्शीजी हैं ? आइए, आइए।" खरेजी ने तपाक् के साथ उठकर उनका स्वागत किया। 'मुनि' जी आदि भी रामजुहार करने लगे। मुन्शीजी उस समय प्रसन्न मन दिखाई पड रहे थे।

खरेजी ने सागरजी से मुन्शीजी का परिचय कराते हुए कहा, "देखिए साहब, आप ही के पास वह तीन सौ बरस की पुरानी किताब है जो कि आपके बाबाजान ने लिखी थी।"

और फिर मुन्शीजी ने कहा, "आप कलकत्ते से उसी किताब को खरीदने के लिए आए हुए हैं।"

"अच्छा, बडी खुशी हुई आपके नियाज हासिल कर।' मुन्शीजी ने तपाक् के साथ उठकर उनका हाथ अपने दोनो हाथों मे दबाकर सिर से लगा लिया।

सागरजी को पहले इसका कुछ भी इतिहास नही मालूम था, फिर भी उन्होने उपर्युक्त बातचीत के आधार पर अपना 'पार्ट' अच्छी तरह से समझ लिया। उन्होंने कहा, "यकीन मानिए, मुझे भी आपसे मिलकर बडी खुशी हुई। परसो खरे साहब का खत पहुचा, उसमें आपकी और उस किताब की काफी तारीफ लिखी हुई थी। मैंने वह चिट्ठी म्यूजियम के अफसरान को भी दिखलाई और उन्होंने *कहा कि फौरन जाकर किताब* खरीद लो—हजार-दो हजार जितने मे भी मिले।"

मुन्शीजी गद्‌गद हो रहे थे।

सागरजी ने फिर कहा, "अच्छा तो वह किताब आपके बाबाजान ने लिखी है ?"

लोग बड़ी मुश्किल से हंसी-रोके हुए थे। आखिर खरेजी ठठाकर हंस पड़े।

बड़ी नाराजी के साथ त्योरी चढ़ाकर मुशीजी ने कहा, "यह कहानी लिखना नहीं है, फारसी है फारसी! तुम क्या समझो मिया?"

इसपर वह कहकहा लगा कि आसमान हिलने लगा।

अगर उस वक्त खाना-पीना न होता तो मुशीजी अवश्य ही उठकर चले जाते।

दावतो और महफिलो मे शरीक होने का मुशीजी को मर्ज है। एक बार आप उनसे झूठे ही कह दीजिए, फिर मुशीजी की 'इन्सानियत और शराफत' इस बात को कतई गवारा नही कर सकती कि आपके निमत्रण को नामजूर कर आपके दिल को दुख पहुचाए।

चादनी रात थी। खरेजी आदि की इच्छा नौका-विहार करने की हुई, लेकिन साथ मे एक जिंदादिल आदमी की जरूरत थी। उस दिन मुशीजी को किसी भले आदमी ने ताड़ी के सहारे ताड़ की फुनगी पर बैठा दिया था। मुशीजी को किसी सूरत से नाव पर लादा गया। नाव खोल दी गई। यार लोग राग और रागिनी के शुभ विवाह के पुरोहित बन बैठे। मुशीजी को बहुत काफी उकसाया, परन्तु वह चुपचाप ही बैठे रहे। बहुत भड़काने पर फिर उन्होने दम पर दम ठेका लगाना शुरू किया, "भैया, मुनासिब तो यही है कि आप मुझे मेरे घर पहुचा दें।"

किसी महापण्डित से यह आशा की जा सकती है कि वह लगातार मत्र जपते-जपते भी एक बार गोमुखी से हाथ निकालकर दत्तचित्त हो जनेऊ से पीठ खुजलाने लगे, लेकिन मुन्शीजी बिना रुके ही नशे की पीठ को चाबुक से धुनते हुए, बार-बार बराबर यही कहते रहे, "भैया, मुनासिब तो यही है कि आप मुझे मेरे घर पहुचा दें।"

सारा मजा उस दिन किरकिरा हो गया। नाव फेरनी ही पड़ी। उस दिन लोगो ने मुन्शीजी को गालिया दीं, इतनी कि शायद मुन्शीजी के बुजुर्गों को महाराज के यहां से उतनी बख्शिश भी कभी न मिली होगी।

मुन्शीजी घर आते ही आते दो बार दरवाज़े से टकराकर गिरे,
ाँ जाकर ताला खुला। आपका दौलतखाना एक विशेषता रखता है-
समझ लीजिए कि इतिहास-प्रसिद्ध कलकत्ते की काली कोठरी से
ा' है, इससे अधिक नहीं। वहीं आपका दीवानखाना, ग़ुसलखा
ई, महलसरा सब कुछ है। बांस की एक चारपाई, जो किसी ज़माने
'महाबाम्हन' से शायद आठ आने की खरीदी थी। और उसपर चारप
नुरूप ही बिछावन। चीड़ के बक्स में उनकी गृहस्थी थी। मुन्शी
मे थे—

"साले गाली देते हैं। जैसे हम इनके क़र्ज़दार हैं। ले जाओ, उठा
। माल मुन्शी घिर्राऊलाल का, दिल बेरहमों का। कुछ परवा
–किसीका नहीं रक्खेंगे।"

ाव गृहस्थी लुटाकर मुन्शीजी गर्म हो रहे थे। एक मजमा इकट्ठा
मुन्शीजी मुहल्ले के नामी 'अनाथों' में से हैं न!

सी समय एक वृद्ध सज्जन उधर से निकले, मुन्शीजी की हालत दे
े, "साले का बाप भी इसी बीमारी मे मरा था।"